CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खजुराहो की नगर वधू

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

KHAJURAHO KI NAGAR VADHU

(A NOVEL)

by

SHALIGRAM MISHRA

Rs. 15.00

State Museum Library Lucknow

COPYRIGHT © ATMA RAM & SONS, DELHI-6.

4732

प्रकाशक

रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

शाखाएं

चौड़ा रास्ता : जयपुर
17-अशोक मार्ग : लखनऊ
विश्वविद्यालय परिसर : चण्डीगढ़

मूल्य : पन्द्रह रुपये मात्र

मुद्रक

श्यामकुमार गर्ग
राष्ट्रभाषा प्रिंटर्स
२७, शिवाश्रम,
क्वींस रोड, दिल्ली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रस्तुति

बात कई वर्ष पुरानी है। स्वतन्त्र भारत में खजुराहो के खण्डहरों का सोया हुआ भाग्य जगा। देशी और विदेशी पर्यटकों, कला-प्रेमियों, इतिहास के अन्वेषकों और पुरातत्त्वज्ञों का ध्यान कला के इन महनीय ध्वंसों की ओर गया। एक दिन हम लोग—मैं, प्रस्तुत उपन्यास के रचियता श्री मिश्रजी तथा कुछ अन्य मित्र खजुराहो देखने चल पड़े। देखा, और खूब देखा। पर तृप्ति न हुई।

जगत् और जीवन के रूप-व्यापार की प्रतिक्रिया सब पर समान नहीं होती। अन्तर्मन में कौहतूल और जिज्ञासा का ज्वार लिए मिश्रजी घर वापस आए और तत्कालीन इतिहास की गवेषणा में जुट गए। अध्ययन में रस मिला, अध्यवसाय में वृद्धि होती गई। तत्कालीन इतिहास की आधारभूत उपलब्ध सामग्री नाकाफ़ी मालूम होने लगी। ऐसी सामग्री भी मिली जिसकी प्रामाणिकता को स्थूल-स्पर्शी इतिहास के संकीर्ण और पर-पुष्ट पूर्व-ग्रह स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं। कई बार खजुराहो की यात्रा की गई, अवशेषों का अध्ययन किया गया। इस प्रकार कई वर्षों के अहर्निश परिश्रम सम्बद्ध काल-खण्ड का विस्मृत इतिवृत्त उभर कर सामने आया। स्थिति स्पष्ट हुई। और इतिहास-पुरुष ने जाग कर काव्य-पुरुष को भी जगा दिया। इतिहास के पट पर कारयित्री प्रतिभा ने कल्पना के रंग भरने शुरू कर दिए और परिणामस्वरूप एक उपन्यास-माला की सृष्टि हुई। इसी माला की एक कड़ी आपके हाथों में है।

'खजुराहो की नगरवधू' के प्रणयन का यही इतिहास है।

इस अभिनव कथाकृति के कथाकार, पं० शालिग्राम जी मिश्र, मेरे नित्य प्रति के साथी हैं। अधि-विद्य प्रसंगों में आए दिन जमने वाली बैठकों, परिचर्चाओं और गोष्ठियों में हमारा सौरस्यपूर्ण साथ है। विद्या और अध्ययन इनके व्यसन हैं। सोने में सुगन्ध, प्रभु ने इन्हें कारयित्री प्रतिभा का प्रसाद भी दिया है। अंग्रेजी साहित्य के व्यापक अध्ययन-अध्यापन से उपचित अधिविद्य संस्कारों के परिप्रेक्ष्य में इन्हें हिन्दी साहित्य पर भी पूर्ण अधिकार और अन्तर्दृष्टि प्राप्त हुई है। कवि रूप में वह पाठकों और आलोचकों के सम्मुख आ चुके हैं। अब यह इनकी पहली कथाकृति सामने आ रही है। इसके रचना-काल से ही मेरा इससे परिचय रहा है और विचार-विमर्ष में भाग लेने का भी मुझे अवसर मिलता रहा है। अब इसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
साहित्य-जगत् के सम्मुख प्रस्तुत करने का अवसर भी, सौभाग्य से, मुझे ही प्राप्त हुआ है। रचना और रचनाकार से निकट का सम्पर्क होने के कारण प्रस्तुतीकरण के इस कार्य में मेरी निःसंगता कसौटी पर है।

खजुराहो के भव्य भग्नावशेषों को देखकर सहज कौतूहल उत्पन्न होता है कि एक ही प्रदेश में इतने अधिक देवमन्दिरों का निर्माण कब, कैसे, किन परिस्थितियों में और किसके द्वारा हुआ ? मिश्रजी इसका पूरा समाधान कर सके हैं। यह प्रदेश जेजाकमुक्ति के चन्देल-वंशी क्षत्रियों के शासन का क्षेत्र रहा है। दसवीं शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी तक इस प्रदेश में चन्देलों का बड़ा वैभव और प्रभुत्व रहा है। हमारी कला और हमारे दर्शन की अवदात उपलब्धियां उनके राज्य में स्फीत होकर विराजमान थीं। इस काल में वहां लगभग ८० देवमन्दिरों का निर्माण हुआ। इन मन्दिरों में वैष्णव, शैव, शाक्त, सौर, तान्त्रिक, जैन, बौद्ध आदि सभी मतमतान्तरों के मन्दिर थे। शिल्प में कला के साथ-साथ तत्-तत् दार्शनिक मान्यताएं भी रूपायित की गई थीं। सम-सामयिक जीवन का विशद चित्रण इनमें हुआ। मन्दिरों का दैनिक रख-रखाव और कार्यक्रम धूमधाम से होता था। सबसे बड़ी बात यह थी कि वे चन्देल शासक धार्मिक दृष्टि से कितने सहिष्णु और उदार थे आज की भाषा में उनकी धर्मनिरपेक्षता सच्चे अर्थ में चरितार्थ हुई थी और भारत की सांस्कृतिक एकता तथा अखण्डता के वे प्रतीक थे। खेद है कि उनका प्रताप अधिक दिनों तक नहीं रह सका। सम्राट हर्षवर्धन की एक सुदृढ़ केन्द्रीय सार्वभौम सत्ता उनके साथ ही अस्तंगत हो गई थी। पश्चिमोत्तर से बर्बर विदेशियों के आक्रमण आरम्भ हो गए थे। विघटन की प्रक्रिया आरम्भ हो गई थी। कुछ राजनैतिक प्रतिभाएं भी महामन्त्रियों के रूप में सामने आईं। उन्होंने विघटन का प्रतिरोध भी किया। पर, अन्ततोगत्वा हुआ वही, जो होना था।

इस सम्पूर्ण इतिहास को चित्रित करने के लिए मिश्रजी ने तीन उपन्यासों की रचना की है। 'खजुराहो की नगरवधू' रचना-क्रम से उनमें दूसरा उपन्यास है। कुछ विशेष कारणों से प्रकाशन-क्रम में रचनाक्रम की संगति का निर्वाह नहीं हो पाया।

प्रस्तुत उपन्यास में महाराज धंगदेव के शासन काल का चित्रण किया गया है। यह युग ईसा की १२वीं और १३वीं शताब्दियों का सन्धिकाल है। महमूद गजनवी के पिता सुबुक्तगीन का आक्रमण हमारे देश पर इसी काल में हुआ था। इसी युग में चन्देलों का वैभव, विघटन की प्रक्रिया और उसका प्रतिरोध अपने चरम बिन्दु पर था। सबसे अधिक मन्दिरों का निर्माण भी इसी युग में हुआ।

ऐतिहासिक उपन्यास में रचनात्मक प्रतिभा इतिहास के स्थूल तथ्यों के अन्तराल को कल्पना-प्रसूत कथा-खण्डों से भरती है। इतिहास और कल्पना का यह योग तभी सार्थक होता है जब कल्पना इतिहास की सीमा में रहती है। मिश्रजी ने कल्पना के अधिकार का प्रयोग पूर्ण कुशलता से किया है। इस उप-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न्यास की रत्नमाला इसी प्रकार की कल्पना-प्रसूत ललित सृष्टि है। अपने रूपातिशय और बुद्धिमता पूर्ण कार्य-कलापों से वह सारे कथानक पर छाई-सी रहती है। वह वारांगना है। पर, निष्ठा में पूरी तरह कुलाङ्गना। कान्यकुब्ज के प्रतिहार नरेशों ने इसे गुप्तचर बनाकर खजुराहो की निवासिनी बना दिया था। पर चन्देलों के महामन्त्री प्रभास की कुशलता से रत्नमाला खजुराहो के लिए ही गुप्तचर का कार्य करने लगती है। राजनीति में रूप और चातुरी-सम्पन्न नारियों से इस प्रकार के कार्य बराबर लिए जाते रहे हैं। रत्नमाला ने महामात्य प्रभास के महान उद्देश्य की सिद्धि में पर्याप्त योगदान दिया है। रूपातिशय की यह ललित सृष्टि कल्पना-जन्य होते हुए भी इतनी सप्राण, जीवन्त और यथार्थ है कि कल्पना के घेरे से निकल कर इतिहास के क्षेत्र में इस दृढ़ता से आ बैठी है कि उसका व्यक्तित्व तत्कालीन इतिहास के रथचक्र की धुरी बन गया है। नगरवधू राष्ट्रनीति की सहायक संचालिका बन गई है। उपन्यास का नाम सार्थक हो गया है।

राजनैतिक वस्तुविधान की दृष्टि से इस रचना की एक और उल्लेखनीय उपलब्धि है महामात्य प्रभास का व्यक्तित्व। धंगदेव के इन महामात्य का दर्शन हमें एक अत्यन्त दूरदर्शी और कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में होता है। इनके चरित्र की महत्ता बरबस महामति चाणक्य का स्मरण करा देती है। विघटन की तत्कालीन प्रवृत्ति को इन्होंने पहचाना था। बाहरी आक्रमणों के दूरस्थ परिणाम इनकी दृष्टि में स्पष्ट थे। इन अमंगलकारी प्रवृत्तियों के प्रतिविधान में उन्होंने जीवन अपर्ण कर दिया। तत्कालीन प्रमुख शासकों और सामन्तों को एक अखण्ड राष्ट्रीयता के नाम पर एक सूत्र में बांधने का प्रयत्न उन्होंने किया। सीमाप्रान्त से लेकर देश के भीतरी भाग तक के राजाओं को मिलाकर वे एक संघ बनाना चाहते थे जिससे बाहरी आक्रमणों का सफल प्रतिरोध किया जा सके। कन्नौज, थानेश्वर, राजस्थान, अजमेर, अणहिलपट्टन (गुजरात) भटिण्डा आदि स्थानों के प्रमुख शासकों से सम्पर्क किया गया। महामात्य की यह योजना यदि सफल हो जाती तो भारत का आगे का इतिहास कुछ और ही होता। पर नियति का विधान अप्रत्याख्येय होता है। प्रमाद की इस अनर्थकारी परम्परा का फल भारत की पीढ़ियों को जाने कब तक भोगते रहना पड़ेगा!

संक्षेप मे इस कथाकृति की यही ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है। इतिहास के इस पर्व की पृष्ठभूमि में रचित मिश्रजी के अन्य उपन्यास भी इसी प्रकार अपने-अपने समय का युग-सापेक्ष चित्रण करते हैं।

शिल्प-विधान की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास सुनियोजित और सुगुम्फित है। इतिहास और कल्पना के समानुपातिक योग ने कथावस्तु का रमणीय विधान किया है। पात्र और चरित्र-चित्रण अत्यन्त जीवन्त और वास्तविक हैं। देशकाल की परिस्थितिकों का सम्यक् अनुसन्धान और उपयोग परिश्रम और कलात्मकता के साथ किया गया है। भाषा और शैली देश-काल और पात्रों के सर्वथा अनुकूल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है। एक सर्वथा सामयिक और नए विषय पर प्रामाणिक रचना प्रस्तुत करने के उपलक्ष्य में मैं बन्धुवर श्री मिश्रजी का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ और इस अनूठी रचना को साहित्य जगत् के समक्ष, महाकवि कालिदास की इस उक्ति का स्मरण करते हुए, प्रस्तुत करता हूं—

तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः ।
हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकाऽपि वा ।।

अर्थात् "मेरी इस रचना को सत् और असत् की वास्तविक अभिव्यक्ति के कर्त्ता साधुजन ही सुनने के योग्य हैं; सुवर्ण के खरे और खोटेपन का ठीक परिज्ञान अग्नि में ही होता है।"

—विश्वनाथ गौड़

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
बी० एस० एस० डी० कालेज,
कानपुर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज से लगभग एक सहस्र वर्ष पूर्व……

महोत्सवनगर से खजुराहो जाने वाले राज-मार्ग पर यात्रियों का एक छोटा-सा दल चला जा रहा था।

जेजाभुक्ति (वर्तमान बुंदेलखण्ड) का चन्देल राज्य अब एक साम्राज्य का रूप धारण कर चुका था। उसकी गणना इस समय उत्तरापथ के सर्वाधिक शक्ति-शाली राज्यों में की जाती थी। कान्य-कुब्ज का गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य, जो किसी समय आधे भारतवर्ष में फैला हुआ था, अब संकुचित होकर राजधानी के निकटवर्ती क्षेत्रों तक ही सीमित रह गया था, और वहां भी उसकी सत्ता केवल नाम मात्र की थी। उसके संकोच के साथ-साथ चन्देल राज्य का विस्तार हुआ था, और वह बढ़कर उत्तर में यमुना तक, पूर्व में काशी तक, दक्षिण में पयस्विनी रत्नगर्भा के उद्गम तक, और पश्चिम में वेत्रवती के तट तक फैल गया था। इस साम्राज्य में आठ सुदृढ़ दुर्ग थे। इनमें अजेय समझा जाने वाला कालंजर का दुर्ग भी सम्मिलित था जिसे वर्तमान शासक महाराज धंगदेव के पिता महाराज यशो-वर्मन ने राष्ट्रकूटों से छीनकर 'कालंजराधिपति' का विरुद धारण किया था। गोपादि का दुर्ग पहले प्रतिहारों के अधीन था। इस पर महाराजाधिराज धंगदेव के शासन-काल में उनके एक सामन्त द्वारा अधिकार कर लिया गया था। इस प्रकार चन्देल साम्राज्य उत्तरोत्तर अधिक शक्ति-शाली होता जा रहा था। उसे अब दक्षिण के राष्ट्रकूटों का भी भय नहीं रह गया था। त्रिपुरी के कलचुरियों का बल क्षीण कर मान्यखेट का वह शक्तिशाली साम्राज्य स्वयं भी अत्याचार, दुर्व्यवस्था और आन्तरिक कलह की अग्नि में झुलस गया था और चालुक्य तैलप के आक्रमण ने उसका अन्त कर दिया था। तैलप एक महत्वाकांक्षी सेना नायक था, और दक्षिण को पददलित करने के पश्चात् उत्तर की ओर बढ़ने के कई प्रयत्न कर चुका था। परन्तु मालव राज्य का अधिपति परमार-वंशी मुंज उसके मार्ग में एक अभेद्य प्राचीर बनकर खड़ा था। परिणामतः उत्तर के राज्य सुर-क्षित थे और चन्देल स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी शक्ति तथा सीमाओं का विस्तार कर रहे थे।

उनके सुविस्तृत तथा समृद्ध साम्राज्य की राजधानी खजुराहो में थी जिसे उस समय खर्जुरवाह कहा जाता था। खजुराहो एक सुन्दर-सम्पन्न नगर, और तत्कालीन उत्तर भारत में शक्ति का प्रमुख केन्द्र था। इसके अतिरिक्त वह कालंजर क्षेत्र तथा अमरकंटक के बीच में स्थित धर्मयात्रा का महत्वपूर्ण केन्द्र भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था। खजुराहो को देव-नगरी बनाने का स्वप्न साकार हो चुका था। अब वहां शैव, शाक्त, वैष्णव, सौर, जैन आदि सभी धर्मों तथा सम्प्रदायों के अनेक भव्य कलापूर्ण देवालय थे। अनेक धर्म-यात्री दूर-दूर से निर्माल्य लेकर वहाँ आते थे और संध्या समय जब सब मन्दिरों में आरती होती थी तो सम्पूर्ण नगर शंख, शृंगी, ढोल, मंजीर, करताल आदि के सम्मिलित रव से गूंज उठता था।

महोत्सवनगर (वर्तमान महोबा) चन्देल साम्राज्य का दूसरा बड़ा नगर था। इसका निर्माण और विकास अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित दूसरी राजधानी के रूप में ही हुआ था और परम्परा के अनुसार युवराज नियमित रूप से वहीं निवास करते थे। महोत्सवनगर में चन्देलों की कुलदेवी चन्द्रिका माता का मन्दिर था। उनके सारे संस्कार वहीं, माता के चरणों में होते थे।

महोत्सवनगर खजुराहो के साथ एक विस्तृत राजमार्ग द्वारा जुड़ा हुआ था। वैसे तो खजुराहो से कालंजर, अजयगढ़, कान्य-कुब्ज, प्रयाग, त्रिपुरी, उज्जयिनी आदि की ओर जाने वाले कई मार्ग थे, परन्तु साम्राज्य के प्रमुख नगर को राजधानी से जोड़ने वाले इस राजमार्ग का अपना महत्व था। लगभग पच्चीस कोस लम्बे इस मार्ग के दोनों ओर ऊंचे-ऊंचे छायादार वृक्ष लगाये गये थे। थोड़े-थोड़े अन्तर पर कुएं थे, दो-दो कोस पर पांथशालायें थीं जिनमें यात्रियों के सुख-सुविधा की पूरी व्यवस्था थी। महोत्सवनगर से खजुराहो जाते हुए मार्ग में रामनगर, मल्हारनगर तथा महाराजपुर की गढ़ियाँ इसी क्रम में पड़ती थीं। ये गढ़ियाँ सुरक्षा की दृष्टि से राज्य के विश्वस्ततम सामन्तों के अधीन थीं।

लगभग एक सहस्र वर्ष पूर्व इसी मार्ग पर यात्रियों का एक छोटा-सा दल महोत्सवनगर से खजुराहो की ओर चला जा रहा था।

ज्येष्ठ मास का उत्तरार्ध चल रहा था। ग्रीष्म ऋतु अपना प्रखर रूप धारण कर चुकी थी। मध्याह्न का समय था। सूर्य सिर पर आ चुका था, धरती तप रही थी। पक्षी पत्तियों में छिपकर बैठे थे, पशु घास चरना छोड़कर वृक्षों की छाया में जा खड़े हुए थे। सम्भवतः इसी कारण इस मार्ग पर कोई अन्य यात्री नहीं दिखाई पड़ रहा था। केवल यही एक छोटा-सा दल द्रुत गति से खजुराहो की ओर चला जा रहा था। ये लोग प्रातःकाल महोत्सवनगर से चले थे और संध्या होने से पूर्व खजुराहो पहुँच जाना चाहते थे, इसीलिए मध्याह्न में भी विश्राम की इच्छा किये बिना चले जा रहे थे।

दल के मध्य में एक रथ था जिसके दोनों ओर बहुमूल्य परदे लहरा रहे थे। उसमें जुते हुए अश्व अच्छी जाति के तथा पुष्ट थे। उनके दोनों पार्श्व भीगे थे परन्तु उनकी गति में तनिक भी अन्तर नहीं आया प्रतीत होता था। रथ को तीन ओर से घेरकर छः सशस्त्र अश्वारोही साथ चल रहे थे जिनकी संख्या तथा सज्जा बता रही थी कि यात्री किसी सम्पन्न तथा महत्वपूर्ण परिवार के हैं।

महाराजपुर की गढ़ी पीछे छूट चुकी थी। खजुराहो अब दस कोस भी नहीं रह गया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस समय यात्री दल एक घने वन के बीच से निकल रहा था। दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे वृक्षों के कारण मार्ग पर घनी छाया थी जो ग्रीष्म की धूप के पश्चात् बड़ी सुखकर प्रतीत हो रही थी। उसका आनन्द लेने के लिए रथ की गति धीमी कर दी गयी थी। दोनों ओर पड़े परदे उठा दिए गये थे, और संग चल रहे अश्वारोहियों ने अपने अश्वों की वल्गा ढीली कर दी थी।

वे इस प्रकार धीरे-धीरे चलते हुए छायादार मार्ग पर थोड़ी ही दूर गये होंगे कि दाहिनी ओर के घने वृक्षों की ओट से निकलकर कुछ अन्य सशस्त्र अश्वारोही उनका मार्ग रोककर खड़े हो गये और उनके नेता ने आदेश के कठोर स्वर में कहा, "रथ रोक दो !"

रथ के परदे शीघ्रतापूर्वक गिर गये और भीतर से एक रमणी-कंठ का भयातुर स्वर आया, "दस्यु ! दस्यु ! बचाओ !"

२

दस्यु दल में नेता के अतिरिक्त ग्यारह और व्यक्ति थे। उनमें से प्रत्येक अश्वारुढ़ था और प्रत्येक के हाथ में नग्न खड्ग चमक रहा था। सब हृष्ट-पुष्ट और भयानक आकृति वाले थे। मदिरा के प्रभाव से लाल उनकी आँखों से क्रूरता छलक रही थी। परन्तु उनका नेता स्पष्ट रूप से भिन्न वर्ग का व्यक्ति था। उसने उजले वस्त्र से अपना मुख ढक रखा था, केवल मस्तक और उसके नीचे चमकती हुई दो बड़ी आँखें खुली थीं। इन आँखों में दस्यु-वृत्ति-जनित क्रूरता नहीं थी, और मदिरा-पान की सूचक लाली भी नहीं थी।

उसने रथ को आगे बढ़ता देखकर फिर कठोर स्वर में कहा, "जीवित रहना चाहते हो तो रथ रोक दो।"

रथ रुक गया।

तब उसने रथ के साथ चल रहे रक्षकों को सम्बोधित करते हुए कहा, "तुम लोगों के साथ हमारी कोई शत्रुता नहीं है। हम तुम्हें किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाना चाहते हैं। परन्तु यदि तुम हमारे कार्य में बाधक बनोगे तो हमें भी विवश होकर कठोरता का व्यवहार करना पड़ेगा। अतएव तुम्हारे हित में यही होगा कि तुम लोग चुपचाप एक ओर खड़े रहो। यदि किसी का हाथ खड्ग की ओर बढ़ा तो काट दिया जायेगा।"

इस बीच उसके अश्वारोही किंकर्त्तव्यविमूढ़ बने रक्षकों को सब ओर से घेरकर खड़े हो गये थे। धीमे स्वर में उनको कुछ आदेश देने के पश्चात् वह रथ के निकट आकर अपने अश्व पर से उतर पड़ा और बोला, "रथ से बाहर निकल आओ, अब कोई उपाय नहीं है।"

रथ के भीतर से अविचलित रमणी-कंठ का उत्तर आया, "तुम्हें रत्न-

 Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आभूषण ही तो चाहिए ? यह लो ? मैं मँजूषा दे रही हूँ, इसे सँभालो। हमारे पास इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।''

उस व्यक्ति ने अट्टहास करते हुए कहा, ''तुम स्वयं तो हो। सीधे रथ से उतर आओ।''

''मैं ?'' भीतर से स्वर आया।

''हाँ, तुम। हमें इस समय रत्नों की नहीं, रत्नमाला की आवश्यकता है। विलम्ब मत करो। हमारे पास अधिक समय नहीं है।''

''और यदि मैं सीधे रथ से न उतरूँ तो ?'' भीतर से स्वर आया।

''तो मुझे बल प्रयोग करना पड़ेगा।'' यह कहकर उसने हाथ बढ़ाकर द्वार पर पड़ा हुआ परदा खींच लिया।

भीतर से तुरन्त तीखा स्वर आया, ''ठहरो, मैं उतर रही हूँ।''

दस्यु-दल का नेता मार्ग देने के लिए थोड़ा हटकर खड़ा हो गया, और कुछ ही क्षणों में एक अनिन्द्य सुन्दरी गर्वीली, गम्भीर गति से पैर उठाती हुई रथ से नीचे उतरी। उसकी आयु बीस वर्ष से अधिक थी परन्तु पच्चीस से अधिक नहीं हो सकती थी। उसका शरीर स्वस्थ किन्तु सूक्ष्म था, और वर्ण तपे हुए कंचन का। कटि अधिक क्षीण होने के कारण उसके नितम्बों की मांसलता उतनी ही अधिक उभरी हुई प्रतीत हो रही थी, और ऊपर वक्ष-प्रदेश की गोलाकार पीनता निखर आयी थी। कुचबंध की पतली, महीन पट्टी के ऊपर तथा नीचे दबे हुए वक्ष-मण्डल उन्नत, सुदृढ़ तथा सुडौल थे और उनके बीच में रत्नजटित अर्धहार झूल रहा था। उसका मुख तीखा तथा अंडाकार था, अधर पतले तथा मुखराग-रंजित थे, और नासिका मानों उन्हें निहारने के ही लिए उन पर झुक आई थी। उसके नयन विस्तृत तथा चंचल थे, और सुदीर्घ, काली वेणी में उजले कुंद-कुसुमों की लड़ी गुंथीं हुई थी। कानों में चक्राकार कुण्डल लटक रहे थे, कमल-नाल सी बाँहों में भुजबंध शोभित थे और कटि प्रदेश में कौशेय साड़ी को समेटे हुए कटिसूत्र झूल रहा था।

वह मंथर गति से उतरकर रथ से नीचे आयी और अपने उत्पीड़क पर एक संक्षिप्त, रोषपूर्ण दृष्टि डालकर सहज अधिकार के स्वर में बोली, ''यह सब क्या है ? यह नाटक क्यों खेला जा रहा है !''

उसके निकट खड़े हुए दस्यु-दल के नेता ने उत्तर दिया, ''यह नाटक नहीं है, रत्नमाला। तुम भली प्रकार जानती हो कि मैं प्राणों का व्यवसायी हूँ, नट नहीं हूँ। अब समस्या बहुत गम्भीर हो गयी है। प्रश्न जीवन-मरण का है, मेरे लिए और तुम्हारे लिए भी।''

''मेरे लिए तो नहीं परन्तु तुम्हारे लिए और तुम्हारे इन साथियों के लिए अवश्य होगा। तुम्हें यह खेल बहुत मँहगा पड़ेगा।''

''तुम तो भविष्य की बातें करने लगीं, रत्नमाला,'' उस व्यक्ति ने रत्नमाला की असहाय अवस्था पर व्यंग-सा करते हुए कहा। ''भविष्य की चिन्ता हम क्यों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करें? वह स्वयं कर लेगा। बुद्धिमान व्यक्ति केवल वर्तमान को देखता है, और वर्तमान स्थिति यह है कि तुम्हें अभी हमारे साथ चलना है।"

"मुझे श्रीमान के साथ अभी कहाँ चलना है?" रत्नमाला ने अत्यन्त संयत स्वर में पूछा। उसकी मुद्रा में भी भय का कोई चिह्न नहीं था।

"जहाँ मैं ले चलूँ," दस्यु-दल-के-नेता ने कहा।

"फिर भी? क्या उस स्थान का नाम नहीं बताया जा सकता?"

"बताया जा सकता है, परन्तु अनावश्यक है।"

"क्यों?" रत्नमाला ने पूछा।

"तुम जानती हो, इसलिए।"

"और यदि मैं वहाँ न जाना चाहूँ तो?"

"तो भी चलना होगा। तुम्हारे सामने अन्य कोई विकल्प नहीं है। स्वेच्छा से चली चलोगी तो अधिक कष्ट नहीं होगा, अन्यथा बन्दी बनकर चलना पड़ेगा। तुम्हें केवल इतना ही निर्णय करना है कि तुम किस प्रकार चलोगी।"

रत्नमाला ने कहा, "यह निर्णय मुझे करना है? देखती हूँ तुम्हारी योजना में मेरी इच्छाओं और रुचियों का बड़ा ध्यान रखा गया है। इसके लिए आभारी हूँ, और मेरा निर्णय यह है कि यदि मुझे विश्वास हो जाए कि इस समय मेरा तुम्हारे साथ चलना आवश्यक और अनिवार्य है तो मैं स्वेच्छा से चलना अधिक अच्छा समझूँगी।"

"मुझे तुम्हारे इस निर्णय से बड़ी प्रसन्नता है। इससे हमारा कार्य अधिक सरल हो जायेगा और तुम्हें भी असुविधा न होगी। तुम्हारा चलना कितना आवश्यक है यह तुम स्वयं भली प्रकार समझती हो। हमें उसके लिए क्या करना पड़ रहा है यह उसकी अनिवार्यता का प्रमाण है।"

रत्नमाला ने कुछ सोचते हुए कहा, "तो मुझे चलना ही होगा?"

"हाँ, अन्य कोई उपाय नहीं है। बोलो, मेरे साथ बैठोगी अथवा अपने किसी रक्षक का अश्व लेकर उस पर अलग चलना चाहोगी? मुझे आदेश है कि यथा-सम्भव तुम्हारी रुचि के अनुसार ही कार्य करूँ। परन्तु विलम्ब मत करो, हमारे पास अधिक समय नहीं है।"

क्षण-भर विचार के पश्चात रत्नमाला ने उत्तर दिया, "यदि चलना ही है तो मैं तुम्हारे साथ नहीं बैठूँगी, अलग अपने अश्व पर चलूँगी।"

"मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अश्व छाँट लो। परन्तु शीघ्रता करो।"

रत्नमाला ने अपने एक रक्षक की ओर देखते हुए कहा, "नाहर, अपना अश्व इधर ले आओ।"

नाहर नामधारी रक्षक अपने अश्व से उतर कर उसकी वल्गा पकड़े हुए रत्नमाला की ओर बढ़ा। दस्यु-दल का नायक अपने साथियों की ओर घूमकर उन्हें कुछ निर्देश देने लगा।

नाहर ने निकट पहुँच कर वल्गा रत्नमाला की ओर बढ़ायी। परन्तु रत्न-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माला ने वल्गा हाथ में नहीं ली। उसने एक दृष्टि दास्यु-नायक की ओर डाली, जो अब भी अपने साथियों को निर्देश देने में व्यस्त था, फिर विद्युतगति से रक्षक की कटि से लटकती हुई तलवार खींच ली और उसे तान कर कहा, "अब जिसमें साहस हो वह मेरे निकट आये। मूर्खो, रत्नमाला का अपहरण इतना सरल नहीं है, वह मरना-मारना भी जानती है। तुम उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे जीवित कहीं नहीं ले जा सकते।"

फिर अपने रक्षकों की ओर घूमकर वह बोली, "वीरो, तुम खजुराहो की मान-मर्यादा के रक्षक हो, उसके शौर्य के प्रतिनिधि हो। क्या आज इन दस्युओं के सम्मुख वह कलंकित होगा? ये यमदूत नहीं हैं, तुम्हारे ही समान हाड़-मांस के पुतले हैं। आओ, मैं स्वयं तुम्हारा नेतृत्व करूँगी। आओ, जिसे माता के दूध की लाज हो वह मेरे पीछे आ जाए। पहले में मरूँगी, तब तुम पर आँच आएगी।"

रक्षकों ने तुरन्त अपनी तलवारें खींच लीं। इस बीच दस्युगण भी विस्मय के प्रथम आघात से संभल चुके थे और आक्रमण के लिए उद्यत थे।

इसी समय महाराजपुर की ओर से आती हुई अश्वचाप सुनाई पड़ी। रत्नमाला की आँखें प्रसन्नता से चमक उठीं।

दस्यु-दल के नायक ने अपने साथियों को ललकारा, "क्या देखते हो, वीरो, ये केवल छः हैं, हम इनसे दुगने हैं। टूट पड़ो और इन्हें काटकर फेंक दो। पुरस्कार तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।"

रत्नमाला ने अपने रक्षकों से कहा, "संख्या से भयभीत मत होना। तुममें से प्रत्येक शौर्य में दस-दस के बराबर है। सहायता भी दूर नहीं है। सुनो, अश्वचाप निकट होती आ रही है।"

संघर्ष आरम्भ हो गया, तलवारों से तलवारें बजने लगीं। परन्तु दस्युदल का नायक वह व्यक्ति स्वयं इसमें भाग नहीं ले रहा था। वह अब भी रत्नमाला के निकट सतर्क भाव से खड़ा अपने साथियों को निर्देश दे रहा था। उधर रत्नमाला भी सतर्क थी। नंगी तलवार अब भी उसके हाथ में थी।

अश्वचाप वास्तव में निकट होती आ रही थी, और कुछ ही क्षणों में अश्व भी दृष्टि की सीमा में आ गये। तीन अश्वारोही द्रुतगति से उन्हीं की ओर चले आ रहे थे। वे मार्ग के मोड़ पर आगये थे जो घटनास्थल से अधिक दूर नहीं था। रत्नमाला ने उन्हें देखते ही उच्च स्वर में सहायता के लिए पुकार लगायी।

तीनों अश्वारोही कुछ ही क्षणों में घटनास्थल पर आ पहुँचे। उनकी वेश-भूषा से स्पष्ट था कि आगे वाला युवक स्वामी है तथा उसके पीछे आ रहे दोनों व्यक्ति उसके अनुचर हैं। रत्नमाला की पुकार सुनकर तथा युद्ध होते हुए देखकर युवक को स्थिति समझने में अधिक समय नहीं लगा। उसने तुरन्त अपनी तलवार खींच ली तथा मैदान में कूद पड़ा। उसके दोनों अनुचरों ने भी उसका अनुकरण किया।

विपक्ष प्रबल पड़ते देखकर दस्यु-दल का नायक भी अश्वारुढ़ होकर अपने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साथियों से जा मिला, और युद्ध ने अधिक भयंकर रूप धारण कर लिया। रत्नमाला अब भी अपने स्थान पर खड़ी यह दृश्य देख रही थी। उसके रक्षकों में से एक घायल होकर उसके बहुत निकट अपने अश्व से नीचे आ गिरा। उधर कई दस्यु भी घायल हो चुके थे।

रत्नमाला की दृष्टि बार-बार इधर-उधर घूम कर यह सब देख लेती थी और फिर जाकर युवक पर केन्द्रित हो जाती थी। वह बड़ी वीरता से लड़ रहा था। वह विद्युतगति से जहाँ आवश्यकता होती थी वहाँ पहुँच जाता था और उसका प्रहार भीषण तथा अचूक होता था। रत्नमाला मंत्रमुग्ध-सी उसके शस्त्र-कौशल और अदम्य साहस को देख रही थी। दो विपक्षियों को वह अकेला धराशायी कर चुका था। फिर तीन दस्युओं ने उसे घेर कर एक साथ प्रहार करना आरम्भ किया। उसका एक अनुचर पहले ही घायल होकर गिर चुका था परन्तु दूसरा अभी लड़ रहा था। अपने स्वामी को इस प्रकार घिरा हुआ देखकर वह उसकी सहायता के लिए आगे बढ़ा। परन्तु तभी दस्यु-दल के नायक ने पार्श्व से उस पर प्रहार किया और वह भी धरती पर आ गिरा। यह दृश्य देखकर रत्नमाला के हृदय की गति ही मानो रुकने लगी। परन्तु युवक अब भी हतप्रभ नहीं हुआ था। उसका शरीर रक्त से लथपथ था, परन्तु उसके साहस अथवा कौशल में कोई अन्तर नहीं आया था। वह अब भी बड़े लाघव के साथ अपने प्रतिद्वंद्वियों के प्रहार बचाने की चेष्टा करता हुआ स्वयं उनपर वार कर रहा था। कुछ क्षण पश्चात् रत्नमाला ने उसके एक प्रतिद्वंद्वी को धरती पर गिरते हुए देखा, और संतोष की साँस ली। फिर एक और गिरा। परन्तु इस समय तक युवक भी शिथिल हो चुका था। उसके शरीर में स्थान-स्थान से रक्त बह रहा था, उसके पाँव डगमगाने लगे थे।

रत्नमाला ने एक विहंगम दृष्टि चारों ओर डाली। युद्ध प्रायः समाप्त हो चुका था। सात दस्यु घायल अथवा मृत भूमि पर पड़े थे। रत्नमाला के दो रक्षक तथा युवक के दोनों अनुचर भी धराशायी हो चुके थे। परन्तु विजय स्पष्टतः रत्नमाला के पक्ष की ही हुई थी। शेष दस्यु पीछे हटते-हटते वन के भीतर पहुँच गये थे। उनका नायक भी दिखायी नहीं पड़ रहा था। युद्ध-भूमि में केवल एक वही दस्यु रह गया था जो इस समय युवक के साथ उलझा था।

सहसा रत्नमाला ने युवक को लड़खड़ा कर गिरते हुए देखा। उसका हृदय बैठ गया। परन्तु उसके पैरों में न जाने कहाँ से विद्युत् की गति आकर भर गयी। पलक झपकाते ही वह उस स्थान पर जा पहुँची, बिना कुछ सोचे ही उसका हाथ उठा, और उसकी तलवार उस आततायी पर आ गिरी जो धरती पर पड़े हुए युवक पर अंतिम प्रहार करने के लिए अपना खड्ग उठा चुका था।

उस दस्यु के गिरते ही संघर्ष समाप्त हो गया। शीघ्र ही शेष को वन के भीतर खदेड़कर रत्नमाला के रक्षक भी लौट आये। युवक अचेत हो चुका था, और अपने ही रक्त में स्नान करता हुआ पड़ा था। उसके अनुचरों में से एक दम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तोड़ चुका था, और दूसरा अचेत पड़ा था।

रत्नमाला ने अविलम्ब अपने रक्षकों की सहायता से युवक को रथ में चढ़ाया। फिर एक रक्षक को महाराजपुर की गढ़ी में समाचार देने और घायलों को वहाँ पहुँचाने की व्यवस्था करने के लिए पीछे छोड़कर वह स्वयं भी रथ में चढ़ी। रत्नमाला के रथ में चढ़ते ही कोने में रखी हुई एक गठरी हिली और एक स्त्री का शिर उसमें से निकल कर बाहर आया।

उसे देखकर रत्नमाला इस विषम परिस्थिति में भी अपनी हँसी नहीं रोक सकी। वह हँसती हुए बोली, "अरी मल्लिका, तू यहाँ छिपी थी?"

"हाँ, देवी," मल्लिका ने उत्तर दिया, "मुझे भय लग रहा था। ये दस्यु बड़े दुष्ट होते हैं, स्त्रियों को उठा ले जाते हैं। क्या वे चले गये?"

रत्नमाला ने कहा, "हाँ री, वे तुझे ही तो खोज रहे थे। तू नहीं मिली तो निराश होकर लौट गये।"

फिर उसने तुरन्त गम्भीर होकर रथ के चालक को आदेश दिया, "अब चल दो। हमें यथासम्भव शीघ्र खजुराहो पहुँचना है।"

रथ चल दिया। अब उसके साथ केवल तीन रक्षक चल रहे थे।

३

जब युवक की आँखें खुलीं तब सूर्य पूर्व के क्षितिज से उठकर बहुत ऊपर चढ़ आया था। परन्तु उसे इसका कुछ भान नहीं था। उसका मस्तिष्क अभी काल तथा स्थान की संकुचित सीमाओं से सर्वथा मुक्त था। उसने धीरे-धीरे पलकें खोलकर एक बार चारों ओर देखने का प्रयास किया। परन्तु यह दृष्टि-व्यायाम उसे सुखकर नहीं प्रतीत हुआ। रक्त-स्राव अधिक हो जाने के कारण वह बहुत अशक्त हो गया था और चारों ओर फैला हुआ प्रकाश उसकी आँखों में चुभ-सा रहा था। उसने फिर पलकें मूँद लीं।

परन्तु चेतन मानव सत्य तथा प्रकाश की अधिक समय तक उपेक्षा नहीं कर सकता। कुछ क्षण पश्चात् उसने फिर आँखें खोलीं और एक उड़ती हुई दृष्टि चारों ओर डाली। उसने देखा उसके पर्यंक के वाम पार्श्व में खड़ी एक स्त्री विजन डुला रही थी। सहसा उसे अपने मस्तक पर एक अत्यंत सुखकर शीतलता का अनुभव हुआ। उसने दृष्टि फिराकर देखा। पर्यंक के दक्षिण पार्श्व में खड़ी एक अनिन्द्य सुन्दरी अपनी कोमल, सुशीतल हथेली से उसके मस्तक का स्पर्श कर रही थी। युवक को अपनी ओर देखते पाकर वह मधुर स्वर में बोली, "मैं, रत्न-माला हूँ।"

युवक ने अपनी आँखें फिर बन्द करलीं।

परन्तु शीघ्र ही उसकी आँखें स्वतः एक बार फिर खुल गयीं। उसके मस्तक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर रखा हुआ हाथ हट चुका था। उसे लगा उसका शिर जल रहा है और ज्वाला सारे शरीर में फैलती जा रही है।।

रत्नमाला उसके पास से हटकर द्वार की ओर चली जा रही थी, और दूसरी ओर खड़ी जो स्त्री विजन डुला रही थी वह भी अव अपने स्थान पर नहीं थी। परन्तु उसका मस्तिष्क अभी वहुत धीरे-धीरे कार्य कर रहा था और इससे पूर्व कि वह इस रहस्य के सम्वन्ध में अधिक विचार कर सके, रत्नमाला फिर कक्ष में आ गयी। उसके हाथ में एक छोटा-सा रजत-पात्र था।

पर्यंक के निकट आकर वह थोड़ा झुकी और अपना बाँया हाथ निस्संकोच युवक की ग्रीवा के नीचे डालकर उसका शिर थोड़ा ऊपर उठाते हुए मधुर स्वर में बोली, "औषधि पी लीजिये।"

युवक ने कुछ कहने का प्रयास किया, परन्तु इसमें उसे सफलता नहीं मिली। औषधि का पात्र तुरन्त उसके अधरों से लगाकर उसकी वाणी अवरुद्ध कर दी गयी, और इसके साथ ही दूसरी ओर से मधुर प्रवचन आरम्भ हो गया—"कभी-कभी मनुष्य को मौन का अभ्यास भी करना चाहिए। आपके लिए इस समय ऐसा करना नितान्त आवश्यक है। अधिक रक्त-स्राव हो जाने के कारण आप बहुत दुर्बल हो गये हैं। परन्तु चिन्ता की कोई बात नहीं है। वैद्यराज स्वयं ऐसा कह गये हैं। और वे यह भी कह गये हैं कि आपके लिए अभी बोलना वर्जित है। अतएव मैं आपको बोलने नहीं दूंगी। परन्तु······परन्तु पहले यह औषधि तो पी लीजिये।"

युवक ने चुपचाप औषधि पी ली।

रत्नमाला ने धीरे से उसका सिर तकिये पर रखकर अपना हाथ उसके नीचे से निकाल लिया और फिर कहना आरम्भ किया, "हाँ, तो में वैद्यराज की बात कर रही थी। वे मुझसे कह गये हैं कि अब चिन्ता की कोई बात नहीं है। वैद्यराज वड़े गुणी पुरुष हैं, और जितने गुणी हैं उतने ही सज्जन भी हैं। सम्पूर्ण रात्रि उन्होंने यहीं आपके पास बैठे-बैठे व्यतीत की। बार-बार नाड़ी देखते थे और उपचार करते थे। प्रातःकाल के पश्चात् वे यहाँ से गये हैं और जाते-जाते मुझसे कह गये हैं कि अब चिन्ता की कोई बात नहीं है। परन्तु आपके लिए पूर्ण विश्राम नितान्त आवश्यक है। उनके निर्देशानुसार आपके लिए उठना-बैठना, हिलना-डुलना और बातचीत करना पूर्णतया निषिद्ध है। इसे भली प्रकार सुन लीजिए। आप बातचीत नहीं कर सकते। ऐसा वैद्यराज कह गये है। हाँ, कोई दूसरा बोल रहा हो तो आप सुन सकते हैं। उदाहरण के लिए, इस समय मैं बोल रहीं हूँ तो आप सुनते रहिये। इस पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। परन्तु वह भी थोड़े ही काल तक, अधिक नहीं। वैद्य राज के आदेशानुसार मैंने अभी आपको निद्रा की औषधि पिलायी है। इसके प्रभाव से शीघ्र ही आपको नींद आ जाएगी, आप सो जाएँगे और संध्या तक सोते रहेंगे। संध्या को रात्रि के लिये फिर यही औषधि लेनी होगी। परन्तु इस समय निद्रा आने से पूर्व थोड़ा-सा दूध पी लीजिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह भी मेरा अनुरोध मात्र नहीं, वैद्यराज का आदेश है।"

इस बीच मल्लिका एक पात्र में दूध लेकर आ गयी थी। रत्नमाला ने पात्र उसके हाथ से लेते हुए कहा, "यह मेरी प्रिय दासी मल्लिका है। कल वे दस्यु इसी को खोज रहे थे। परन्तु यह बड़ी चतुर है। रथ से उतरी ही नहीं। ऐसी छिपकर बैठी थी कि कोई खोज ही नहीं सकता था।"

युवक ने किंचित् मुस्कराकर मल्लिका की ओर देखा। वह लजा गयी। तभी रत्नमाला ने फिर बड़ी सावधानी से युवक का सिर थोड़ा ऊपर उठाया और दूध का पात्र उसके अधरों से लगा दिया।

दूध पीकर फिर विश्राम की मुद्रा में लेटते हुए युवक ने कहना आरम्भ किया, "मैं········"

परन्तु रत्नमाला ने उसे इस कर्त्ता-वाचक सर्वनाम से आगे नहीं बढ़ने दिया। टोकते हुए बोली, "आप कृपया कष्ट न करें। मुझे सब ज्ञात है। आप रामनगर के वीर सामन्त विशालदेव जी के कनिष्ठ पुत्र हैं। हैं न? और आपका नाम कुँवर सोमेश्वरदेव है। मुझे सब ज्ञात है।"

सोमेश्वर के अधर फिर हिले, परन्तु रत्नमाला ने अपनी हथेली से उन्हें मूँदते हुए कहा, "मैं अभी आपको बोलने नहीं दूँगी। यह भली प्रकार समझ लीजिये। वास्तव में आपका बोलना आवश्यक भी नहीं है, क्योंकि मुझे आपके सम्बन्ध में सब कुछ ज्ञात है। मुझे सारी बातें वैद्यराज ने बतायी हैं। वे आपके पिताजी के मित्र हैं। कह रहे थे कि आपके जन्म के समय वे रामनगर में ही थे। आपकी बड़ी प्रशंसा कर रहे थे।"

सोमेश्वर ने रत्नमाला का हाथ अपने मुख पर से हटाते हुए एक बार फिर कहना आरम्भ किया, "परन्तु मैं········"

रत्नमाला ने अपना हाथ फिर उसके मुख पर रखते हुए कहा, "आप इस समय कहाँ हैं, यही न? मुझे यह पहले ही बता देना चाहिए था। सोचा था कि बता दूँगी, परन्तु न जाने कैसे भूल गयी। अब बता देती हूँ। आप इस समय खजुराहो में मेरे निवास-स्थान पर हैं, और अभी यहीं रहेंगे। और बस, अब आप सो जाइये।" यह कहते हुए रत्नमाला ने अपने दोनों हाथ उसकी आँखों पर रख दिये।

सोमेश्वर का मस्तिष्क अभी पूर्ण रूप से सजग नहीं हो पाया था। इसके अतिरिक्त औषधि ने भी अपना प्रभाव दिखाना आरम्भ कर दिया था। वह एक आज्ञाकारी बालक की भाँति शीघ्र ही सो गया।

रत्नमाला कुछ समय तक वहीं खड़ी-खड़ी उसे निहारती रही। स्वस्थ, छरहरा शरीर, केहरि-कटि, सुदीर्घ भुजद्वय, विस्तृत कन्धे और उनके अनुपात में सुविस्तृत वक्ष भाग, भरे हुए अधर जो इस समय कुम्हलाये-से लग रहे थे, अधरों के ऊपर घनी काली श्मश्रु-रेखा, प्रशस्त ललाट, सिर पर घने, काले कुंचित केश, शुद्ध ताम्रवर्ण जिस पर इस समय पीतिमा का आवरण पड़ा था—रत्नमाला ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने जीवन में अनेक पुरुषों को देखा था परन्तु पौरुष का ऐसा अनुपम सौंदर्य वह पहली बार देख रही थी।

फिर वह मल्लिका को विजन डुलाते रहने का आदेश देकर धीरे-धीरे वहाँ से चली गयी।

४

चार दिन तक सोमेश्वर इसी स्थिति में रहा। वैद्यराज प्रति दिन प्रातःकाल आते थे, उसकी नाड़ी देखते थे और अपने हाथ से उसके शरीर पर लेप लगाते थे। यह सब करने के पश्चात् वे कुछ समय तक उसके पास बैठते भी थे और अपने व्यावसायिक जीवन के अनेक अनुभव सुनाते थे। उनके पास संस्मरणों का अक्षय भंडार था जो प्रायः बड़े रोचक होते थे। फिर वे उसे पूर्ण विश्राम का आदेश देकर चले जाते थे, और तब रत्नमाला स्वयं तो न जाने कहाँ-कहाँ की बातें किया करती थी परन्तु उसे नहीं बोलने देती थी, बार-बार निद्रा की औषधि पिलाकर सुला दिया करती थी।

पाँचवें दिन प्रातःकाल जब सोमेश्वर की आँख खुली तो उसने रत्नमाला को नियमानुसार अपने पर्यंक के निकट पीठिका पर बैठी हुई पाया। परन्तु आज वह कुछ बदली हुई लग रही थी। सोमेश्वर को आँखे खोलते देखकर वह मुस्करा दी।

स्वभाव की हँसमुख रत्नमाला आज वास्तव में अपेक्षाकृत अधिक प्रसन्न थी। सम्भवतः इसीलिए आज सोमेश्वर को वह नित्य की अपेक्षा अधिक सुंदर भी लग रही थी। वह प्रशंसा भरी दृष्टि से उसे देखने लगा।

अपनी मुस्कान की इस प्रतिक्रिया से और प्रसन्न होकर रत्नमाला खिल उठी औरचाँदनी-सा शुभ्र हास बिखेरती हुई स्नेह-सिक्त स्वर में बोली, "एक सुसंवाद सुनाऊँ? सुनेंगे?"

सोमेश्वर की प्रश्न-सूचक दृष्टि उसके मुख पर अटक गयी।

रत्नमाला ने फिर कहा, "बोलिये न, सुनेंगे?"

सोमेश्वर फिर भी कुछ नहीं बोला।

"यही तो सुसंवाद है," रत्नमाला ने हँसते हुए कहा। "अब आप बात कर सकते हैं। वैद्यराज की निषेधाज्ञा समाप्त होगयी है। उठना-बैठना और चलना-फिरना अब भी वर्जित है, परन्तु वार्तालाप पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।"

"क्या अब मैं आपसे बातें कर सकता हूँ?" सोमेश्वर ने अविश्वास के स्वर में पूछा।

"हाँ-हाँ, अवश्य। मुझसे ही नहीं, जिससे चाहें बतें कर सकते हैं, और जितनी चाहे उतनी कर सकते हैं। वैद्यराज भी अभी आते होंगे।"

सोमेश्वर ने कहा, "परन्तु मैं सबसे पहले आप से ही जी भर कर बातें करना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहता हूँ।"

"यह दासी का सौभाग्य है। आरम्भ कीजिये। परन्तु एक प्रार्थना है। यदि आप मुझे 'आप' न कहकर 'तुम' कहा करें तो बड़ी कृपा होगी।"

"क्यों?"

"मुझे अच्छा नहीं लगता है," रत्नमाला ने कहा।

"यदि 'तुम' कहूँ तो अच्छा लगेगा?"

"हाँ।"

"तो मैं ऐसा ही करूँगा। मुझे वही करना चाहिए जो तुम्हें अच्छा लगे। परन्तु एक बात पूछूँ?"

"पूछिये।"

"तुम मुझे 'आप' कह कर क्यों सम्बोधित करती हो?"

रत्नमाला ने बड़े सरल भाव से उत्तर दिया, "मुझे ऐसा ही अच्छा लगता है। क्या आपको कोई आपत्ति है?"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं, मुझे कोई आपत्ति नहीं है। तुम वही करो जो तुम्हें अच्छा लगे। वास्तव में मैं तुम्हारा इतना कृतज्ञ हूँ कि तुम्हारी किसी बात को अस्वीकार नहीं कर सकता।"

"आप मेरे कृतज्ञ हैं? क्यों? ऐसा मैंने क्या किया है?"

"तुमने मेरी प्राण-रक्षा की है। अन्यथा मैं आज तुमसे इस प्रकार बातें करने के लिए जीवित न होता।"

रत्नमाला ने मुस्करा कर कहा, "मैंने आपकी प्राण-रक्षा की या आपने मेरी? यदि आप मेरी रक्षा न करते तो क्या मैं आपकी सेवा करने के लिए जीवित होती?"

"मैंने तो केवल अपने कर्तव्य का पालन किया। क्या एक संकटग्रस्त अबला की सहायता करना मेरा धर्म नहीं था? क्या उसकी पुकार को अनसुनी करके मैं क्षात्र-धर्म का अपमान करता?"

"और यदि मैं अपने सहायक को, जिसने मेरे लिए इतना रक्त बहाया था उस वीर को, असहाय वहीं छोड़कर चली आती, तो क्या यह आपके क्षात्र-धर्म से भी बड़े मानव-धर्म का अपमान न होता? नहीं कुंवर जी, यदि कृतज्ञता का भार किसी को वहन ही करना है तो उसे मेरे लिए छोड़ दीजिए।"

सोमेश्वर ने मुस्कराकर कहा, "ऐसा ही करूँगा। तुम कह रही हो तो ऐसा ही करूँगा। मैंने पहले ही कहा था कि मैं तुम्हारी कोई बात अस्वीकार नहीं कर सकता। अच्छा, अब यह बताओ कि तुम उस समय कहाँ से आ रही थीं, और अकेली क्यों थीं?"

"मैं अकेली कहाँ थी? छः रक्षक मुझे घेर कर चल रहे थे, ईश्वर ऊपर से देख रहा था, और पुकार सुनकर दौड़ आने के लिए आप निकट थे। फिर भी मैं अकेली थी?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर को हँसी आ गयी। उसने कहा, "अच्छा, आ कहाँ से रही थीं ?"

"मैं प्रत्येक मास एक बार चन्द्रिका माता के दर्शन करने महोत्सवनगर जाती हूँ। वहीं से लौट रही थी। और आप ?"

"मैं कृषि-वर्षारम्भ उत्सव में भाग लेने के लिए रामनगर से खजुराहो आ रहा था। बड़े महाराज ने पिता जी के पास आदेश भेजकर मुझे स्मरण किया था।"

रत्नमाला ने कहा, "उत्सव को सम्पन्न हुए तो आज तीन दिन हो गये। मेरे कारण आप भी उसमें सम्मिलित नहीं हो सके।"

"हाँ, हो तो नहीं सका। परन्तु क्या उत्सव मेरे बिना बहुत सूना-सूना लग रहा था ?" सोमेश्वर ने विनोद करते हुए पूछा।

विनोद का उत्तर विनोद से देते हुए रत्नमाला ने कहा, "अवश्य लग रहा होगा, इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है।"

"इस वर्ष का उत्सव रहा कैसा ?"

"मैं क्या जानूँ ?"

"क्यों ? क्या तुम भी नहीं गयी थीं ?"

रत्नमाला ने कहा, "क्या आपको इस दशा में छोड़कर मैं उत्सव की शोभा देखने जाती ?"

सोमेश्वर ने कहा, "अर्थात्, मैं तुम्हारे कारण नहीं जा सका और तुम मेरे कारण नहीं गयीं। लेखा-जोखा बराबर हो गया, कृतज्ञता का भार किसी पर नहीं रह गया। परन्तु मेरी एक हानि हो गयी।"

"क्या ?"

"तुम उत्सव में नहीं गयीं तो यह भी नहीं बता सकोगी कि बड़े महाराज कालंजर से लौटकर खजुराहो आ गये हैं अथवा नहीं। मैं यह जानना चाहता था।"

चन्देल साम्राज्य के अधिपति महाराजाधिराज धंगदेव की आयु उस समय नब्वे वर्ष के लगभग थी। वर्णाश्रम-धर्म की मर्यादा का पालन करते हुए उन्होंने शासन का भार कई वर्ष पूर्व अपने सिर से उतार कर फेंक दिया था और अपना अधिकांश समय पूजा-पाठ तथा संत-समागम में व्यतीत करते थे। इधर कुछ वर्षों से वे खजुराहो में रहते भी कम थे। कभी कालंजर तो कभी प्रयाग चले जाते थे और वहाँ तीर्थ-वास करते थे। परन्तु कृषि-वर्षारम्भ तथा अन्य महत्वपूर्ण उत्सवों के अवसर पर वे खजुराहो अवश्य आ जाया करते थे। शासन अब भी उन्हीं के नाम से चलता था परन्तु वे उसमें हस्तक्षेप नहीं करते थे। यदि उपलब्ध हुए और उनसे परामर्श माँगा गया तो स्थिति को समझकर अपना मत प्रकट कर देते थे, अपनी ओर से कभी कुछ पूछते भी नहीं थे। शासन-चक्र का संचालन युवराज गंडदेव, वयोवृद्ध महामंत्री प्रभास की सहायता से कर रहे थे। इसीलिए प्रजा धंगदेव को 'बड़े महाराज' और युवराज गंडदेव को 'छोटे महाराज' कहती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने कहा, "मेरे रहते आपको हानि नहीं होगी। बड़े महाराज आजकल खजुराहों में ही हैं। जिस दिन हमारी दुर्घटना हुई थी वे उसी दिन कालंजर से लौटकर यहाँ आ गये थे। उत्सव का कार्यक्रम उन्हीं के द्वारा सम्पन्न हुआ था। क्या आपको उनसे कोई विशेष कार्य है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "दर्शन करने हैं। महाराज ने स्वयं सेवा में उपस्थित होने का आदेश दिया है।"

"महाराज के दर्शन प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। आप प्रासाद में जाकर जब चाहें मिल सकते हैं। वैसे भी वे जब तक खजुराहो में रहते हैं प्रतिदिन प्रातःकाल विश्वनाथ बाबा के मन्दिर में पूजन करने अवश्य आते हैं, वहाँ कोई भी उनसे मिल सकता है। परन्तु आप पहले पूर्ण स्वस्थ तो हो लें।"

"मैं पूर्ण स्वस्थ कब तक हो जाऊँगा ? तुम्हारे वैद्यराज क्या कहते हैं ?"

रत्नमाला ने कहा, "वैद्यराज मेरे नहीं, आपके हैं। आपके पिताजी के मित्र हैं, और आपका उपचार कर रहे हैं। वे कहते हैं कि अभी एक सप्ताह और लगेगा, परन्तु इससे अधिक नहीं।"

वार्तालाप का अन्य कोई विषय न पाकर सोमेश्वर ने कहा, "वास्तव में मैं अब तुम्हें अधिक कष्ट नहीं देना चाहता। जितना तुम कर चुकी हो उससे ही सम्भवतः कभी उऋण नहीं हो सकूँगा। खजुराहो में अपनी भी हवेली है।"

"मुझे ज्ञात है। मैं वहाँ सूचना भेज चुकी हूँ। वहाँ से आपकी व्यक्तिगत सेवा के लिए आपके एक अनुचर को भी बुला लिया है। वह बाहर बैठा है। परन्तु आप स्वयं अभी वहाँ नहीं जा सकेंगे। अभी आपके लिए उठना-बैठना वर्जित है।" यह कहते-कहते रत्नमाला सहसा गम्भीर हो गयी और क्षण भर रुक कर डूबे-से स्वर में आगे बोली, "आपको यहाँ से जाना तो है ही, परन्तु उसके लिए इतने उतावले क्यों हो रहे हैं ? क्या मेरा सौभाग्य आपको अखरने लगा है ?"

सोमेश्वर ने अनुभव किया कि जाने की असंगत बात कहकर उसने रत्नमाला के हृदय को ठेस पहुंचायी। अतएव बात को सुधारने का प्रयत्न करते हुए उसने कहा, "ऐसा नहीं है। यदि मेरा जाना तुम्हें अच्छा नहीं लगता तो मैं कभी नहीं जाऊंगा।"

रत्नमाला की गम्भीरता और गहरी हो गयी। उसने उदास स्वर में कहा, "ऐसे मेरे भाग्य कहाँ! पिपीलिका को शिखर का स्वप्न भी नहीं देखना चाहिए।"

सोमेश्वर ने असमंजस में पड़कर कहा, "आज तुम ऐसी बातें क्यों कर रही हो ? लगता है मुझसे कोई चूक हो गयी है।"

"नहीं, आपसे कोई चूक नहीं हुई है। मुझे ही आज न जाने क्या हो गया है। मैं स्वयं नहीं समझ पा रही हूँ।"

सोमेश्वर ने कहा, "तो इस विषय को ही छोड़ दो। आओ कुछ और बात करें।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"कीजिये," रत्नमाला ने उदासीन भाव से कहा।

"मैं करूँ? तुम्हीं क्यों नहीं आरम्भ करतीं?"

"आप ही आरम्भ करें। मेरे पास शब्द नहीं हैं।"

"अच्छा लो, मैं ही आरम्भ कर रहा हूँ। वास्तव में बात यह है कि तुम्हारे पास भाव हैं किन्तु शब्द नहीं हैं, और मेरे पास शब्द हैं परन्तु भावों का अभाव है।"

"ऐसा तो मैंने नहीं कहा," रत्नमाला ने आपत्ति की।

"यह भी सत्य है। ऐसा तुमने नहीं कहा। कहतीं भी कैसे? कहने के लिए शब्दों की आवश्यकता होती है जो तुम्हारे पास हैं ही नहीं।"

"ऐसी कंगाल भी नहीं हूँ।"

सोमेश्वर ने कहा, "सो भी अभी परीक्षा हुई जाती है। यदि तुम वास्तव में इतनी कंगाल नहीं हो, यदि तुम्हारे पास सचमुच कुछ शब्द हैं, तो सबसे पहले मुझे अपने विषय में सब-कुछ बता डालो। जिसने मेरे साथ इतना किया है मैं उसका परिचय प्राप्त करने के लिए बहुत उत्सुक हूँ।"

"अपना परिचय तो मैं पहले ही दे चुकी हूँ। क्या मैंने आप से सबसे पहली बात यही नहीं कही थी कि मैं रत्नमाला हूँ?"

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, यह तुम मुझे बता चुकी हो। रत्नमाला तो तुम हो ही, इसमें अंधा भी सन्देह नहीं कर सकता। परन्तु मेरी प्यास एक घूंट से बुझनेवाली नहीं है, और तुमने अभी तक इससे अधिक कुछ भी नहीं बताया है।"

"यह असत्य है," रत्नमाला ने कहा। "मैं यह भी बता चुकी हूँ कि आप इस समय जहाँ विश्राम कर रहे हैं वह मेरा आवास है। नाम-धाम सब तो बता चुकी हूँ।"

"परन्तु मेरे लिए इतना पर्याप्त नहीं है। मैं तुम्हारे विषय में, तुम्हारे परिवार के विषय में सब कुछ जानना चाहता हूँ।"

"उसका भी समय आएगा ही, "रत्नमाला ने उसांस-सी भरकर कहा, और उठकर खड़ी हो गयी।

'कब?" सोमेश्वर ने पूछा।

रत्नमाला द्वार की ओर चल दी थी। यह प्रश्न सुनकर वह रुक गयी और घूमकर बोली, "इस बार आप कितने दिन पश्चात् खजुराहो आये हैं?"

सोमेश्वर ने कहा, "लगभग तीन वर्ष के पश्चात् आया हूँ। कश्मीर की ओर निकल गया था। परन्तु इससे क्या?"

"कुछ नहीं। अब मैं आपके लिए कलेबा का प्रबंध करने जा रही हूँ।" यह कहती हुई रत्नमाला कक्ष से बाहर निकल गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अगले चार-पाँच दिनों में सोमेश्वर की दशा में शीघ्रतापूर्वक सुधार हुआ। उसके घाव भर गये और उठने-बैठने की, और फिर चलने-फिरने की अनुमति भी मिल गयी। इस प्रकार स्वस्थ हो जाने पर उसके अपनी हवेली में चले जाने का दिन भी निश्चित हो गया।

इस स्थिति में सोमेश्वर का प्रसन्न होना बहुत स्वाभाविक था। परन्तु इस प्रसन्नता के पीछे एक शूल भी था जो रह-रह कर कसक उठता था और उसे अनमना कर देता था। वह जब-जब रत्नमाला को देखता था, अथवा उसके विषय में सोचता था, तभी यह शूल कसक उठता था। वह रत्नमाला को अप्रसन्न नहीं देखता चाहता था, और रत्नमाला थी कि उसे कभी प्रसन्न नहीं दिखाई पड़ती थी। सोमेश्वर के प्रति उसका व्यवहार अब पहले जैसा नहीं रह गया था। वह स्वयं भी अब पहले जैसी नहीं रह गयी थी।

रत्नमाला के प्रति वह आरम्भ से ही अपने हृदय में ममत्व की भावना का अनुभव करने लगा था, और कभी-कभी उसे यह भावना और गहरी होती हुई प्रतीत होती थी। कई बार अकेले पड़े-पड़े उसने इसका विश्लेषण करने का प्रयास भी किया था। परन्तु अभी तक वह इस सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाया था कि क्या वह वास्तव में रत्नमाला से प्रेम करने लगा है। रत्नमाला सुन्दरी थी, और उसे अच्छी भी लगती थी। वास्तव में वह उसे बहुत अच्छी लगती थी। परन्तु वह उसके लिए एक रहस्य भी थी और, न जाने क्यों, रहस्य बनी रहना चाहती थी। वह जितना जानने के लिए उत्सुक था उतना ही रत्नमाला अपने आप को दुराती थी। ऐसा कोई अन्य सूत्र भी नहीं था जो उसकी जिज्ञासा को संतुष्ट करने में सहायक हो सके। वैद्यराज अब भी प्रतिदिन उसे देखने आते थे। परन्तु वे उसके पिता के मित्र थे, अतएव इस सम्बन्ध में उनसे कुछ पूछने का प्रश्न ही नहीं उठता था। उसका अपना सेवक भिम्मा, जो रत्नमाला का संदेश पाकर हवेली से उसकी परिचर्या के लिए आया था, हर समय उसके पास रहता था। रत्माला की दासी मल्लिका भी अधिकांश समय उसकी ही सेवा में रहती थी। परन्तु दास-दासियों से कुछ पूछना उसे उचित नहीं प्रतीत हुआ। वह स्वयं रत्नमाला के मुख से उसके सम्बन्ध में सब कुछ जानना चाहता था।

परन्तु रत्नमाला थी कि इसका अवसर ही नहीं आने देती थी। इधर, जब से सोमेश्वर की दशा में सुधार होने लगा था, वह उसके पास बहुत कम बैठती थी। प्रातः काल तथा संध्या को वह नियम से आकर उसके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में अवश्य पूछती थी, और कभी-कभी बीच में भी आ जाती थी, परन्तु बैठती नहीं थी और बातें नहीं करती थी। वह सोमेश्वर की सभी सुविधाओं का पूरा ध्यान रखती थी, उससे सम्बन्धित सम्पूर्ण व्यवस्था पर दृष्टि रखती थी, परन्तु बोलती बहुत कम थी। न स्वयं कुछ कहती थी, न सोमेश्वर को कहने देती थी। स्पष्ट

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था कि वह किसी बात से दुःखी अथवा रुष्ट है, और सोमेश्वर नहीं चाहता था कि रत्नमाला किसी बात से रुष्ट अथवा दुःखी रहे।

अतएव एक दिन जब स्थिति उसके लिए अत्यधिक असह्य हो गयी तो उसने मल्लिका से कहा, "जाकर अपनी स्वामिनी से मेरा अभिवादन निवेदन करो।"

"देवी कहीं बाहर गयी हैं।" मल्लिका ने कहा।

"देवी कहीं बाहर गयी हैं!" सोमेश्वर ने ऐसे स्वर में दुहराया मानों देवी का कहीं बाहर जाना एक अत्यधिक अनुचित तथा असंभावित घटना हो। फिर उसने मल्लिका से कहा, "अच्छा, जब देवी लौटें तो मुझे सूचित करना।"

और फिर वह रत्नमाला के लौटने की प्रतीक्षा करने लगा। उसने निश्चय कर लिया था कि आज वह इस सम्बन्ध में बात अवश्य करेगा।

परन्तु प्रतीक्षा स्वभाव से ही द्रौपदी के चीर के समान होती है। इसकी घड़ियाँ युग बन जाती हैं, और काटे नहीं कटतीं। सोमेश्वर को भी शीघ्र ही उद्विग्नता का अनुभव होने लगा, और फिर यह उद्विग्नता बढ़कर असह्य हो गयी। रत्नमाला का इसप्रकार उसे अकेला छोड़कर कहीं भी जाना उसे अनुचित प्रतीत होने लगा। वह उसे अपने पास देखना चाहता था, उससे बातें करना चाहता था।

६

बाहर से लौटते ही मल्लिका से समाचार पाकर रत्नमाला सीधी सोमेश्वर के पास आयी। क्षण भर के लिए उसे देखकर सोमेश्वर अवाक् रह गया। क्षण भर के लिए उसे लगा मानों उसका वह कक्ष सहसा स्निग्ध प्रकाश से भर गया हो, मानों चन्द्रिका साकार होकर उसके समक्ष आ खड़ी हुई हो। शुभ्र-वसना तथा शुभ्र सुमन-सज्जा से सुवासित, केशराशि के अतिरिक्त सिर से पैर तक शुभ्र, रत्नमाला मानवी लगती ही नहीं थी। यह वह रत्नमाला नहीं थी जिसे वह कुछ समय पूर्व अपने पर्यंक के निकट बैठी देखा करता था। इसका मुख भी न जाने कैसा था। इस पर न रोष अथवा दुःख का कोई चिन्ह था, न अनुराग अथवा उल्लास का। यह मुख सर्वथा निर्विकार तथा अमानवीय था।

रत्नमाला ने कहा, "आपने मुझे स्मरण किया था?"

सोमेश्वर चौंक गया। उसे यह स्वर भी कुछ नया-नया, कुछ अपरिचित-सा लगा। इसकी औपचारिकता उसे चुभती हुई प्रतीत हुई।

रत्नमाला ने फिर कहा, "दासी सेवा में उपस्थित है। आपने मुझे स्मरण किया था?"

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, रत्नमाला। अकेले मन नहीं लग रहा था। सोचा तुम होतीं तो कुछ बातें ही करता। परन्तु आजकल तो तुम्हारे दर्शन भी दुर्लभ हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गये हैं।"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "इधर कुछ अधिक व्यस्त अवश्य हो गयी हूँ, परन्तु मैं तो प्रतिदिन कई बार आपके दर्शन पा लेती हूँ।"

वार्तालाप को आगे चलाने के उद्देश्य से सोमेश्वर ने कहा, "क्या व्यस्तता का कारण मैं भी जान सकता हूँ?"

रत्नमाला ने तटस्थ-से स्वर में उत्तर दिया, "कलाओं का अभ्यास करती हूँ। कलाओं में मेरी बड़ी रुचि है।"

"किन कलाओं में?"

"संगीत तथा नृत्य में। परन्तु आजकल चित्रकला का अभ्यास कर रही हूँ। उसी में व्यस्त रहती हूँ।"

सोमेश्वर ने पूछा, "क्या कोई नया चित्र बना रही हो?"

"प्रयास कर रही हूँ," रत्नमाला ने कहा।

"मुझे नहीं दिखाओगी?"

"नहीं।"

सोमेश्वर ने आहत स्वर में कहा, "क्यों?"

"अभी अधूरा है।"

"पूरा हो जाएगा तब दिखाओगी?"

"तब आप स्वयं देख लेंगे।"

"कब तक पूरा हो जाएगा?"

रत्नमाला ने गम्भीर होते हुए धीमे स्वर में कहा, "कब तक पूरा हो जाएगा? यह क्या मेरे वश की बात है? आरम्भ करते समय लग रहा था कि पूरा होने में समय ही नहीं लगेगा, परन्तु अब असम्भव प्रतीत होने लगा है।"

रत्नमाला को इस प्रकार सहसा गंभीर होते हुए वह पहले भी देख चुका था, और उसका अनुभव था कि गम्भीर होने के पश्चात वह और अधिक बंद, और अधिक उदास हो जाती है। अतएव विषय-परिवर्तन करने के उद्देश्य से उसने कहा, "परन्तु इस समय तो तुम कहीं बाहर गयी थीं।"

रत्नमाला ने पूर्ववत् उदासीन भाव से उत्तर दिया, "हाँ, इस समय मैं बाहर गयी थी। एक महात्मा जी पधारे हैं, उनका प्रवचन सुनने चली गयी थी।"

सोमेश्वर ने बात चलाने के उद्देश्य से पूछा, "कौन महात्माजी?"

"खजुराहो में नये आये हैं। उनका नाम कोई नहीं जानता। परन्तु उनके प्रवचनों की नगर में बड़ी चर्चा है। इसीलिए दर्शन करने चली गयी थी।"

सोमेश्वर ने फिर पूछा, "कैसे लगे?"

"विलक्षण व्यक्ति हैं, देखकर श्रद्धा होती है। कई वर्ष कश्मीर, उद्भाण्ड तथा सिन्धु प्रदेश का भ्रमण करके लौटे हैं। वहाँ भागवत धर्म का प्रचार कर रहे थे।"

"और उनका प्रवचन? वह कैसा लगा?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"प्रवचन भी बड़ा प्रभावपूर्ण था।"

"उसका सारांश क्या था ?"

"आस्था का महत्व," रत्नमाला ने कहा। "आज के पूरे प्रवचन में वे आस्था का महत्व समझाते रहे। प्रवचन का सारांश यह था कि यदि आस्था है तो सब कुछ है और यदि आस्था नहीं है तो कुछ नहीं हैं। दृष्टान्त देते हुए उन्होंने कहा कि स्वयं भगवान रामचन्द्र को लंका पहुँचने के लिए सागर पर सेतु बाँधना पड़ा था, परन्तु उनके सेवक हनुमान केवल आस्था के बल पर एक छलाँग में ही सागर पार कर लंका पहुँच गये थे।"

सोमेश्वर ने टिप्पणी की, "कहते तो ठीक ही हैं। आस्था के बिना सिद्धि के सोपान पर चढ़ना असम्भव है।"

"एक और बड़ी महत्वपूर्ण बात उन्होंने कही।"

"वह क्या थी ?" सोमेश्वर ने पूछा। उसे स्वामीजी में अथवा उनकी कही हुई बातों में तनिक भी रुचि नहीं थी। परन्तु वह वार्तालाप के प्रस्तुत प्रवाह को भंग नहीं करना चाहता था। रत्नमाला का पास रहना और कुछ कहते रहना ही इस समय उसे अभीष्ट था।

रत्नमाला भी वार्तालाप के इस नये विषय में अधिक उत्साह का अनुभव कर रही थी। वह बोली, "महात्माजी कह रहे थे कि इस समय देश को एक चन्द्रगुप्त की आवश्यकता है। पश्चिम के क्षितिज पर फिर काले बादल एकत्र हो रहे हैं, परन्तु हमारे देशवासी अपने-अपने घर में बैठे अपने आपको सुरक्षित समझ रहे हैं। स्वामीजी कह रहे थे कि आने वाली इस विपत्ति के प्रति हमारी वर्तमान उदासीनता अन्त में हमें बहुत महँगी पड़ेगी क्योंकि तुरुष्क आततायी बड़े धर्मान्ध हैं।"

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, कश्मीर में मैंने और लोगों को भी ऐसा कहते सुना था। तुरुष्क अपने दस्यु-अभियानों को धर्मयुद्ध की संज्ञा देते हैं और तलवार के बल पर अपने धर्म का प्रचार-प्रसार करते हैं। परन्तु हमारी तलवार की धारभी अभी कुंठित नहीं हुई है, हमारे देश से भी अभी वीरता का लोप नहीं हो गया है।"

रत्नमाला उत्तर में कुछ कहने जा ही रही थी कि एक दासी ने प्रवेश करते हुए घोषणा की, "देवी, आर्य जयसिंह बाहर प्रतीक्षा कर रहे हैं। दर्शन की अनुमति चाहते हैं।"

"जयसिंह !" रत्नमाला ने विस्मय के स्वर में नाम दुहराया। फिर, कुछ क्षण विचार करने के पश्चात्, उसने दासी से कहा, "उन्हें अतिथि-कक्ष में आसन दो, मैं अभी आ रही हूँ। जाओ।"

सोमेश्वर का मुख विवर्ण हो गया। उसे रत्नमाला से बहुत कुछ कहना था जिसे वह अभी आरम्भ भी नहीं कर पाया था। रत्नमाला ने, मानों उसके मन का भाव जानकर खिझाने के लिए पूछा, "जाऊँ ?"

सोमेश्वर ने अत्यन्त क्षीण स्वर में कहा, "वे कौन महानुभाव हैं ? क्या मैं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
जान सकता हूँ ?''

रत्नमाला के अधरों पर क्षण भर के लिए एक विचित्र-सी मुस्कान खेल गयी जिसे छिपाने अथवा दवाने का प्रयास किये बिना उसने कहा, ''आप इन महानुभाव से परिचित हैं।''

सोमेश्वर ने खीझभरे स्वर में कहा, ''मैं ? मैं इस नाम के किसी व्यक्ति से परिचित नहीं हूँ।''

''नाम से भले न हों, परन्तु व्यक्ति से परिचित हैं। इनसे आपकी भेंट हो चुकी है।''

सोमेश्वर ने और अधिक खीझकर कहा, ''कब ? कहाँ ? स्पष्ट क्यों नहीं बताती हो ?''

''स्पष्ट भी सुन लीजिये। ये महानुभाव उस दस्यु-दल के नायक थे जिससे आपने मेरी रक्षा की थी।''

सोमेश्वर की भृकुटी तन गयी। उसने कहा, ''वह दुष्ट ! अपने को सिंह कहता है।''

रत्नमाला ने कहा, ''तो मुझसे क्यों रुष्ट हो रहे हैं ? यदि वह अपने को सिंह कहता है तो इसमें मेरा क्या दोष है ? और दोष वास्तव में उसका भी नहीं है। वह कान्य-कुब्ज का सिंह है। वहाँ अब ऐसे ही सिंह होते हैं।''

''अब वह तुम्हारे पास क्या करने आया है ?'' सोमेश्वर ने पूछा।

''मैं क्या जानूँ ? बात करके बताऊँगी। सम्भव है मुझसे क्षमा-याचना करने अथवा आपके स्वास्थ्य की कामना करने आया हो।''

यह कहकर रत्नमाला बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये कक्ष से बाहर निकल गयी।

७

रत्नमाला के अतिथि-कक्ष में प्रवेश करते ही जयसिंह उठकर अभिवादन की मुद्रा में खड़ा हो गया।

वह लगभग चालीस वर्ष की आयु का हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति था। उसका वर्ण हलका श्यामल था, केश कटे हुए थे, मुख पर दाढ़ी नहीं थी किन्तु मूँछें घनी और बड़ी थीं। देखने में वह मल्ल प्रतीत होता था क्योंकि उसके दोनों कान टूटे हुए थे। उसके शारीरिक निर्माण की दो विशेषताएं तुरन्त अपनी ओर ध्यान आकर्षित करने वाली थीं। पहली यह कि उसके सामने के ऊपर वाले दाँत आवश्यकता से कुछ अधिक बड़े थे और सदा उसके मोटे अधरों के पीछे से झाँकते रहते थे। परिणामतः उसके मुख का फैलाव स्थायी रूप से चौड़ा हो गया था और वह बिना हँसे भी सदा हँसता हुआ प्रतीत होता था। दूसरी विशेषता उसके हाथों की बनावट में थी। वे चौकोर तथा इतने अनगढ़ और गठीले थे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कि उन्हें देखकर ही उनके स्वामी के अपराधी एवं हत्यारा होने का अनुमान लगाया जा सकता था। परन्तु इस समय उसने अपने मुख पर दैन्य का आवरण डाल रखा था। उसकी वेश-भूषा खजुराहो के सम्भ्रान्त नागरिकों की-सी थी और वह पूर्णतया निःशस्त्र था।

कक्ष के ,भीतर आकर रत्नमाला ने आसन की ओर संकेत करते हुए कहा, "विराजिये, जयसिंहजी। इस शिष्टाचार से मेरी धारणा में कोई अन्तर नहीं पड़ेगा।"

जयसिंह ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। उसके बैठ जाने पर रत्नमाला ने भी आसन ग्रहण करते हुए फिर कहा, "मैं तुम्हारे साहस की प्रशंसा करती हूँ, जयसिंह।"

"साहस की अथवा दुस्साहस की !" जयसिंह ने एक फीकी-सी हँसी हँसते हुए कहा।

"दुस्साहस पर आश्चर्य कर रही हूँ।"

जयसिंह ने कहा, "संकट व्यक्ति को दुस्साहसी बना देता है, रत्नमाला। मैं इस समय घोर संकट में हूँ, इसीलिए प्राण हथेली पर लेकर, और निर्लज्ज होकर तुम्हारी शरण में आया हूँ। अब इस संसार में एक तुम्हीं मेरी सहायता कर सकती हो।"

"व्यक्ति को अपनी सहायता स्वयं करनी चाहिए", रत्नमाला ने उदासीनता के स्वर में कहा।

"मैं प्रयत्न कर चुका हूँ...और असफल रहा हूँ। अब मेरा जीवन तुम्हारे हाथ में है। तुम्हीं चाहो तो मुझे बचा सकती हो।"

रत्नमाला ने व्यंग्य के स्वर में कहा, "मैं श्रीमान की क्या सेवा कर सकती हूँ ?"

"तुम मेरे प्राण बचा सकती हो, रत्नमाला। मैं जानता हूँ कि मैं इस योग्य नहीं हूँ, फिर भी तुमसे दया की भिक्षा माँग रहा हूँ। मैंने जो कुछ किया है उसके पश्चात् तुम्हारा मुझसे रुष्ट होना स्वाभाविक है। मैं स्वयं उसके लिए हृदय से लज्जित हूँ और अपने आपको तुम्हारा अपराधी समझता हूँ। परन्तु तुम भली प्रकार जानती हो कि मैं स्वयं अपना स्वामी नहीं हूँ। मैं सेवक मात्र हूँ जिसके लिए स्वामी के आदेशों का पालन करना अनिवार्य है। उस दिन जो कुछ हुआ है वह वास्तव में मैंने नहीं किया, मुझसे कराया गया था। और तुम यह भी भली प्रकार जानती हो कि ये सारे कार्य कराने वाला व्यक्ति कितना निर्भय, कितना कठोर है। वह असफलता को कभी क्षमा नहीं करता, और उसका दण्ड निर्मम तथा अनिवार्य होता है।"

रत्नमाला ने अन्यमनस्क भाव से कहा, "मैं उससे भली प्रकार परिचित हूँ और...और घृणा करती हूँ। उससे भी और तुमसे भी। मैं तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकती।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"कर सकती हो, रत्नमाला, तुम मेरी सहायता कर सकती हो। जो मैं बलात् नहीं करा सका, वह तुम स्वेच्छा से कर सकती हो। तुम मेरे साथ कान्यकुब्ज चल-कर मेरे प्राण बचा सकती हो।"

"परन्तु मैं तुम्हारे प्राण क्यों बचाऊँ? इसमें मेरा क्या लाभ होगा?"

जयसिंह ने कहा, "होने को लाभ भी हो सकता है। भविष्य को किसने देखा है? परन्तु इतना निश्चित है कि हानि कोई नहीं होगी। तुम्हारे लिए कोई अन्तर नहीं पड़ेगा, मेरे प्राण बच जाएँगे।"

रत्नमाला ने कहा, "कोई हानि ही नहीं होगी? खजुराहो में मैंने जो स्थिति बना ली है, जो सम्पत्ति अर्जित कर ली है, जो सम्पर्क स्थापित कर लिए हैं, इन सबका क्या होगा?"

"इन सबको तो एक न एक दिन वैसे भी छूटना है। जिसने मुझे भेजा है वह विफल-मनोरथ रहना नहीं जानता। मैं भले सफल न हो पाऊँ, परन्तु वह असफल नहीं रहेगा।"

रत्नमाला ने पूछा, "अब वह क्या करेगा?"

"यह तो मैं नहीं जानता, परन्तु इतना निश्चित है कि छल से अथवा बल से तुम्हें कान्यकुब्ज ले जाकर ही रहेगा।"

रत्नमाला ने विद्रूप करते हुए कहा, "बल का प्रयोग तो देख चुकी हूँ, छल का अभी देखना है।"

जयसिंह ने कहा, "अभी तुमने बल का प्रयोग भी नहीं देखा है। जिस ओर तुम संकेत कर रही हो वह केवल मेरी योजना थी जिसके लिए मैंने अपने स्वामी की अनुमति भी नहीं ली थी। और तुम्हें स्मरण रखना चाहिए कि उस दिन भी तुम केवल अपने भाग्य और मेरी मूर्खता के कारण बच गयीं। मैंने भाड़े के वीरों पर विश्वास किया था, इस कारण योजना सफल नहीं हुई। परन्तु अगली बार ऐसा नहीं होगा।"

"क्या अगली बार कान्यकुब्ज के पराक्रमी वीरों को बुलाओगे?" रत्नमाला ने व्यंग किया।

जयसिंह ने कहा, "हाँ, यदि आवश्यकता हुई तो कान्यकुब्ज की सम्पूर्ण सेना आएगी और खजुराहो की ईंट से ईंट बजाकर तुम्हें यहाँ से ले जाएगी।"

रत्नमाला खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली, "कान्यकुब्ज की प्रतिहार वाहिनी का पराक्रम गोपाद्रि में देखा जा चुका है जहाँ चन्देलों के एक सामन्त वज्रदमन ने बिना प्रयास प्रतिहारों का प्रसिद्ध दुर्ग अपने अधीन कर लिया। वही वाहिनी खजुराहो की ईंट से ईंट बजाएगी? क्या उस लज्जा के पश्चात् कान्य-कुब्ज के वीरों ने अभी तक आत्महत्या नहीं की है?"

जयसिंह ने धीमे स्वर में उत्तर दिया, "गोपाद्रि की बात और थी। इस बार वैसा नहीं होगा।"

"क्यों? क्या कान्यकुब्ज में अब पहले से अधिक सेना हो गयी है?" रत्न-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माला ने टटोला।

"यह समय आने पर ही ज्ञात होगा। गोपाद्रि में चन्देलों ने हमारे साथ विश्वासघात किया और हमें असावधान पाकर आक्रमण कर दिया। इस बार अवसर आने पर हम सोते नहीं मिलेंगे।"

"परन्तु तुम करोगे क्या?"

जयसिंह ने कहा, "यह राजनीति की बातें हैं, और मैं एक साधारण सैनिक मात्र हूँ।"

रत्नमाला ने समझ लिया कि उसके मस्तिष्क में कुछ है जिसे वह बताना नहीं चाहता है। अतएव उसने अपने प्रहार की दिशा बदलते हुए कहा, "यदि ऐसा है तो तुम अब जा सकते हो। और अधिक वार्तालाप से किसी पक्ष को कोई लाभ नहीं होगा।"

"क्यों?" जयसिंह ने पूछा।

"मुझे राजनीति की ही कुछ बातें करनी थीं, परन्तु तुम उनके लिए उपयुक्त व्यक्ति नहीं हो।" यह कहती हुई रत्नमाला उठकर खड़ी हो गयी।

परन्तु जयसिंह अपने स्थान से नहीं उठा, बैठे ही बैठे बोला, "उतना अनुपयुक्त भी नहीं हूँ जितना तुम समझ रही हो। यदि बातें काम की हों तो मैं उन्हें प्रसन्नतापूर्वक सुन सकता हूँ और उपयुक्त व्यक्ति तक पहुँचा भी सकता हूँ।"

रत्नमाला ने कहा, "और मूल्य कौन देगा?"

"वह भी मैं दे सकता हूँ। कितना?"

"एक सहस्र द्रम्म, "रत्नमाला ने कहा।

"स्वीकार है, यदि सूचना इस योग्य हुई।"

"सूचना इससे कई गुनी अधिक मूल्यवान है। परन्तु मैं अपना कोई अंश नहीं रख रही हूँ। इतनी धनराशि सूत्रों को देनी होगी।"

"तुम भी अपुरस्कृत नहीं रहोगी," जयसिंह ने कहा। "तुम्हारा पुरस्कार कान्यकुब्ज चलकर मिलेगा।"

"परन्तु मेरा अभी कान्यकुब्ज चलने का कोई विचार नहीं है। इसी कारण मैं इस पुरस्कार में अपना अंश नहीं रख रही हूँ। मैं प्रमाणित करना चाहती हूँ कि मैं धन अथवा सम्मान की अपेक्षा कान्यकुब्ज को अधिक प्रेम करती हूँ। मैं तुम्हें जो सूचना दूंगी उसके आधार पर तुम वहाँ जाकर यह भी कह सकते हो कि मैं यहाँ उपयोगी कार्य कर रही हूँ।"

"तुम किस समय कहाँ अधिक उपयोगी हो सकती हो इसका निर्णय मेरे अथवा तुम्हारे हाथ में नहीं है, और जिसके हाथ में है वह कर भी चुका है। उसी ने मुझे यहाँ भेजा है। वह अब नहीं चाहता कि तुम खजुराहो में रहो, और तुम स्वयं जानती हो कि वह कितना हठी है।"

रत्नमाला ने कहा, "परन्तु अब वह ऐसा क्यों चाहने लगा है? उसीने तो मुझे तीन वर्ष पूर्व यहाँ भेजा था।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से मैं कुछ नहीं कह सकता क्योंकि उसने मुझे बताया नहीं है। सम्भवतः तुम्हें भी कभी नहीं बताया होगा। अतएव केवल अनुमान लगा सकता हूँ।"

रत्नमाला बड़ी गम्भीरता के साथ कुछ सोच रही थी अतएव अपनी गंभीरता को छिपाने और सोचने के लिए थोड़ा समय प्राप्त करने के उद्देश्य से किंचित् मुस्कराते हुए उसने कहा, "तुम्हारे अनुमानों में भी सत्य का पर्याप्त अंश होगा।"

जयसिंह ने कहा, "अनुमानित सत्य की माप बड़ी कठिन होती है। परन्तु यह कठिनाई मेरी नहीं, तुम्हारी होगी। अनुमान मेरा है। मैं समझता हूँ कि इस निर्णय के पीछे दो कारण सम्भव हैं—प्रेम और क्रोध। दोनों ही विवेक के शत्रु होते हैं।"

"मैं तुम्हारा तात्पर्य नहीं समझी," रत्नमाला ने कहा।

"ऐसी गूढ़ बात तो मैंने कोई कही नहीं। तीन वर्ष तक अपनी प्रेमिका से राज्य के हित में विलग रहने के पश्चात् कोई भी व्यक्ति इसी प्रकार अधीर हो सकता है। यह स्वाभाविक है।"

"परन्तु क्रोध क्यों?" रत्नमाला ने प्रश्न किया।

जयसिंह ने उत्तर दिया, "क्रोध इसलिए कि तुमने आशाओं के अनुकूल कार्य नहीं किया है। तीन वर्ष पूर्व तुम्हें इसलिए खजुराहो भेजा गया था कि तुम यहाँ रहकर महत्वपूर्ण सूचनायें भेजा करोगी। परन्तु तुमने अपने इस कर्त्तव्य का समुचित पालन नहीं किया है। गत वर्ष भर में तुमने केवल तीन सूचनाय भेजीं, और वे तीनों असत्य सिद्ध हुईं। इस बीच खजुराहो में कार्य करने वाले हमारे दो गुप्तचरों की संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु हुई, और वे दोनों तुम्हारे सम्पर्क में थे। इनके अतिरिक्त और भी कई बातें हैं जिन्हें मैं इस समय कहना नहीं चाहता। परन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि इधर तुम्हारा आचरण असंदिग्ध नहीं रहा है। मैं गत एक मास से तुम पर दृष्टि रख रहा हूँ, और मैंने जो कुछ देखा और सुना हैं उससे मुझे तुम्हारी स्वामि-भक्ति पर भी संदेह होने लगा है। मैंने अभी तक अपना यह संदेह किसी से व्यक्त नहीं किया है, परन्तु यदि इसकी गंध भी कान्यकुब्ज पहुँच गयी तो परिणामों की कल्पना तुम स्वयं कर सरती हो।" इतना कहकर वह सहसा रुक गया और ध्यान से रत्नमाला के मुख की ओर देखने लगा।

परन्तु रत्नमाला के मुख पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं हुई। उसने पूर्ववत् उदासीनता के स्वर में कहा, "ऐसी दशा में मेरा कान्यकुब्ज लौटकर जाना असम्भव है। उससे मेरा कोई लाभ नहीं होगा।"

जयसिंह ने कहा, "तुम कान्यकुब्ज चलकर मेरे संदेह को निराधार प्रमाणित कर सकती हो।"

"मैं उसे इस योग्य नहीं समझती। तुम्हारा संदेह इतना निराधार है कि उसके विरुद्ध प्रमाण देने की भी आवश्यकता नहीं है। इसके अतिरिक्त मैं इस समय खजुराहो में रहना अधिक आवश्यक समझती हूँ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मैं ऐसा नहीं समझता, और यदि मेरा संदेह सर्वथा निराधार होता तो तुम कान्यकुब्ज जाने के विचार से ही भयभीत न हो जातीं।"

"मैं भयभीत नहीं हूँ," रत्नमाला ने कहा।

"फिर चलने से क्यों कतरा रही हो?"

"मैं अभी वहाँ नहीं जाना चाहती।"

"और मुझे तुमको वहाँ ले जाने के लिए ही भेजा गया है। मैं तुम्हें कान्यकुब्ज ले जाकर ही रहूँगा, क्योंकि मेरे लिए रिक्त-हस्त लौटने का अर्थ होगा जीवन से हाथ धोना। यह भली प्रकार समझ लो, रत्नमाला, कि जयसिंह बार-बार पराजित नहीं होगा।"

रत्नमाला ने कहा, "तो तुम भी यह भली प्रकार समझ लो, जयसिंह, कि मैं अब कभी कान्यकुब्ज नहीं जाऊँगी, और इस सम्बन्ध में तुम कुछ नहीं कर सकोगे।"

जयसिंह ने उत्तेजित होकर कहा, "मै सब कुछ कर सकता हूँ। यदि स्वेच्छा से नहीं चलोगी तो अपहरण करके ले जाऊँगा, और यदि वह भी संभव न हुआ तो हत्या कर दूँगा। मुझे ऐसा ही आदेश दिया गया है। परन्तु मैं चाहता हूँ कि बल-प्रयोग न करना पड़े, अतएव तुम्हें विचार करने के लिए थोड़ा समय और दे रहा हूँ। कल संध्या तक तुम्हें अन्तिम निर्णय कर लेना होगा, और यदि तुम स्वेच्छा से चलने का निश्चय करो तो उसकी सूचना मुझे देना तुम्हारा उत्तर-दायित्व होगा। मैं फिर यहाँ आने का दुस्साहस नहीं करूँगा।"

क्षण-भर विचार करने के पश्चात् रत्नमाला ने कहा, "मैं अपना अन्तिम निर्णय कर चुकी हूँ और तुम्हें उसकी सूचना भी दे चुकी हूँ। अब तुम जा सकते हो।"

जयसिंह उठकर खड़ा हो गया और द्वार की ओर बढ़ा। परन्तु द्वार के निकट पहुँचकर वह रुक गया और घूमकर बोला, "वह एक सहस्र द्रम्य वाली सूचना? अब नहीं देनी है?"

"तुम्हें आवश्यकता हो तो संध्या तक मिल सकती है, परन्तु मूल्य अभी चुकाना होगा।"

जयसिंह ने कहा, "मैं ऐसा व्यापार नहीं करता। पण्य को परख कर ही मूल्य दे सकता हूँ।"

"तुरन्त?"

"हाँ, तुरन्त।"

रत्नमाला ने कहा, "मुझे स्वीकार है। गोधूलि के पश्चात् एक व्यक्ति योगिनी मंदिर के पीछे तुम्हारी प्रतीक्षा करेगा। वैसे मैं स्वयं आती, परन्तु मुझे अब तुमसे भय लगने लगा है, इसलिए नहीं आऊँगी। वह व्यक्ति मेरा विश्वस्त अनुचर होगा। उसके पास मेरी मुद्रिका देखकर और उसे अपनी दिखाकर उससे लिखित सूचना प्राप्त करना। वही धनराशि भी लेगा। इसमें कुछ परिवर्तन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहते हो ?''

"नहीं। मैं ठीक समय पर वहाँ पहुँच जाऊँगा।''

यह कहता हुआ जयसिंह कक्ष से बाहर निकल गया।

८

उस दिन संध्या को रत्नमाला सोमेश्वर के कक्ष में नहीं गयी। सोमेश्वर ने भी उसे नहीं बुलवाया, उसने मल्लिका से इतना भी नहीं पूछा कि उसकी स्वामिनी कहाँ है और क्या कर रही हैं। वह अपने हृदय में रत्नमाला के प्रति रोष और जयसिंह नामक व्यक्ति के प्रति ईर्ष्या का अनुभव कर रहा था। यदि रत्नमाला उस समय आ जाती तो उसका रोष व्यक्त हो जाता और ईर्ष्या स्वतः निर्बल पड़ जाती, परन्तु रत्नमाला आयी नहीं, और जैसे-जैसे समय वीतता गया उसकी ये भावनायें भी अधिकाधिक तीव्र होती गयीं।

रात्रि हो गयी, परन्तु सोमेश्वर को नींद नहीं आयी। उसके मस्तिष्क में अनेक प्रश्न उठ रहे थे जिनके उत्तर वह किसी प्रकार खोज नहीं पा रहा था। यह जयसिंह कौन है ? वह कैसा होगा ? रत्नमाला के साथ उसका क्या सम्बन्ध है ? उसने रत्नमाला के अपहरण का प्रयास क्यों किया था ? आज वह रत्न-माला के पास फिर क्यों आया था ? रत्नमाला के साथ उसकी आज क्या बात-चीत हुई होगी ? क्या वह रत्नमाला का प्रेमी है ? और यह रत्नामाला स्वयं कौन है ? कैसे और किसके साथ रहती है ? इस समय कहाँ होगी ? जयसिंह के साथ तो नहीं चली गयी ? वह जितना सोचता था उतना ही उसका मस्तिष्क और उलझता चला जा रहा था। प्रश्नों की संख्या बढ़ती जा रही थी, परन्तु समाधान एक का भी नहीं मिल रहा था।

और समय अपने अदृश्य पंखों पर धीरे-धीरे किन्तु निरन्तर उड़ा चला जा रहा था। कल प्रातःकाल उसे यहां से अपनी हवेली में चले जाना था। और फिर ?

सोमेश्वर ने राजप्रासाद में बज रहे अर्धरात्रि के गजर का दूरागत स्वर सुना। बाहर ग्रीष्म की रात्रि भीगने लगी थी। खुले वातायन से आ रहे पवन के झोंकों में अब शीतलता का यथेष्ट समावेश हो चला था।

और फिर उसका मस्तिष्क थक कर शिथिल होने लगा। प्रश्न-चिह्न धुँधले पड़ने लगे, उसकी पलकें बोझिल होने लगीं, और वह, न जाने कब और कैसे, सो गया।

सोते-सोते उसने एक भयंकर स्वप्न देखा। उसने देखा कि वह न जाने क्यों और कैसे एक बीहड़, अपरिचित प्रदेश में पहुँच गया है। वहाँ वृक्ष अनेक थे परन्तु उनमें पत्तियाँ न होने के कारण छाया कहीं नहीं थी। केवल ऊँचे-ऊँचे,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विचित्र आकृतियों वाले ठूँठ प्रेतों-से चारों ओर मौन खड़े थे, और वह उनके बीच से मार्ग बनाता हुआ चला जा रहा था, चला ज़ा रहा था। उसके पैरों से रक्त बह रहा था किन्तु उनमें पीड़ा नहीं थी, और उसके कंठ में काँटे निकल आये थे जो चुभ रहे थे। इस प्रकार चलते-चलते वह एक ऐसे स्थान पर जा पहुँचा जहाँ चारों ओर अनेक मानव शव विविध मुद्राओं में बिखरे पड़े थे। उसके निकट पहुँचते ही वे सारे शव एक साथ उठकर खड़े हो गये। देखते-देखते उन्होंने उसे चारों ओर से घेर लिया। उसने उनसे पूछा—तुम लोग कौन हो? क्या चाहते हो? परन्तु उसके शब्द काँटों में अटक कर उसके कंठ में ही रह गये। वह अपना स्वर स्वयं नहीं सुन पाया। तो उन्होंने सहसा उसे धरती पर गिरा दिया। इस पर भी उसके मुख से शब्द नहीं निकला। फिर उनमें से एक, जिसका मुख श्वेत वस्त्र से ढका हुआ था, नंगी कृपाण हाथ में लेकर उसके निकट बैठ गया और शेष उसके चारों ओर घूम-घूम कर एक भयंकर नृत्य करने लगे। विलम्ब तक इस प्रकार नृत्य करने के पश्चात् वे रुके और उसके चारों ओर एक वृत्त बनाकर खड़े हो गये। तब उसके निकट बैठे हुए नर-प्रेत की कृपाण ने धीरे-धीरे ऊपर उठना आरम्भ किया। जैसे-जैसे कृपाण ऊपर उठ रही थी वैसे-वैसे उसके चारों ओर कोलाहल बढ़ता जा रहा था। फिर कृपाण ने धीरे-धीरे नीचे गिरना आरम्भ किया और कोलाहल भी उसी प्रकार धीरे-धीरे कम होने लगा। कृपाण को अपने वक्षस्थल के निकट देखकर सहसा सोमेश्वर के शरीर में भी स्फूर्ति का संचार हुआ। उसने एक बार में अपनी सारी शक्ति लगाकर उस हाथ को पकड़ लिया जिसमें कृपाण थी, और स्वयं धरती पर से उठने का प्रयत्न करने लगा।

तभी सहसा स्वप्न टूट गया और उसकी आँखें खुल गयीं। उसने देखा कोई व्यक्ति वास्तव में अब भी उसके ऊपर झुका हुआ है, और उसने—सोमेश्वर ने—दृढ़तापूर्वक उसका हाथ पकड़ रखा है।

६

सोमेश्वर ने उस व्यक्ति को पहचान लिया, और पहचान कर उसकी आँखें खुली रह गयीं। स्वप्न की भयाक्रान्त उसकी आँखों को यथार्थ पर विश्वास नहीं हो रहा था।

"तुम!" उसके मुख से अनायास निकला। उसके कंठ में अब भी काँटे चुभ रहे थे।

रत्नमाला ने कहा, "हाँ, मैं ही हूँ। आपके मुख पर बनते-बिगड़ते भावों को पढ़ने का प्रयास कर रही थी। क्या कोई स्वप्न देख रहे थे?" उसकी अपनी मुद्रा सहज थी, उसका स्वर सामान्य था।

सोमेश्वर ने अपेक्षाकृत प्रकृतिस्थ स्वर में उत्तर दिया, "हाँ, रत्नमाला, बड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भयानक स्वप्न देख रहा था।......परन्तु कंठ सूख रहा है। मुझे थोड़ा जल दे सकोगी ?"

"अभी लाती हूँ," रत्नमाला ने कहा। परन्तु वह अपने स्थान से नहीं हिली, वहीं खड़ी-खड़ी अपलक सोमेश्वर का मुख देखती रही।

सोमेश्वर भी कुछ नहीं बोला। उसका भयानक स्वप्न अब भी उसकी आँखों में घूम रहा था। अन्त में रत्नमाला ने ही, कुछ क्षण प्रतीक्षा करने के पश्चत्, फिर कहा, "जल लाने जाऊँ ?"

"हाँ-हाँ शीघ्रता करो। मेरा कंठ सूखा जा रहा है।"

तभी रत्नमाला के प्रश्न पूछने का कारण उसके मस्तिष्क में अचानक बिजली की भाँति कौंध गया। रत्नमाला का हाथ अभी तक उसके हाथ में बंदी था, और वह उसे मुक्त करने का प्रयास भी नहीं कर रही थी। सोमेश्वर ने तुरन्त बिना कुछ कहे उसे मुक्त कर दिया।

शीघ्र ही रत्नमाला जल लेकर आगयी। उसे पीकर कुछ स्वस्थ होते हुए सोमेश्वर ने कहा, "इस समय तुम्हें यहाँ अपने पास पाकर मुझे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था।"

"स्वाभाविक है," रत्नमाला ने उत्तर दिया। "आपको विश्वास नहीं ही होना चाहिए, और मुझे भी इस समय यहाँ नहीं आना चाहिए था। परंतु आज आप यहाँ से चले जाएँगे। फिर न जाने कभी भेंट हो, न हो; और यदि हो भी तो न जाने कब हो। यही सोचकर एक बार जी भर कर देख लेने का लोभ नहीं संवरण कर सकी। संयम की भी एक सीमा होती है।"

सोमेश्वर ने एक बार दृष्टि उठाकर ध्यान से रत्नमाला का मुख देखना चाहा। परन्तु कक्ष में उस समय केवल एक दीपक जल रहा था, और दीपाधार पर्यंक के दूसरी ओर था। अतएव मुखाकृति को स्पष्ट देखकर आँखों का भाव पढ़ लेना सम्भव नहीं था। अपने प्रयास में विफल होकर उसने अपनी दृष्टि फिर नीचे करली और कहा, "कल संध्या को मैं तुम्हारी बड़ी प्रतीक्षा करता रहा, परन्तु तुम आयीं ही नहीं। मैंने तो समझा था कि इस बार जयसिंह तुम्हें ले गया।"

"मुझे ले जाने के लिए उसे दूसरा जन्म धारण करना होगा," रत्नमाला ने अन्यमनस्क भाव से कहा। उसे यह विषय-परिवर्तन अच्छा नहीं लगा था।

"कल क्या वह मेरे स्वास्थ्य के विषय में पूछने आया था ?" सोमेश्वर ने चिढ़ाने के स्वर में पूछा।

"नहीं।"

"तो तुमसे क्षमा-याचना करने आया होगा ?"

"नहीं।"

"फिर ?"

"मुझे धमकाने आया था।"

सोमेश्वर ने गम्भीर होते हुए कहा, "यही मैं भी समझता था। वह बड़ा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
भयानक व्यक्ति है और तुम्हें कभी भी पीड़ित कर सकता है। तुम्हें उसकी ओर से बहुत सावधान रहना चाहिए, मेरे यहाँ से जाने के पश्चात् न जाने कौन काण्ड खड़ा कर दे। मुझे सदा इसकी चिन्ता लगी रहेगी।"

रत्नमाला ने कहा, "आप निश्चिन्त होकर यहाँ से जा सकते हैं। वह कोई काण्ड नहीं खड़ा करेगा।"

"तुम्हें विश्वास है ?"

"हाँ, मुझे पूरा विश्वास है। वह अब कभी यहाँ आएगा भी नहीं।"

"क्यों ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"इसलिए कि वह अब जीवित नहीं है। कल गोधूली के पश्चात् किसी समय योगिनी मंदिर के निकट कुछ अज्ञात व्यक्तियों ने उसकी तथा उसके दो साथियों की हत्या कर दी।"

"क्यों ?"

"मैं क्या जानूं ?" रत्नमाला ने बड़े सरल भाव से कहा।

सोमेश्वर ने कुछ सोचते हुए धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया, "यह अच्छा ही हुआ। मुझे उससे बड़ी आशंका थी। जो व्यक्ति एक बार तुम्हारा अपहरण करने के प्रयास में असफल होकर भी निर्भय, निःसंकोच फिर तुम्हारे पास आ सकता था, उसके लिए कोई भी दुस्साहस असम्भव नहीं था। वह किसी समय कुछ भी कर सकता था।"

"हाँ, जयसिंह ऐसा ही व्यक्ति था।"

सहसा सोमेश्वर ने पूछा, "तुम्हारा तो उससे पहले का परिचय था ?"

"हाँ," रत्नमाला ने निस्संकोच उत्तर दिया।

"क्या अब मुझे भी बता सकती हो कि वह कौन था और तुम्हारे साथ उसका क्या सम्बन्ध था ?"

"हाँ, बता सकती हूँ। वह कान्यकुब्ज की सेना का एक उच्च अधिकारी था। मेरा उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं था।"

"केवल परिचय था ?"

"हाँ"

"परिचय कैसे हुआ ?"

रत्नमाला ने कहा, "तीन वर्ष पूर्व तक मैं भी कान्यकुब्ज में ही रहती थी।"

सोमेश्वर मौन होकर कुछ सोचने लगा। रत्नमाला भी मौन वातायन की ओर निहारने लगी। बाहर आकाश का रंग बदलने लगा था। कालिमा कम हो रही थी, नीलिमा उभर रही थी। उषा-पूर्व की कांचन आभा में नक्षत्र कान्ति-हीन हो चले थे। कभी-कभी किसी अर्ध-जाग्रत पक्षी-कंठ का स्वर भी सुनाई पड़ने लगा था।

कुछ क्षण पश्चात् सोमेश्वर ने मौन भंग करते हुए धीमे स्वर में कहा, "तुम अद्भुत स्त्री हो, रत्नमाला, मैं जितना तुम्हें समझने का प्रयास करता हूँ उतना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
ही और उलझता जाता हूँ। तुम वास्तव में एक पहेली हो।"

रत्नमाला अभी तक पर्यंक के पार्श्व में खड़ी थी। अब मानो सोमेश्वर को उसकी अभद्रता का स्मरण कराती हुई बोली, "क्या मैं भी बैठ सकती हूँ ?"

"अरे !" सोमेश्वर ने कहा, "तुम अभी तक खड़ी हो ! मैं भी कैसा मूर्ख हूँ ! हाँ-हाँ, बैठो। बैठो।"

रत्नमाला ने एक बार पीठिका की ओर देखा, फिर पर्यंक की दिशा में दृष्टि घुमायी, और अन्त में सोमेश्वर की ओर इस प्रकार निहारा मानों पूछ रही हो कि कहाँ बैठूं। फिर वह चुपचाप पर्यंक के निकट पड़ी पीठिका पर बैठ गयी।

परन्तु सोमेश्वर का ध्यान इस असमंजस की ओर, सम्भवतः, गया ही नहीं, क्योंकि वह अपने आप में उलझा हुआ था। उसके प्रश्नों का अभी अन्त नहीं हुआ था। अतएव रत्नमाला के बैठ जाने पर वार्तालाप का क्रम फिर आरम्भ करते हुए उसने कहा, "एक बात पूछूँ, रत्नमाला।"

"एक ही क्यों, अनेक पूछिए। दासी प्रस्तुत है।"

"मुझे यह सोचकर बड़ा आश्चर्य होता है कि यद्यपि मैं इतने दिनों से यहाँ हूँ, परन्तु तुम्हारे पिता जी के दर्शन का सौभाग्य अभी तक नहीं प्राप्त कर सका हूँ।"

"मेरे पिता जी अब इस संसार में नहीं हैं।"

"मैंने आज तक यहाँ किसी अन्य पुरुष को भी नहीं देखा है ?"

रत्नमाला ने बड़े सरल भाव से उत्तर दिया, "देखते कैसे, यहाँ कोई पुरुष रहता ही नहीं है।"

"फिर तुम रहती किसके साथ हो ?"

"आजकल आपके साथ रह रही हूँ।"

"अन्यथा ?"

"अन्यथा अकेली रहती हूँ," रत्नमाला ने उत्तर दिया।

एक प्रश्न कई दिन से सोमेश्वर के मस्तिष्क में घूम रहा था, जिसे वह रत्नमाला से पूछना चाहता था परन्तु पूछ नहीं पाता था। वास्तव में वह अभी तक यह निश्चय नहीं कर पाया था कि उस प्रश्न को कैसे, किन शब्दों में पूछा जाए। जैसे कोई कवि के मन में उठे हुए किसी भाव को विविध शब्द-समूहों में विविध प्रकार से विविध क्रमों एवं शैलियों में बाँधकर अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है वैसा ही सोमेश्वर भी किया करता था। परन्तु उसे स्वयं किसी अभिव्यक्ति से संतोष नहीं होता था। इसी कारण वह अवसर मिलने पर भी इस प्रश्न को वाणी नहीं दे पाता था और उसकी जिज्ञासा अतृप्त रह जाती थी।

परन्तु इस समय वही प्रश्न न जाने कैसे उसके मुख से बिना प्रयास किये निकल गया। उसने कहा, "क्या तुम्हारा विवाह अभी नहीं हुआ है ?" प्रश्न पूछने के पश्चात् उसे स्वयं अत्यधिक संकोच का अनुभव हुआ और उसने अपनी दृष्टि नीचे झुका ली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"विवाह ?" रत्नमाला ने चौंककर कहा। फिर उसने अपनी दृष्टि नीची कर ली और धीमे स्वर में रुक-रुक कर कहा,"'मेरा विवाह'''नहीं हुआ है''' सम्भवतः कभी नहीं होगा'''परन्तु'''परन्तु मैं'''कुमारी नहीं हूँ।"

"एक और रहस्य !" सोमेश्वर ने टिप्पणी की।

"नहीं, इसमें कोई रहस्य नहीं है," रत्नमाला ने कहा। "आपने पहले भी मेरा परिचय पुछा था। परन्तु मैंने नहीं बताया था। सोचती थी कि जब तक आप यहाँ हैं तब तक नहीं बताऊँगी। मुझे संकोच लग रहा था। परन्तु अब आप यहाँ से जा रहे हैं, और मैं न बताऊँ तो भी मेरा परिचय जान ही लेंगे। अतएव आज संकोच नहीं करूँगी, सब बता दूँगी। परन्तु सुनकर आप रोष तो नहीं करेंगे ?"

"नहीं, रत्नमाला, रोष नहीं करूँगा। मेरे लिए तुमसे रुष्ट रहना असम्भव है," सोमेश्वर ने आश्वासन के स्वर में कहा।

"अच्छा, तो पहले मुझे इस भेद को अब तक छिपाये रखने के लिए क्षमा-दान दीजिए।"

"उसकी आवश्यकता नहीं है, रत्नमाला।"

"मुझे है। कहिए क्षमा किया।"

सोमेश्वर ने कहा, "क्षमा किया, क्षमा किया, क्षमा किया। और कहूँ ?"

रत्नमाला की ग्रीवा थोड़ी और झुक गयी, उसका स्वर थोड़ा और धीमा हो गया। उसने कहा, "नहीं, इतना पर्याप्त है। और अब लीजिए, मेरा परिचय सुनिये। मैं जानती हूँ आप प्रसन्न नहीं होंगे। मैं स्वयं प्रसन्न नहीं हूँ। परन्तु विवश हूँ, भाग्य की रेखाओं को मेटने में असमर्थ हूँ। मैं'''मैं'''कुमारी नहीं हूँ। मैं'''मैं वधू हूँ''''''नगर वधू हूँ। बस ?"

और वह शीघ्रतापूर्वक उठकर द्वार की ओर चल दी।

क्षण भर के लिए सोमेश्वर को ऐसा लगा मानों किसी ने उसे पर्वत के शिखर पर से नीचे ढकेल दिया हो और वह गिर रहा हो, गिर रहा हो। परन्तु यह स्थिति केवल क्षण भर रही। फिर उसकी चेतना लौट आयी और उसे लगा मानों उसके पैरों को धरती का ठोस आधार मिल गया हो। रत्नमाला उस समय तक द्वार के निकट पहुँच चुकी थी। सोमेश्वर ने सहानुभूति और आग्रह से भरे स्वर में उसे पुकार कर कहा, "रत्नमाला। एक बात सुनती जाओ, रत्न-माला। तुम्हें मेरी सौगन्ध है।"

रत्नमाला ठिठक कर रुक गयी, घूमी, और धीरे-धीरे पर्यंक के निकट आकर बोली, "कहिये।"

सोमेश्वर ने भरे कंठ से कहा, "मैं तुम्हें विश्वास दिलाना चाहता हूँ, रत्न-माला, कि तुम्हारी इस बात से मेरे लिए कोई अन्तर नहीं हुआ है। तुम जो भी हो, जैसी भी हो, परन्तु मेरे लिए देवी हो। मैं हृदय से तुम्हारा आदर करता हूँ, और सदा करता रहूँगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने अपनी दृष्टि उसके मुख पर गड़ा दी और दाहिना हाथ आगे बढ़ाकर कहा, "मेरा हाथ छूकर कह सकते हैं ?"

सोमेश्वर ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "हाँ, कह सकता हूँ। मैं तुम्हें विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं हृदय से तुम्हारा आदर करता हूँ, और आजीवन करता रहूँगा।"

रत्नमाला ने सन्तोष की साँस लेकर कहा, "मेरे लिए इतना ही बहुत है। मैं सन्तुष्ट हूँ। केवल एक प्रार्थना और करना चाहती हूँ। करूँ ?"

"हाँ-हाँ, बोलो।"

"पूरी होगी ?"

"मैं पहले ही कह चुका हूँ, रत्नमाला, कि मेरे पास ऐसा कुछ नहीं है जो तुम्हारे लिए अदेय हो।"

रत्नमाला ने कहा, "मेरी प्रार्थना यह है कि यहाँ से जाकर आप मुझे भूल न जाएँ। छोड़ न दें। स्वीकार है कभी-कभी आते रहेंगे ?"

सोमेश्वर ने कुछ सोचते हुए कहा, "अवश्य प्रयास करूँगा।"

"प्रयास करेंगे ? केवल प्रयास !" रत्नमाला ने निराशा के स्वर में कहा।

"मनुष्य के वश में इतना ही तो होता है।"

सहसा रत्नमाला के स्वर में परिवर्तन हुआ। उसने कहा, "यह मिथ्या है। मनुष्य के वश में इससे अधिक होता है। प्रमाण चाहते हैं ? मैं दूँगी। आप केवल इतना बता दीजिये कि आप कभी इधर आने की इच्छा करेंगे या नहीं, और यहाँ आने में आपको कष्ट तो नहीं होगा ?"

सोमेश्वर ने किंचित् हतप्रभ होकर कहा, "क्या तुम समझती हो कि मैं कभी यहाँ आने की इच्छा भी नहीं करूँगा ?"

"बस, शेष प्रबन्ध मैं स्वयं कर लूँगी", रत्नमाला ने कहा।

उस समय पूर्व के क्षितिज पर उषा झाँकने लगी थी, और चारण विहग उसकी वंदना के स्वर मुखरित कर रहे थे।

१०

चन्देल साम्राज्य की राजधानी खजुराहो में राज-प्रासाद के निकट स्थित राज्य के सामन्तों तथा उच्च अधिकारियों और श्रेष्ठियों की अनेक हवेलियाँ थीं। इनमें सामन्तों की हवेलियाँ अधिकांश समय सूनी ही पड़ी रहती थीं। जब सामन्तगण विशेष अवसरों पर अथवा कार्यवश राजधानी आते थे तब इनमें चहल-पहल हो जाती थी, अन्यथा प्रत्येक में केवल एक-दो कर्मचारी तथा कुछ अनुचर रहा करते थे जो हवेली की तथा राजधानी में अपने स्वामी के हितों की रक्षा करते थे। यही दशा रामनगर के सामन्त विशालदेव की हवेली की भी थी जहाँ स्वस्थ्य होने के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पश्चात् सोमेश्वर को आना था।

रामनगर की यह हवेली विस्तृत क्षेत्र में फैली हुई तथा नव-निर्मित थी। वास्तव में ये हवेलियाँ अपने-अपने स्वामी की सम्पन्नता तथा महत्ता की द्योतक समझी जाती थीं। अतएव प्रत्येक सामन्त यही प्रयत्न करता था कि उसकी हवेली सौन्दर्य तथा वैभव में किसी से कम न रहे। रामनगर की हवेली के निर्माण में भी इस बात का पूरा ध्यान रखा गया था। उसका क्षेत्र किसी से कम नहीं था, उसका निर्माण खजुराहो के कुशलतम शिल्पियों द्वारा किया गया था, और उसकी सज्जा में कहीं कृपणता नहीं की गयी थी। खजुराहो में विशालदेव की यह हवेली सम्पूर्ण रामनगर के लिए गौरव की वस्तु थी।

उसके पृष्ठ भाग में एक सरोवर स्थित था जो ग्रीष्म में भी नहीं सूखता था। हवेली का सम्पूर्ण क्षेत्र एक ऊँची प्राचीर से घिरा हुआ था। केवल सरोवर की ओर प्राचीर नहीं थी। परन्तु उस दिशा में मुख्य भवन की और अधिक ऊँची दीवार थी जो प्रस्तर-निर्मित तथा पर्याप्त चौड़ी थी। इसमें विशेष आवश्यकता के समय गुप्त मार्ग के रूप में प्रयुक्त होने वाला केवल एक छोटा-सा द्वार था जो बाहर से द्वार प्रतीत नहीं होता था। इसके विपरीत हवेली का सिंह-द्वार बहुत बड़ा और ऊँचा था। परन्तु यह विशालदेव के आने पर ही खुलता था। उसके पार्श्व में एक और अपेक्षाकृत छोटा द्वार था। साधारणतया आवागमन इसी से होता था। इसमें से होकर भीतर प्रवेश करते ही व्यक्ति हवेली के विशाल प्रांगण में पहुँच जाता था जिसके मध्य में भी एक छोटा-सा सरोवर था। इस प्रांगण के तीन ओर अनेक छोटी-छोटी कोठरियाँ थीं। विशालदेव जब खजुराहो आते थे तो उनके सैनिक तथा अनुचर इन्हीं में ठहरते थे। सिंह-द्वार से दाहिनी ओर कोठरियों के स्थान पर हयशाला बनी थी। प्रांगण के चौथी ओर, अर्थात् सिंह-द्वार के ठीक सामने, मुख्य हवेली थी। भूरे रंग के पत्थरों से निर्मित यह भवन वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण था। सामन्त तथा उनके परिवार का खजुराहो में यही 'डेरा' था।

रत्नमाला के यहाँ से अपनी इस हवेली में आकर सोमेश्वर ने अपने आपको एक विचित्र मनःस्थिति में पाया। वह भोजन करने बैठा तो उसे भोजन अच्छा नहीं लगा, कुछ खाने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। वह विश्राम करने लेटा तो उसे लेटना भी अच्छा नहीं लगा, नींद ही नहीं आ रही थी। उसे न जाने क्या हो गया था कि कुछ अच्छा ही नहीं लग रहा था।

वह उठकर खुले वातायन के निकट जा खड़ा हुआ। सामने सरोवर था जिसमें पवन के वेग से अनेक छोटी-छोटी लहरें उठ रही थीं, और प्रत्येक लहर एक सूर्य को अपने अंक में दबाये प्रतीत होती थी। सरोवर के दूसरी ओर अन्य हवेलियाँ थी और उनके उस पार, कुछ दूरी पर, पहाड़ी खड़ी थी। उस पहाड़ी पर वृक्ष नहीं थे, और उसके सम्पूर्ण शरीर पर वस्त्र की भाँति लिपटी हुई कुछ समय पूर्व की हरी घास ग्रीष्म की प्रखर धूप में जलकर भूरी पड़ चुकी थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर को यह नंगी पहाड़ी तनिक भी अच्छी नहीं लगी, सरोवर के उस पार की अन्य हवेलियाँ भी अच्छी नहीं लगीं, सरोवर, उसकी शीतलता, उसकी लहरें, उन लहरों पर बनते-बिगड़ते अगणित सूर्य—कुछ भी अच्छा नहीं लगा। सहसा उसने अनुभव किया कि उसे अपना इस प्रकार खुले वातायन के निकट खड़ा रहना भी अच्छा नहीं लग रहा है। वह उस स्थान से हट आया और पर्यंक के निकट पड़ी पीठिका पर बैठकर सोचने लगा।

परन्तु मन को शान्ति नहीं मिली। उसे सोचना भी अच्छा नहीं लगा, क्योंकि उसके विचार स्पष्ट नहीं थे। उसे बार-बार ऐसा लगता था मानों उसका कुछ खो गया हो जिसे पाने के लिए उसका हृदय व्याकुल था। परन्तु क्या खोया है, यह स्पष्ट नहीं हो पा रहा था।

रत्नमाला की सुधि भी उसे बरबस बार-बार आ रही थी, और जब आती थी तो उसके अन्तस्थल में एक शूल-सा चुभा जाती थी। रत्नमाला उसे अच्छी लगी थी। रत्नमाला का पास बैठना, उसका हँसना-बोलना, उसे अच्छा लगा था। रत्नमाला पहली स्त्री थी जिसके प्रति उसने एक विशेष प्रकार के मोह का, अधिकाधिक निकट होने की एक अदम्य कामना का अनुभव किया था। उसने अनेक बार रत्नमाला को अपने सपनों में देखा था। जब रत्नमाला ने बताया था कि वह नगरवधू है तब सोमेश्वर को अवश्य अच्छा नहीं लगा था, उसकी भावना को एक प्रबल आघात लगा था, उसके हृदय की कामनायें कुम्हला गयीं थी। परन्तु यह स्थिति केवल कुछ क्षण ही रही थी, और विदा के समय उसने रत्न-माला की आँखों में जो आँसू देखे थे उनसे उसका रहा-सहा विषाद भी धुल गया था। उसे रत्नमाला का वह मुख भुलाये नहीं भूलता था। वे बड़ी-बड़ी काली आँखें जिनमें भरी वेदना बार-बार छलक पड़ती थी, वे सूजी-सूजी पलकें, मानों सोमेश्वर की अपनी पुतलियों में अंकित हो गयी थीं। वे म्लान, मौन किन्तु प्रक-म्पित अधर बार-बार उसकी स्मृति में उभर कर उसे व्यथित कर देते थे।

इस प्रकार विलम्ब तक अपने उलझे हुए विचारों में खोये रहने के पश्चात् उसने निश्चय किया कि उसे संध्या को रत्नमाला के पास जाना चाहिए, वहाँ सम्भव है उसे शान्ति मिले। यह स्वीकार करने में उसे अब भी संकोच हो रहा था कि वह रत्नमाला को प्रेम करने लगा है। परन्तु रत्नमाला उससे प्रेम करती है, इसमें उसे संदेह नहीं रह गया था, और युवा हृदय के लिए नारी का प्रेम चुम्बक का आकर्षण, और विजय- वैजयन्ती की महत्ता रखता है।

रत्नमाला के यहाँ जाने का निश्चय कर लेने के पश्चात् उसका मन कुछ स्थिर हुआ, और वह सोचने लगा कि इतने शीघ्र उसे फिर देखकर रत्नमाला कितनी प्रसन्न होगी।

परन्तु इसी बीच रामनगर से एक धावन आ गया। वह सोमेश्वर के लिए उसके पिता का पत्र लाया था।

विशालदेव ने लिखा था कि सोमेश्वर के गम्भीर रूप से घायल होने का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समाचार पाकर उन्हें बड़ी चिन्ता हो गई थी और वे स्वयं खजुराहो आने का विचार कर रहे थे। परन्तु अब यह जानकर उन्हें सन्तोष और प्रसन्नता है कि वह शीघ्रतापूर्वक स्वास्थ्य-लाभ कर रहा है। उन्होंने उसे आशीर्वाद देते हुए आशा व्यक्त की थी कि वह शीघ्र ही पूर्ण स्वस्थ होकर अपनी हवेली में आ जाएगा। अन्त में उन्होंने सोमेश्वर को स्मरण कराया था कि उसका बड़े महाराज से यथा-सम्भव शीघ्र मिलना परमावश्यक है, अतएव उसे स्वस्थ होते ही अविलम्ब उनके चरण स्पर्श करने जाना चाहिए।

सोमेश्वर स्वयं जानता था कि उसके भविष्य पर बड़े महाराज की विशेष कृपा दृष्टि है। इसकी कथा बड़ी पुरानी, उसके जन्म के समय की थी और उसने सर्वप्रथम अपनी माता के मुख से सुनी थी। बाद में विशालदेव ने भी इसकी पुष्टि की थी।

माता ने उसे बताया था कि उसके जन्म के समय विशालदेव रामनगर में नहीं थे। वे महाराजाधिराज धंगदेव के साथ दिग्विजय अभियान पर गये हुए थे। इस अभियान में एक बार अद्भुत पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने महाराज की प्राण रक्षा की थी। महाराजाधिराज धंगदेव स्वयं वीर पुरुष थे और वीरता का आदर करना जानते थे। अतएव उन्होंने विशालदेव को अपना खड्ग पुरस्कार-स्वरूप प्रदान किया और विविध प्रकार से सम्मानित किया। इसके पश्चात खजुराहो लौटते ही जब उन्हें सोमेश्वर के जन्म का समाचार मिला तो उन्होंने विशालदेव को बुलाकर बधाई दी और कहा, "विशालदेव, तुम मेरे भाई से भी अधिक हो। मेरे लिए इस जीवन में तुम्हारे उपकार से उऋण होना असम्भव है। अतएव यह न सोचना कि मैं तुम्हारे किये का बदला देने के लिए ऐसा कह रहा हूँ। परन्तु मेरी बड़ी इच्छा है कि तुम्हारे इस पुत्र के भविष्य-निर्माण में कुछ योग मेरा भी हो। मैं चाहता हूँ कि उचित शिक्षा तथा क्षात्र-धर्म का पालन करने के योग्य बनाकर तुम उसे मेरे पास भेज दो। इसके आगे मैं निर्णय करूँगा। उसका विवाह भी मैं ही करूँगा।"

विशालदेव ने इस आदेश को शिरोधार्य कर ऐसा ही किया था। इसी कारण अभी तक सोमेश्वर का विवाह नहीं हुआ था, उद्यपि उसकी आयु पच्चीस वर्ष के लगभग हो चुकी थी। इसी कारण वह अभी तक खजुराहो अथवा रामनगर में अधिक नहीं रह पाया था। वास्तव में प्रारम्भिक शिक्षा रामनगर प्राप्त करने के पश्चात वह विशेष शिक्षा तथा अनुभव की खोज में देश-विदेश घूमता ही रहा था। उसने धर्म की शिक्षा काशि में प्राप्त की थी और राजनीति की उज्जयिनी में। शस्त्रास्त्र के प्रयोग तथा रणनीति का प्रशिक्षण असे कच्छपघाटवंशी वीर वज्रदमन से प्राप्त हुआ था जो उस समय तक गोपाद्रि में अपनी सत्ता स्थापित कर चुका था और, विशालदेव की ही भाँति, महाराजाधिराज धंगदेव का सामन्त था।

प्रशिक्षण का यह क्रम समाप्त होने के पश्चात् उसे व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करने के उद्देश्य से देश-दर्शन के लिए भेज दिया गया था। इस दीर्घकालीन प्रवास में वह उत्तर, दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम की लगभग सभी महत्त्वपूर्ण राजधानियों में थोड़े-थोड़े दिन रहकर वहाँ के जीवन तथा राजनीति से परिचित हो आया था। उसकी अन्तिम यात्रा सुदूर उत्तर-पश्चिम की ओर हुई थी। धिल्लिका-वर्तमान दिल्ली—तथा स्थानेश्वर रुकता हुआ वह कठिन पर्वतीय मार्ग पार कर कश्मीर जा पहुँचा था। वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य ने उसे मुग्ध कर लिया, अतएव वह श्रीगर में कई मास रहा। परन्तु उस राज्य की राजनीतिक अव्यवस्था तथा सामाजिक अनैतिकता से उसका मन खिन्न हो गया। कश्मीर में उस समय वस्तुतः अनाचार का साम्राज्य था। रानी दिद्दा की निरंकुश प्रणय-लीलायें अपनी पराकाष्ठा पर थीं और अधिकारी वर्ग भ्रष्टाचार में रत था। कश्मीर के सुविख्यात ब्राह्मण शास्त्रों के अध्ययन से विरत होकर राजनीतिक षड्यन्त्रों में संलग्न थे और जो ऐसा नहीं कर सकते थे वे देश छोड़-छोड़ कर भाग रहे थे। इस वातावरण से खिन्न होकर सोमेश्वर ने भी भागने वालों का अनुकरण किया। कश्मीर से चलकर वह फिर टेढ़े-मेढ़ें पहाड़ी मार्ग पार करता हुआ पुष्प-पुर पहुँचा। वहाँ पहुँचकर उसकी सारी खिन्नता दूर हो गयी। वहाँ ब्राह्मणों की शक्ति सर्वोपरि थी और भागवत धर्म का सर्वत्र आदर होता था। वहाँ का ब्राह्मण राजा जयपाल एक कुशल सेनापति तथा प्रजावत्सल शासक था। पुष्प-पुर से प्रसन्नचित्त चलकर सोमेश्वर सिन्धु-प्रदेश में स्थित मुल्तान नगर पहुँचा जहाँ उसकी खिन्नता फिर लौट आयी। मुल्तान इस समय अरब के इस्माइल मुसलमानों के अधीन था, और तत्कालीन शासक शेख हमीद लोदी की धार्मिक असहिष्णुता तथा उसके क्रूर अत्याचारों के कारण वहाँ की भागवत तथा बौद्ध प्रजा अत्यधिक संत्रस्त तथा क्षुब्ध थी। लोदी की धर्मान्धता सोमेश्वर ने अपनी आँखों से देखी, जब भगवान आदित्य का प्रसिद्ध मन्दिर नष्ट किया जा रहा था उस समय सोमेश्वर वहीं खड़ा यह हृदय-विदारक दृश्य देख रहा था।

मुल्तान से सोमेश्वर रामनगर लौट आया था।

उसके रामनगर लौटते ही विशालदेव ने महाराज धंगदेव के पास संदेश भेज दिया था कि सोमेश्वर अब उनकी सेवा में उपस्थित होने के योग्य हो गया है। बड़े महाराज उस समय कालंजर में थे। उन्होंने वहीं से आदेश भेजा कि सोमेश्वर को कृषि-वर्षारम्भ उत्सव के अवसर पर उनके पास खजुराहो भेज दिया जाए। सोमेश्वर को लेकर विशालदेव स्वयं महाराज की सेवा में उपस्थित होना चाहते थे। परन्तु अन्तिम समय में कुछ ऐसे कारण उठ खड़े हुए कि उनके लिए उत्सव के अवसर पर खजुराहो जाना असम्भव हो गया था। सोमेश्वर का पहुँचना आवश्यक था, अतएव उसे अकेले भेज दिया गया था।

परन्तु सोमेश्वर खजुराहो आकर भी महाराज की सेवा में अभी तक नहीं उपस्थित हो पाया था। अतएव विशालदेव का परामर्श सर्वथा उचित था। परिस्थितियों को देखते हुए महाराज की सेवा में अविलम्ब उपस्थित होना उसके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने भविष्य के लिए कितना आवश्यक था, यह सोमेश्वर भी समझता था। और अविलम्ब का अर्थ था उसी दिन संध्या को परन्तु उस दिन संध्या को तो वह रत्नमाला के यहाँ जाने का निश्चय कर चुका था।

सोमेश्वर भयंकर ऊहापोह में पड़ गया। प्रश्न था—क्या कर्तव्य की वेदी पर प्रेम का बलिदान उचित होगा? उसके मस्तिष्क ने कहा, हाँ, उचित होगा, उचित है तभी तो सदा से कर्तव्य की वेदी पर प्रेम का बलिदान होता आया है। परन्तु तभी रत्नमाला की सजल आँखें उसके स्मृति-पटल पर उभर आयीं। उन आँखों में अदम्य आकर्षण था जिसने सोमेश्वर को अपनी ओर खींच लिया। उसने निश्चय किया कि वह महाराज के दर्शन अगले दिन प्रातःकाल मन्दिर में जाकर करेगा।

परन्तु तभी दूसरा प्रश्न उठकर उसके सामने आया—क्या प्रेम की वेदी पर कर्तव्य का बलिदान उचित होगा? उसने बहुत सोचा, परन्तु इस औचित्य को सिद्ध करने वाला कोई तर्क उसके मस्तिष्क में नहीं आया। उसका मन चाहता था, परन्तु उसकी आत्मा इसके औचित्य को स्वीकार नहीं कर पा रही थी।

अन्त में उसने समझौते की शरण ली। मन और मस्तिष्क का, प्रेय और श्रेय का समझौता बड़ा कठिन होता है, परन्तु सोमेश्वर ने बीच का मार्ग खोज ही निकाला। उसने निश्चय किया कि वह रत्नमाला के यहाँ आज संध्या के स्थान पर कल संध्या को जाएगा, और उससे पूर्व प्रातःकाल महाराज के दर्शन कर लेगा, और आज संध्या को कहीं नहीं जाएगा।

११

प्रातःकाल सोमेश्वर महाराज से भेंट करने के उद्देश्य से विश्वनाथ मंदिर के द्वार पर जा पहुँचा।

मंदिर के बाहर चबूतरे पर एक छोटी-मोटी भीड़ एकत्र थी। ये सभी दर्शनार्थी थे। कुछ निश्चिन्त-से बैठे थे, कुछ खड़े थे, कुछ परस्पर बातचीत कर रहे थे, और कुछ आँखें मींचे सम्भवतः शिव-कवच का पाठ कर रहे थे। सभी महाराज के मन्दिर से बाहर निकलने की प्रतीक्षा कर रहे थे। सोमेश्वर भी वहीं खड़ा होकर प्रतीक्षा करने लगा और अपनी दृष्टि इधर-उधर दौड़ाने लगा।

खजुराहो इस समय तक मन्दिरों का नगर बन चुका था। इनमें से कई शिवसागर से उत्तर की ओर उसी चतुष्कोण क्षेत्र में स्थित थे जहाँ सोमेश्वर इस समय खड़ा था। एक कोण पर, शिव-सागर से निकटतम, महाराज यशोवर्मन द्वारा निर्मित लक्ष्मण-मन्दिर था जिसे खजुराहो का गौरव माना जाता था। दूसरे कोण पर, लक्ष्मण-मन्दिर के ठीक पीछे तथा योगिनी-मन्दिर से मिला हुआ माता जगदम्बिका का भव्य मन्दिर स्थित था। इसके समानान्तर, तीसरे कोण पर,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूर्य-मन्दिर था, और चौथे कोण पर, लक्ष्मण-मन्दिर के समानान्तर, इन चारों में नवीनतम विश्वनाथ-मन्दिर का निर्माण किया गया था। बीच के विस्तृत क्षेत्र में और कई मन्दिर थे जो आकार में छोटे होने पर भी कला-वैभव में किसी से कम नहीं थे।

खजुराहो में इस समय शैव मतावलम्बियों की संख्या अधिक थी। स्वयं महाराजाधिराज धंगदेव भी शैव थे। इस कारण नवनिर्मित विश्वनाथ-मन्दिर में सदा अधिक भीड़ रहती थी। जब धंगदेव खजुराहो में होते थे तो यह भीड़ और बढ़ जाती थी। महाराज नित्य प्रातःकाल यहाँ पूजन करने आते थे, इस कारण उनके अनेक दर्शनार्थी भी, सोमेश्वर की भाँति, वहाँ पहुँच जाया करते थे।

विश्वनाथ जी के इस मन्दिर का निर्माण धंगदेव के पिता महाराज यशोवर्मन् के राज्यकाल में उनके महामात्य आचार्य सोमभद्र द्वारा आरम्भ कराया गया था। परन्तु कार्य आरम्भ होने के पश्चात् पहले आचार्य सोमभद्र और फिर महाराज यशोवर्गन् गोलोकवासी हो गये थे। अतएव मन्दिर का निर्माण-कार्य धंगदेव के शासन-काल में ही पूरा हुआ था। धंगदेव ने स्वयं विशेष रुचि लेकर इसे अपने पिता तथा पितामह-तुल्य गुरु की स्मृति के अनुरूप बनाने का प्रयास किया था। इसके परिणामस्वरूप आकार, वैभव अथवा कला की उत्कृष्टता में यह लक्ष्मण-मन्दिर से किसी प्रकार कम नहीं था। इसकी पीठिका अन्य मन्दिरों की अपेक्षा कुछ अधिक ऊँची थी और इसके गर्भ-गृह में स्थापित विश्वनाथ महादेव का लिंग मरकत-मणि-निर्मित था। प्रवेश-द्वार के ठीक सामने उसी चबूतरे पर शंकर-वाहन नंदी का मन्दिर था। इसका धरातल अपेक्षाकृत कम ऊँचा और आकार छोटा था, परन्तु इसमें स्थापित नंदी की मूर्ति विशाल और दर्शनीय थी। उसमें आँखों के स्थान पर दो बड़ी मणियाँ जड़ी थीं जिनकी ज्योति बाहर खड़े व्यक्ति को भी दूर से आकर्षित करती थी।

विश्वनाथ-मन्दिर से थोड़ा हटकर, उसके दक्षिण पार्श्व में माता पार्वती का मन्दिर था। इसकी पीठिका कम ऊँची थी और अलंकरण प्रचुर नहीं था, ऐसा लगता था मानो नगराज के शिखर पर आसीन ध्यान-मग्न शंकर के चरणों में वन्य कुसुमों के दो-चार आभूषण मात्र धारण किये वल्कलवसना जगन्माता उनका मुख निहार रही हों।

पार्वती मन्दिर के निकट पहुँचकर सोमेश्वर की दृष्टि अटक गयी। मन्दिर की सीढ़ियों के निकट आठ-दस व्यक्ति एक वृत्त-सा बनाकर खड़े थे और उनके मध्य में खड़ा एक साधु उनसे कुछ कह रहा था। उनकी चेष्टाओं से स्पष्ट था कि वह इस समय बहुत उत्तेजित है। सोमेश्वर ने अपने भ्रमण-काल में अनेक साधु-महात्माओं के दर्शन किये थे। परन्तु क्रुद्ध अथवा उत्तेजित साधु उसने पहले कभी नहीं देखा था। अतएव उसके मन में यह जानने की बड़ी प्रबल उत्सुकता हुई कि वह साधु कौन है और क्यों इतना अधिक उत्तेजित है। जिज्ञासावश उसके पैर स्वतः उस ओर बढ़ने लगे और वह चबूतरे से उतरने के लिए सीढ़ियों की ओर बढ़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परन्तु सीढ़ियों तक पहुँचने से पूर्व ही उसे अपने पीछे महाराजाधिराज धंगदेव का जय-नाद सुनाई पड़ा। वह ठिठककर वहीं खड़ा हो गया और घूम कर पीछे देखने लगा। महाराज मन्दिर से निकल चुके थे और सीढ़ियाँ उतर कर नीचे चबूतरे पर आ रहे थे। उपस्थित जन-समुदाय उनका अभिवादन कर रहा था। ब्राह्मण दक्षिण भुजा उठाकर आशीर्वचन कह रहे थे, अन्य वर्णों के लोग धरती पर मस्तक टेक कर सम्मान प्रकट कर रहे थे। सोमेश्वर ने भी ऐसा ही किया।

सोमेश्वर ने इससे पूर्व महाराज को लगभग बीस वर्ष पहले देखा था। उस समय वे इतने वृद्ध नहीं हुए थे, और वह स्वयं एक बालक मात्र था। अतएव उस समय की कोई भी स्मृति यदि सोमेश्वर के मस्तिष्क में रही भी होगी तो वह धंगदेव के प्रस्तुत स्वरूप से इतनी भिन्न होगी कि सोमेश्वर स्वयं उस पर विश्वास नहीं कर सकता था।

इस समय महाराज के स्वरूप में यदि रजस् का अंश कहीं शेष था तो उनकी आँखों में जिनका तेज इस वृद्धावस्था में भी पूर्णतया लुप्त नहीं हुआ था। परन्तु यह तेज भी वस्तुतः उनके जीवन की सात्विकता का प्रतीक था। धंगदेव रूप-रंग, वेश-भूषा तथा शील-सौजन्य में पूर्ण सन्त प्रतीत हो रहे थे। उनका शरीर कृशता आ जाने के कारण अब और अधिक लम्बा दिखाई पड़ने लगा था, और आयु इतनी अधिक होने पर भी कटि में विशेष झुकाव नहीं आया था। उनका सहज गौर वर्ण आयु के कारण और अधिक स्वच्छ लगने लगा था। सिर के लम्बे श्वेत केश पीछे ग्रीवा पर लटक रहे थे। दाढ़ी भी लम्बी तथा निष्कलंक श्वेत थी। उनके प्रशस्त ललाट पर रक्त-चंदन का त्रिपुण्ड शोभित था। वक्ष-प्रदेश तथा भुज-मूलों पर भी त्रिपुण्ड अंकित थे। कंठ में रुद्राक्ष की माला पड़ी थी। शरीर का कटि से नीचे का भाग ढीले कौशेय वस्त्र से ढका हुआ था। इस अवसर पर इसके अतिरिक्त वे कुछ नहीं पहनते थे।

धीर-गम्भीर गति से महाराज को सीढ़ियाँ उतरते देख कर सोमेश्वर का सिर अतिश्रद्धा से अपने आप झुक गया।

चबूतरे पर आकर महाराज ने पादुका धारण की, एक अनुचर से लेकर अपना उत्तरीय कंधों पर डाला. और फिर 'ओं नमः शिवाय' कहकर अभिवादन स्वीकार करते हुए चबूतरे की सीढ़ियों की ओर बढ़ना आरम्भ किया। जब वे सोमेश्वर के निकट पहुँचे तो उसने आगे बढ़कर उनके चरणों में मस्तक टेका और पिता का नाम बताकर अपना परिचय दिया।

महाराज ने आशीर्वाद देते हुए उसे बाँह पकड़कर उठाया और प्रसन्नता के स्वर में कहा, "तुम विशालदेव के पुत्र सोमेश्वर हो। रामनगर से कब आये? मैं तो तुम्हारी कई दिन से प्रतीक्षा कर रहा था। क्या मेरा संदेश तुम्हें नहीं मिला था?"

"मिला था, महाराज," सोमेश्वर ने शिर झुकाये हुए कहा, "और मैं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आपके आदेशानुसार उसी दिन आ भी रहा था परन्तु मार्ग में एक दुर्घटना हो जाने के कारण इससे पूर्व सेवा में उपस्थित नहीं हो सका।"

"अच्छा, अच्छा। अब तो पूर्ण स्वस्थ हो न? और तुम्हारे पिता कैसे हैं?" यह कहते हुए महाराज सीढ़ियाँ उतरने लगे।

उनके पीछे-पीछे चलते हुए सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "महाराज के आशीर्वाद से अब मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ। पिताजी भी स्वस्थ हैं।"

महाराज ने कहा, "विशालदेव को मैंने बहुत दिनों से नहीं देखा है। वह क्यों नहीं आये?"

"पिताजी मुझे लेकर आ रहे थे, महाराज," सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "परन्तु कुछ ऐसे कारण आ गये कि उनका रामनगर में रुकना आवश्यक हो गया। वे शीघ्र ही सेवा में उपस्थित होंगे।"

इसी समय दाहिनी ओर से एक स्वर आया, "महाराज का कल्याण हो! यह शरीर भी सेवा में कुछ निवेदन करना चाहता है।"

१२

महाराज सीढ़ियाँ उतर कर मार्ग पर पहुँच चुके थे। यह स्वर सुनकर वे उसी स्थान पर खड़े हो गये।

"महाराज की जय हो!" इस बार अधिक निकट से स्वर आया।

सोमेश्वर उस समय अन्तिम सीढ़ी पर था, उसने वहीं से स्वर की दिशा में दृष्टि उठाकर देखा। पार्वती-मन्दिर की ओर से दक्षिण भुजा उठाकर उपर्युक्त वाक्य उच्चारण करता हुआ वही साधु महाराज की ओर चला आ रहा था जिसे देखकर अभी कुछ समय पूर्व सोमेश्वर के मस्तिष्क में जिज्ञासा उत्पन्न हुई थी। उसका स्वर अब भी उत्तेजित था और वह लम्बे डग रखता हुआ बढ़ा आ रहा था।

सोमेश्वर ने उसे ध्यान से देखा। सुदीर्घ हृष्ट-पुष्ट शरीर घनी काली रोमावलि से आवृत्त था। उसके शिर के लम्बे केश भी काले थे तथा जटा-मुकुट के आकार में बंधे थे, एक गाँठ सिर पर थी और एक-एक दोनों कानों के ऊपर। उसकी दाढ़ी काली तथा घनी थी, और उसके छोर पर भी एक गांठ बंधी हुई थी उसने मटमैले वर्ण का एक कटिवस्त्र मात्र धारण कर रखा था। उसके वामकर में कमंडलु था और दक्षिण में दंड। पैर नंगे और फटे हुए थे। संक्षेप में, आयु बहुत अधिक न होने पर भी उसका व्यक्तित्व प्रभावपूर्ण था।

महाराज के निकट आकर वह खड़ा हो गया और बोला, "महाराज, उत्तर, दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम के अनेक राज्यों में भटक कर यह शरीर अब आपके पास आया है। इसकी एक इच्छा कहीं पूर्ण नहीं हुई है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धंगदेव ने विनम्र स्वर में कहा, "महात्मन् मुझे आदेश दें। मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?"

साधु ने कहा, "सेवा की आवश्यकता इस शरीर को नहीं है, महाराज। यह तो माध्यम मात्र है। सेवा की आवश्यकता उसे है जो मनुष्य मात्र को सेवा करने की शक्ति प्रदान करता है। उसी की प्रेरणा से उसका यह दासानुदास देश-देश भ्रमण करता फिर रहा है। परन्तु न जाने उसकी इच्छा क्या है। उसने जिन्हें शक्तिसान बनाया है उन्हें सद्बुद्धि नहीं प्रदान की है, और इस अकिंचन को अपनी इच्छा का माध्यम बनाया है। विचित्र है उसकी लीला !"

धंगदेव मौन गम्भीर दृष्टि से साधु की ओर देखते रहे, मानों उसके कुछ और कहने की प्रतीक्षा कर रहे हों।

उसने फिर कहना आरम्भ किया, "वाक्पति मुंज की ख्याति सुनकर महाकाल की नगरी गया था। परन्तु परमार-शिरोमणि अपने वैभव, राज्य और वाक्पतित्व की रक्षा में अत्यधिक व्यस्त हैं। उन्हें अन्य किसी कार्य के लिए अवकाश नहीं है। त्रिपुरी के लक्ष्मणराज शिव के भक्त कहे जाते हैं। परन्तु क्या 'शिवोऽहम्' का उच्चारण मात्र कर लेने से कोई शिव का भक्त हो जाता है ? इस पवित्र मंत्र के उच्चारण का उचित अधिकारी वही है जिसने मन के मन्दिर में शिव-तत्व की स्थापना करके स्वत्व का विसर्जन कर दिया हो। और कान्यकुब्ज ! यह शरीर वहाँ भी गया। परन्तु प्रतिहारों का कान्यकुब्ज आज विलास के रसातल में जा पड़ा है; वह इच्छा करे तो भी सहायता नहीं कर सकता। गाथा बहुत लम्बी है, महाराज। सुनकर आपको भी दुःख होगा। जिधर दृष्टि जाती है उधर अंधकार, केवल अंधकार मिलता है। और उधर भागवत् धर्म संकट में है, उसके उद्धार का मार्ग निकलना ही चाहिए। परन्तु मार्ग निकले तो कैसे ? हमारे समाज की मनःस्थिति ही विचित्र हो गयी है। अब लोगों की आस्था तर्क और विवेक में नहीं रह गयी है। वे अपनी विगत विभुता की परम्पराओं को भूल गये हैं। वे भौतिकता में लिप्त हैं, और अंधविश्वास को ही धर्म समझने लगे हैं। वे सो रहे हैं, महाराज, और स्वप्न को सत्य मानने लगे हैं। परन्तु उन्हें जगाये कौन ? वासना में लिप्त प्राणियों के अन्तर में ज्ञान का प्रकाश कैसे हो ? पंकिल जल में कहीं सूर्य प्रतिबिम्बित होता है ?"

धंगदेव ने फिर विनम्र स्वर में कहा, "महात्मन अधिक स्पष्ट होकर अपनी समस्या बताने की कृपा करें। मैं अभी आपका तात्पर्य नहीं समझ पाया हूँ।"

साधु ने कहा, "समस्या बताने से पूर्व परिचय देना आवश्यक है, महाराज, क्योंकि समस्या परिचय के साथ जुड़ी हुई है। वैसे तो यह शरीर उस अगम-अगोचर का दासानुदास मात्र है जो सर्व-शक्तिमान, स्वयंभू तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि का स्रष्टा और नियामक है, परन्तु परिचित जनों द्वारा इसे शिवानंद कहकर सम्बोधित किया जाता है। कुछ समय पूर्व यह तीर्थों तथा धर्म स्थानों में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर्यटन करता हुआ सिन्धु-प्रदेश के मुल्तान नगर जा पहुँचा था। वहाँ भगवान आदित्य का विख्यात मन्दिर था जिसका बड़ा माहात्म्य था। देश के सुदूर भागों से धर्मयात्री उस विलक्षण देव प्रतिमा के दर्शन करने जाते थे। उसकी आय से राज्य का कोष भी सम्पन्न रहता था। अरब के म्लेच्छों ने जो इस समय वहाँ के शासक हैं देवप्रतिमा को भ्रष्ट और देवालय को नष्ट कर दिया है।"

"यह मैंने भी सुना है," धंगदेव ने कहा।

"आदित्य-मन्दिर अभी नष्ट किया गया है, महाराज, परन्तु म्लेच्छों का यह ध्वंस-कार्य वास्तव में कई वर्ष पूर्व आरम्भ हो चुका था। परन्तु यदि म्लेच्छों की असहिष्णुता अनुचित है तो हमारे अपने सहधर्मियों की कायरता उससे कहीं अधिक अनुचित तथा निन्दनीय है। म्लेच्छ अन्ततः म्लेच्छ ही हैं, परन्तु उन भागवत मतावलम्बियों को क्या कहा जाए जो खड़े-खड़े अपने देवताओं का अपमान देखते रहते हैं और प्राण-भय से उंगली तक नहीं उठाते? और उन बौद्धों को क्या कहा जाए जो ध्वस्त देवालयों को देख-देखकर प्रसन्न होते हैं और कहते हैं, 'देखो, अपने सर्वशक्तिमान ब्रह्म की शक्ति देखो। जो स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर पा रहा है वह तुम्हारी क्या करेगा?'"

धंगदेव की भृकुटी तन गयी। उन्होंने कहा, "इसी कारण तो विदेशियों तथा विधर्मियों को हमारी ओर आँख उठाने का साहस होता है।"

शिवानंद ने कहा, "स्थिति बड़ी चिन्तनीय है, महाराज। इस शरीर ने सिन्धु-प्रदेश भर में घूम-घूमकर देखा है। वहाँ भागवत धर्म कराह रहा है, अन्तिम साँसें ले रहा है। ये म्लेच्छ जो अपने को मुसलमान कहते हैं हमारे धर्म का उन्मूलन कर रहे हैं, और हमारे अपने भाई लोभवश उनकी सहायता कर रहे हैं। ये म्लेच्छ अपने साथ अरब से एक भी स्त्री नहीं लाये थे। अनेक भागवतों ने स्वेच्छा से उन्हें अपनी कन्यायें दीं। परन्तु म्लेच्छ इतने से संतुष्ट नहीं हुए। उनकी धर्मान्धता ने अब हमारे देवालयों पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया है। यदि यही स्थिति रही तो इस पवित्र भारत-भूमि से भागवत धर्म का लोप हो जायगा।"

"स्थिति वास्तव में बड़ी चिन्तनीय है," धंगदेव ने कहा।

"यही समस्या है, महाराज! इसी कारण यह शरीर चारों ओर व्याकुल घूम रहा है। देश को आज एक चन्द्रगुप्त की आवश्यकता है। सिन्धु प्रदेश पद-दलित हो चुका है, और पश्चिमोत्तर सीमा पर कुभा की लहरें आज फिर व्यथित हैं। गांधारवासी, जिन्होंने वीरतापूर्वक यवनों, पारसीकों, शकों, कुशाणों तथा हूणों के आघात सहे हैं, आज अत्यधिक आतंकित हैं। पश्चिम में उनकी सीमा के पार तुरुष्क आततायी एकत्र हो रहे हैं। जिस दिन उनका आक्रमण होगा उस दिन गांधारवासियों का धर्म, उनका जीवन, कुछ भी सुरक्षित नहीं रहेगा। उनके मंदिर-ध्वस्त होंगे, उनकी संस्कृति नष्ट होगी, उनकी ललनायें बर्बर, तुरुष्कों की अंकशायिनी बनेंगी। और फिर यह बाढ़ गांधार में नहीं रुकेगी। वहां से पूर्व

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की ओर बढ़ेगी, सम्पूर्ण आर्यावर्त्त आक्रान्त होगा।"

शिवानंद की उत्तेजना प्रत्येक वाक्य के साथ बढ़ते-बढ़ते अब अपने चरम-बिन्दु पर पहुँच गयी थी। उसका स्वर इतना ऊँचा उठ गया था मानों वह सहस्रों की भीड़ को सम्बोधित कर रहा हो। महाराज उसका प्रत्येक शब्द बड़े ध्यान से सुन रहे थे, और उनके मुख पर क्षोभ के स्पष्ट चिह्न प्रकट होने लगे थे। परन्तु वे यथासम्भव उसे नियन्त्रित रखने का प्रयत्न कर रहे थे। अतएव शिवानन्द के रुकते ही उन्होंने संयत किन्तु विश्वास-पूर्ण स्वर में कहा, "ऐसा नहीं होगा, महात्मन्। आर्यावर्त पर इससे पूर्व भी प्रहार हो चुके हैं। परन्तु वह आततायी का दमन करना, प्रहार का प्रतिकार करना जानता है। वह कभी पद-दलित नहीं होगा।"

"होगा, इस बार वह अवश्य पददलित होगा," शिवानंद ने शाप-सा देते हुए कहा। "इस बार लक्षण ऐसे ही हैं, महाराज। आर्यावर्त्त की जनता उदासीन है। उसे आनेवाली विपत्ति का अभास भी नहीं है। और शासक-वर्ग विलासी और विग्रहशील हो गया है। देश में वीरता का अभाव नहीं है, परन्तु आन्तरिक युद्धों में उसका अपव्यय किया जा रहा है। हमारे शासक सुदूर उठ रही बर्बरता की इस आँधी के प्रति जागरूक नहीं हैं, और होना भी नहीं चाहते हैं। और दूसरी ओर तुरुष्क अदम्य बर्बर हैं।"

"बर्बर हैं?" धंगदेव ने दुहराया।

"हाँ, महाराज। तुरुष्क अदम्य बर्बर हैं। उनके देश में गृह का प्रधान ब्राह्मण अभ्यागत का पाद-प्रक्षालन नहीं करता और सेवकगण उसे आसन नहीं देते हैं। ऐसे मनुष्यों से तर्क नहीं किया जा सकता, वे केवल शक्ति की भाषा समझते हैं।"

धंगदेव ने कहा, "तो उन्हे इसी भाषा में समझाया जाएगा।"

"कौन समझाएगा, महाराज? कौन समझाएगा? यही तो समस्या है। हमारे वीरों की असि-धार कुण्ठित नहीं हुई है, परन्तु उनका देश-प्रेम अत्यधिक संकुचित हो गया है। हमारे शासकों को अपने व्यसनों और अपनी प्रतिस्पर्धाओं से अवकाश नहीं है। अभी तक केवल पुष्पपुर के राजा जयपाल सहमत हुए हैं, और सो भी सम्भवत: इसलिए कि उनका राज्य सीमा पर स्थित है और तुरुष्कों के प्रहार देख चुका है। शेष सभी यह समझते हैं कि तुरुष्कों का देश बहुत दूर है, अतएव वे कभी यहाँ आ ही नहीं सकते। वे यह क्यों नहीं सोचते कि अलक्षेन्द्र का देश उससे भी दूर था?"

धंगदेव ने कहा, "आपके कथन में तथ्य है, हमारी यह अदूरदर्शिता हमें बहुत मँहगी पड़ेगी। परन्तु इस सम्बन्ध में आपने और क्या सोचा है?"

शिवानंद ने उत्तर दिया, "हमारे समक्ष केवल एक उपाय है, महाराज! हमें सम्मिलित शक्ति से, एक होकर इस विपत्ति का सामना करना चाहिए। हमें तुरुष्कों को सीमा पर ही रोक देना चाहिए। हमें इस कार्य में जयपाल की सहायता करनी चाहिए।"

"मैं आपसे पूर्णतया सहमत हूँ। मैं समझता हूँ हमें स्वयं तुरुष्क देश पर आक्र-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मण करके आततायियों को सिर उठाने से पूर्व ही कुचल देना चाहिए। परन्तु यह सम्भव कैसे होगा?"

शिवानन्द ने कहा, "इसीलिए तो यह शरीर इस समय आपके समक्ष प्रस्तुत हुआ है। देश को और धर्म को एक नेता की आवश्यकता है। महाराज के द्वारा उसकी पूर्ति हो सकती है।"

"मैं?" धंगदेव ने विस्मित होकर कहा, "इस आयु में?"

"महाराज की आयु इस महान कार्य में वरदान सिद्ध होगी। इसी के आधार पर हम अन्य राज्यों का सहयोग प्राप्त कर सकेंगे। आपके लिए युद्ध क्षेत्र में जाने की आवश्यकता नहीं होगी, इसके लिए और लोग हैं। सैनिकों का अभाव नहीं है, सेनापति भी अनेक मिल जाएँगे। आवश्यकता केवल नेता की है, एक ऐसे व्यक्तित्व की जो इन सब को एकता के सूत्र में बाँधकर दिशा प्रदान कर सके।"

धंगदेव ने कहा, "परन्तु अब मेरे किये यह भी नहीं होगा। मैं राज्य से संन्यस्त हो चुका हूँ।"

"राज्य से ही संन्यस्त हुए हैं न, देश और धर्म से तो नहीं हुए हैं? इस शरीर को देखिये, महाराज। यह संसार से संन्यस्त हो चुका था, परन्तु आज दिशा-दिशा में व्याकुल डोल रहा है। क्या स्वेच्छा से? नहीं, महाराज। मनुष्य कार्यों का कर्त्ता मात्र हो सकता है, उनका कारण नहीं, और कर्त्ता होने की शक्ति भी वही प्रदान करता है जो स्वयं समस्त कार्यों का कारण है। उसकी इच्छा से सब कुछ सम्भव है, उसके बिना कुछ नहीं हो सकता। अतएव मेरा अनुरोध है कि आप यह कार्य हाथ में ले लें, फिर यदि उसकी इच्छा होगी तो वह आपको शक्ति और सफलता भी प्रदान करेगा।"

महाराज ने कहा, "मैं इस कार्य के लिए युवराज को अधिक उपयुक्त समझता हूँ। युवराज शासन चला रहे हैं और सब प्रकार से समर्थ हैं। महामंत्री प्रभास का मार्ग-दर्शन उन्हें प्राप्त ही है, अतएव कोई कठिनाई नहीं होगी। मैं आज ही उनसे इस सम्बन्ध में चर्चा करूँगा।"

सिर हिलाकर इस प्रस्ताव से असहमति व्यक्त करते हुए शिवानन्द ने कहा, "युवराज गंडदेव निस्संदेह सब प्रकार से समर्थ हैं, और इस कार्य में बहुत सहायक सिद्ध होंगे। परन्तु वे महाराज का स्थान नहीं ले सकते। यह सत्य है कि उनकी भुजाओं में अधिक शक्ति है। परन्तु आपके मस्तक पर यश का चिह्न है, महाराज आपका आदर अरि राज्य भी करते हैं। यदि आप नेतृत्व स्वीकार करलें तो हमारी बात सभी राजधानियों में अधिक ध्यान से सुनी जाएगी और हमें अधिक सहयोग प्राप्त हो सकेगा।"

धंगदेव ने कोई उत्तर नहीं दिया। उन्हें अनिश्चित तथा विचारमग्न देखकर शिवानंद ने ही फिर कहा, "स्वर्ग और अपवर्ग हमारे जीवन के समान आदर्श हैं, महाराज! ये हमारी संस्कृति के दो नेत्र हैं। एक को बन्द न करें। एक हाथ भगवान शंकर के चरणों में रखें, दूसरे से अपने लौकिक कर्तव्य का पालन करें। यह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कार्य भी तो भगवान का ही है।"

धंगदेव अब भी विचारमग्न थे, कुछ समय पश्चात् धीमे स्वर में बोले, "इस सम्बन्ध में विचार और परामर्श करूँगा। परन्तु इतना निश्चित है कि यह कार्य नितान्त आवश्यक है। इसे होना ही चाहिए, और भगवान शंकर की कृपा से यह अवश्य होगा।"

प्रसन्नता से शिवानंद की मुद्रा विकसित हो गयी। उसने कहा, "महाराज का कल्याण हो। यह शरीर अब चला, इसका कार्य पूरा हो गया।"

"परन्तु आप फिर दर्शन नहीं देंगे क्या?" धंगदेव ने पूछा।

"खजुराहो में रहा तो अवश्य फिर मिलूँगा। परन्तु अब यहाँ करने को कुछ शेष नहीं रह गया है, अतएव जाने का विचार कर रहा हूँ। देखिये, जैसी हरि की इच्छा हो।"

यह कहकर महाराज को आशीर्वचन कहता हुआ शिवानंद नदी की ओर चल दिया। महाराज तथा उनके पीछे-पीछे सोमेश्वर और उनके अनुचरगण भी अपने मार्ग पर अग्रसर हुए। महाराज अब भी ध्यानमग्न थे।

कुछ दूर तक इसी प्रकार मौन चलते रहने के पश्चात् धंगदेव ने सहसा पीछे मुड़कर देखा और कहा, "सोमेश्वर, तुमने इस साधु की बातें सुनीं?"

"सुनीं, महाराज," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"इस सम्बन्ध में तुम्हारा क्या विचार है?"

सोमेश्वर ने कहा, "महात्मा ठीक ही कहते हैं, महाराज। तुरुष्कों के आक्रमण की आशंका निराधार नहीं है। उनकी धर्मान्धता के वर्णन में भी महात्मा ने अतिशयोक्ति का प्रयोग नहीं किया है। मैंने यह सब अपनी आँखों से देखा है।"

"अपनी आँखों से? कब?"

"मैं अभी कश्मीर, गांधार तथा मुल्तान की यात्रा करके लौटा हूँ, महाराज। जिस समय भगवान आदित्य का मन्दिर नष्ट किया जा रहा था तब मैं मुल्तान में ही था।"

"तुम अभी उस क्षेत्र की यात्रा करके लौटे हो! यह बहुत अच्छा है। तुम हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगे। कल प्रासाद में मेरे पास आना, तब और बातें होंगी। तब तक सम्भव है मैं भी कुछ निश्चय कर लूँ। प्रातःकाल ही आ जाना। मैं इस समय तक पूजन समाप्त करके प्रासाद लौट जाता हूँ।"

"जो आज्ञा," कह कर सोमेश्वर ने चरण स्पर्श किये।

महाराज "ओं नमः शिवाय" का जाप करते हुए प्रासाद की ओर चल दिये। पूजन के लिए उनका पैदल ही आने-जाने का नियम था।

अपनी हवेली की ओर जाते हुए सोमेश्वर बहुत प्रसन्न था। उसने अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया था, और महाराज के साथ हुई अपनी इस भेंट से वह पूर्णतया संतुष्ट था। तभी सहसा उसे रत्नमाला की सुधि आ गयी। परन्तु इससे उसकी प्रसन्नता का अन्त नहीं हुआ। इसके विपरीत इस समय रत्नमाला की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुधि आने के कारण उसकी प्रसन्ना में और वृद्धि हुई। रत्नमाला मानों एक मधुर स्वप्न थी जिसकी सुधि बार-बार उसे पुलकित कर रही थी। हाँ, यह सोचकर उसे अपने ऊपर विस्मय अवश्य होता था कि आज प्रातःकाल से अब तक, अर्थात् इस से पूर्व उसे रत्नमाला की सुधि एक बार भी नहीं आयी थी।

सोमेश्वर ने मन ही मन अपना यह निश्चय दुहराया कि वह आज संध्या को रत्नमाला के यहाँ अवश्य जाएगा। महाराज से मिल लेने के पश्चात् अब उसके सामने कोई कठिनाई भी नहीं रह गयी थी।

हवेली में आकर उसने फिर भली प्रकार स्नान किया और इस प्रकार स्वच्छ तथा स्वस्थ होने के पश्चात् भोजन किया। आज उसे भोजन अच्छा लगा।

भोजन के पश्चात् विश्राम करने के उद्देश्य से वह पर्यंक पर आ लेटा। परन्तु उसे नींद नहीं आयी। मस्तिष्क में अनेक विचार उठते रहे, और उन सब का सम्बन्ध रत्नमाला से था।

तभी उसे महामंत्री प्रभास का आदेश प्राप्त हुआ। महामंत्री ने उसे उसी दिन संध्या समय अपने कार्यालय में बुलाया था।

१३

सोमेश्वर समय से कुछ पूर्व ही महामंत्री के कार्यालय में पहुँच गया। वह यहाँ से यथासम्भव शीघ्र मुक्त होकर रत्नमाला के यहाँ जाना चाहता था।

कार्यालय के बाहर ही एक कर्मचारी ने उसका स्वागत किया और मन्तव्य जानकर उसे अतिथि-कक्ष में ले गया। सोमेश्वर को वहाँ उचित आसन देकर वह स्वयं एक अन्तरंग-कक्ष में चला गया। यहाँ से कुछ समय पश्चात् लौटकर उसने सोमेश्वर से कहा, "महामंत्री जी अभी एक अत्यावश्यक मंत्रणा में व्यस्त हैं। अवकाश पाते ही आपसे भेंट करेंगे। आप यहाँ विराजने की कृपा करें।" यह कहकर वह चला गया, और सोमेश्वर उस अतिथि-कक्ष में अकेला रह गया।

कक्ष सुविस्तृत तथा सुरुचिपूर्ण ढंग से अलंकृत था। उसके मध्य भाग में वृत्ताकार अनेक काष्ठ-पीठिकायें पड़ी थीं जिन पर मृग-चर्म के आसन बिछे हुए ने। इन्हीं में से एक पर सोमेश्वर बैठा था। शेष रिक्त थीं। इस वृत्त के केन्द्र-भाग में तथा उससे बाहर इधर-उधर उपयुक्त स्थानों में खजुराहो के कुशल शिल्पियों द्वारा निर्मित प्रस्तर-प्रतिमायें रखी थीं, परन्तु इनकी संख्या बहुत अधिक नहीं थी।

अपने आपको इस प्रकार अकेला पाकर सोमेश्वर का मन अनायास रत्न-माला के पास जा पहुँचा और उसकी कल्पना अपने ताने-बाने बुनने लगी। उसकी पलकें अपने आप झुक गयीं, वह जागरण के रंगीन स्वप्नों में खो गया,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और न जाने कितने काल तक इसी प्रकार खोया रहा। इस बीच किसी ने उसके स्वप्नों को भंग नहीं किया। वह कर्मचारी भी लौटकर नहीं आया।

अन्त में, जब उसके इन विचारों की शृंखला अपने आप टूटी और उसने आँखें खोलकर अपने चारों ओर देखा, तो दिन का प्रकाश उसे पहले से भिन्न लगा। ग्रीष्म की संध्या धरती पर देर से उतरती है, परन्तु उसका पूर्वाभास होने लगा था।

सोमेश्वर उठकर खड़ा हो गया। वह प्रतीक्षा करते-करते थक गया था। परन्तु अन्य कोई उपाय भी नहीं था। उसे प्रतीक्षा करनी थी, और न जाने और कितने समय तक उसका अन्त न हो। अतएव समय काटने के लिए वह कक्ष में घूम-घूम कर इधर-उधर रखी प्रतिमाओं का निरीक्षण करने लगा।

अपने शिशु को स्तन-पान कराती हुई नारी की एक कलापूर्ण मूर्ति उसे विशेष आकर्षक लगी। शिशु एक हाथ से माता के उस स्तन को पकड़े था जिससे वह पय-पान कर रहा था। उसका दूसरा हाथ, सम्भवतः दूसरे स्तन की खोज में, फैला हुआ था। सोमेश्वर को यह सोचकर हँसी आ गयी कि खो जाने की आशंका से अपनी वस्तु को पकड़ कर रखना और थोड़ा पाकर अधिक के लिए प्रयास करना शिशु भी जानते हैं।

उस कलाकृति की सर्वाधिक आकर्षक विशेषता माता के मुख पर अंकित भाव-भंगिमा थी। उसकी ग्रीवा शिशु की ओर झुकी हुई थी, उसके नयन अध-मुँदी पलकों के पीछे से शिशु-मुख को निहार रहे थे। उसके अधर स्मित मुद्रा में किंचित् प्रलम्बित थे। उसके अंग प्रत्यंग से वात्सल्य और संतोष की अविस्मरणीय भावना व्यक्त हो रही थी, मानो प्रस्तर की वह नारी, अपनी मूक-भाषा में, पुकार-पुकार कर कह रही हो—समस्त लोक मेरी उपलब्धि को देखे। मेरा जीवन सार्थक हुआ है, मैं अमरत्व के सोपान पर खड़ी हूँ। मेरी बाँहों में मेरा अंश, मेरा यह प्रतिरूप है, जिसके माध्यम से मैं अमर हुई हूँ। मैंने पहले इसे जन्म दिया, और अब जीवन दे रही हूँ, विकास दे रही हूँ, शक्ति दे रही हूँ। कौन है संसार में जो आज मेरे जितना सुखी हो।

विलम्ब तक इस अनुपम कलाकृति को देखते रहने के पश्चात् सोमेश्वर ने अपनी दृष्टि दूसरी ओर फेरी। उसके निकट ही हरिहर की एक देव-प्रतिमा रखी हुई थी। शिव तथा विष्णु की एकता प्रदर्शित करने वाले हरिहर के इस संयुक्त स्वरूप की कल्पना शैवों तथा वैष्णवों के पारस्परिक विवादों को दूर कर उनके बीच ऐक्य स्थापित करने के उद्देश्य से की गयी थी। मूर्ति में वाम भाग विष्णु का तथा दक्षिण शिव का था। इस चतुर्भुजी मूर्ति का एक कर अभय मुद्रा में था तथा एक कटि-हस्त मुद्रा में, शेष दो में शंख तथा चक्र शोभा पा रहे थे। दक्षिण पार्श्व के दोनों कर भुजंग वलय से अलंकृत थे, वाम करों में स्वर्ण-वलय सुशोभित थे। मुख के भी दो भाग थे, एक शक्ति का प्रतीक था और दूसरा शान्ति का।

कक्ष में और भी कई मूर्तियाँ थीं, परन्तु सोमेश्वर ने उनकी ओर अधिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ध्यान नहीं दिया। उसका मन उचाट हो चला था, और सहसा उसने अनुभव किया कि उसे प्यास भी लग रही थी।

वह फिर आकर अपने स्थान पर बैठ गया। बाहर संध्या हो आयी थी, और कक्ष के भीतर कोनों से अन्धकार झाँकने लगा था। वह सोचने लगा—अवश्य ही महामंत्री को स्मरण नहीं रहा होगा। अन्यथा क्या इतने समय से उन्हें अवकाश ही नहीं मिला होगा ? व्यस्त पुरुष ठहरे, स्मरण ही नहीं रहा होगा। सम्भव है उठकर कहीं चले भी गये हों।

इसी समय एक सेवक कक्ष में आया। वह थाल लिए था जिसमें कई जलते हुए दीपक रखे थे। उसने पहले कक्ष के चारों कोनों में एक-एक दीपक रखा। फिर वह उस चतुर्भुज दीपाधार की ओर बढा जो कक्ष के मध्य में प्रस्तर-प्रतिमा के निकट रखा था। इस प्रक्रिया में जब वह पीठिकाओं के निकट से होकर निकला तो सोमेश्वर ने किंचित् संकोचपूर्वक कहा, "मैं थोड़ा जल पीना चाहता हूँ।"

"अभी व्यवस्था करता हूँ।" यह कहते हुए उसने मध्य के दीपाधार पर दीपक रखे और फिर शीघ्रतापूर्वक कक्ष से बाहर चला गया। परन्तु इसके कुछ ही क्षण पश्चात् एक दूसरा सेवक जल लेकर आ उपस्थित हुआ। सोमेश्वर ने जल पीकर पात्र उसे देते हुए धीमे स्वर में कहा, "मैं महामंत्री जी के दर्शन करना चाहता था।"

"क्या आपने सूचना भेज दी है ?"

"हाँ सूचना भेजे बहुत विलम्ब हो गया।"

"तो आप यहीं विराजें। महामंत्री जी अवकाश होते ही स्वयं आपको बुला लेंगे।"

सेवक को चलने के लिए उद्यत देखकर सोमेश्वर ने फिर अत्यन्त धीमे स्थर में कहा, "मुझे तो लगता है उन्हें स्मरण नहीं रहा है।"

"यह असम्भव है। वे कभी कुछ नहीं भूलते।"

यह कहकर वह सेवक भी चला गया और सोमेश्वर फिर उस विस्तृत अतिथि-कक्ष में अकेला रह गया। एकान्त पाकर मनुष्य स्वभावतः अन्तर्मुखी हो जाता है। सोमेश्वर ने भी फिर सोचना आरम्भ किया। यदि वह कवि होता तो स्वभावतः शाश्वत मातृत्व की प्रतीक उस नारी-मूर्ति को विषय बनाकर छन्द-रचना का प्रयास करता। परन्तु वह एक युवा प्रेमी मात्र था जो अभी स्वयं अपने प्रेम को पहचान नहीं पाया था। अतएव सबसे पहले उसके मस्तिष्क में रत्नमाला आयी। परन्तु रत्नमाला के सम्बन्ध में सोचने को उसके पास अधिक कुछ था ही नहीं। इसके अतिरिक्त उस समय उसे रत्नमाला अपने से बहुत दूर और सर्वथा अप्राप्य प्रतीत हो रही थी। उसकी अपेक्षा महामन्त्री अधिक निकट लगे। अतएव उसने महामन्त्री के सम्बन्ध में सोचना आरम्भ किया।

सोमेश्वर इससे पूर्व कभी महामन्त्री से नहीं मिला था, परन्तु वह उनकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ख्याति से भली प्रकार परिचित था। उत्तर-पश्चिम में श्रीनगर से दक्षिण-पूर्व में श्रीपुर तक उसने महामंत्री प्रभास का नाम आदर के साथ लिया जाता हुआ सुना था। शक्ति और तपस्या के केन्द्र अक्षयपाद गौतम की वंश-परम्परा में उत्पन्न महामंत्री प्रभास सुविख्यात धर्मध्वज और अनेक आर्ष गुणों से परिपूर्ण थे। वे निगूढ़ राजनीति के नियमन में जितने दक्ष थे उतने ही दर्शन की जटिलतायें सुलझाने में भी पारंगत थे। उनकी गणना न्याय-दर्शन के प्रमुख विचारकों में की जाती थी। उनकी यह ख्याति अनेक विद्या-व्यसनी ब्राह्मणों तथा ज्ञान के जिज्ञासुओं को खजुराहो खींच लाती थी।

सोमेश्वर ने सोचा, सम्भवत: ऐसे ही कुछ व्यक्ति इस समय भी महामंत्री के पास बैठे होंगे। सम्भव है ये विद्वान मगध अथवा तक्षशिला अथवा अन्य किसी दूरस्थ देश से आये हों। महामंत्री उनके साथ दार्शनिक चर्चाओं में निमग्न होंगे। उन्हें ध्यान भी नहीं रहा होगा कि कोई अपराह्न से अतिथि-कक्ष में बैठा उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। परन्तु उन्होंने उसे बैठा क्यों रखा है? यदि वे इतने व्यस्त थे तो उसे फिर कभी आने के लिए कहलाकर विदा भी तो कर सकते थे। परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। क्यों नहीं किया? कुछ कारण अवश्य होगा। सम्भव है उन्हें उससे कोई आवश्यक कार्य हो। परन्तु उन्हें—चन्देल साम्राज्य के महामंत्री को—उससे भला क्या आवश्यक कार्य हो सकता है? वे तो उसे जानते भी नहीं होंगे। परन्तु यदि जानते नहीं, यदि कोई आवश्यक कार्य नहीं हो सकता, तो उन्होंने आज उसे बुलाया क्यों था?

इन्हीं विचारों में उलझा हुआ वह बैठा था कि एक व्यक्ति ने फिर कक्ष में प्रवेश किया। सोमेश्वर ने उसे तुरन्त पहचान लिया। यह वही कर्मचारी था जो उसे यहाँ बैठाकर स्वयं अन्तर्ध्यान हो गया था।

कर्मचारी ने सोमेश्वर के निकट आकर कहा, "महामंत्री जी ने आपको स्मरण किया है।"

"धन्य भाग्य!" सोमेश्वर ने उठते हुए किंचित तीखे स्वर में कहा। फिर वह कर्मचारी के पीछे चलता हुआ अतिथि-कक्ष से बाहर निकल कर एक दीर्घा में पहुंचा। उसे पार करके ये लोग उसके छोर पर स्थित एक अन्य कक्ष में घुसे। उसके भीतर पहुँचकर कर्मचारी खड़ा हो गया और एक द्वार की ओर संकेत करके बोला, "यही द्वार है। प्रवेश कीजिये। महामंत्री जी आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

सोमेश्वर ने अपने चारों ओर एक संक्षिप्त दृष्टि डाल कर महामंत्री के कार्यालय में प्रवेश किया।

१४

महामंत्री का यह कक्ष अपेक्षाकृत उस अतिथि-कक्ष से छोटा था जिसमें

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर अभी तक बैठा रहा था। इसकी सज्जा भी बहुत सामान्य थी। कक्ष के लगभग मध्य में एक चौकी पड़ी थी जिस पर लेखन-सामग्री रखी हुई थी। इसके अतिरिक्त उस चौकी पर इस समय एक खुला हुआ पत्र भी रखा था जिस पर झुके हुए महामंत्री उसके अध्ययन में रत थे। चौकी के चारों ओर चार पीठिकायें रखी थीं जिनमें से एक पर, द्वार की ओर मुख किये हुए महामंत्री बैठे थे। सम्पूर्ण कक्ष में केवल एक दीपाधार था जो चौकी के एक ओर, महामंत्री के बाम पार्श्व में रखा था। परन्तु उस पर रखा हुआ दीपक चतुर्मुख था और लगभग सम्पूर्ण कक्ष को प्रकाश दे रहा था।

सोमेश्वर ने कक्ष में प्रवेश करते ही यथोचित अभिवादन किया। उसे स्वीकार करते हुए महामंत्री ने दृष्टि उठाकर एक बार सोमेश्वर को सिर से पैर तक देखा और फिर अपने सामने वाली पीठिका की ओर संकेत करके वे पुनः सामने फैले हुए पत्र के ऊपर झुक गये। सोमेश्वर बैठ गया।

कुछ ही क्षणों में उसने यह अनुभव कर लिया कि महामंत्री का व्यक्तित्व स्वल्प होते हुए भी अत्यधिक प्रभावपूर्ण है। उनकी आयु धंगदेव से कम ही थी, परन्तु शरीर अपेक्षाकृत बहुत सूक्ष्म तथा कृश था। उनके सिर का अधिकांश भाग केशहीन था और इस समय सम्मुख रखे दीपक के प्रकाश में तपे हुए स्वर्ण-सा चमक रहा था। केवल दोनों कानों के ऊपर तथा पीछे की ओर ग्रीवा के ऊपर जो थोड़े-से केश थे वे हिम-धवल थे। मूंछों का रंग भी ऐसा ही था। नासिका अनुपात से कहीं अधिक लम्बी तथा पैनी थी और उसका अग्र-भाग. शरीर के गौर वर्ण से भिन्न, रक्ताभ था। आँखें थकी-थकी-सी सदा अधमुंदी प्रतीत होती थीं, और उनके ऊपर घनी भौंहें पक कर उजली हो चुकी थीं। प्रशस्त ललाट पर श्वेत चन्दन के तिलक के नीचे तीन गहरी, सुस्पष्ट चिन्तन-रेखायें अंकित थीं। उत्तरीय के अतिरिक्त, जो क्षीण पीत वर्ण का था, उनके शेष वस्त्र भी दूध-से उजले थे।

कुछ समय पश्चात् उन्होंने पत्र को लपेटते हुए फिर अपनी दृष्टि ऊपर उठायी और सोमेश्वर की ओर देखा। दृष्टि इतनी पैनी थी कि उसके स्पर्श-मात्र से सोमेश्वर ने एक विचित्र प्रकार की सिहरन का अनुभव किया।

महामंत्री ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "तुम्हीं विशालदेव के पुत्र सोमेश्वर हो?"

"सेवक आर्य को पुनः प्रणाम करता है," सोमेश्वर ने कहा।

"आयुष्मान् भव! आयुष्मान भव! अब पूर्ण स्वस्थ हो न?"

"हाँ आर्य, अब आपके आशीर्वाद से पूर्ण स्वस्थ हूँ।"

महामंत्री ने फिर पूछा, "अपनी हवेली में कब आये? कल?"

"हाँ आर्य, कल ही आया था।"

"रत्नमाला के यहाँ तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं हुआ?"

"नहीं आर्य, कोई कष्ट नहीं हुआ। देवी रत्नमाला ने मेरी बड़ी सेवा की।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्व समझ रहा था कि ये औपचारिक प्रश्न केवल उसकी थाह लेने के उद्देश्य से किये जा रहे हैं। यह देखकर थोड़ा आश्चर्य अवश्य हो रहा था कि महामंत्री को उसके सम्बन्ध में इतना अधिक ज्ञान है।

महामंत्री ने कहा, "तुमने भी राज्य की बड़ी सेवा की है।"

"मैंने ?" सोमेश्वर ने साश्चर्य कहा।

"हाँ, तुमने, यद्यपि तुम्हें स्वयं इसका ज्ञान नहीं होगा।" और फिर अनायास विषय परिवर्तन करते हुए महामंत्री बोले, "आज तुम्हें बहुत विलम्ब तक प्रतीक्षा करनी पड़ी।"

"मैं अपरान्ह से कुछ पूर्व ही आ गया था।"

महामंत्री ने कहा "वास्तव में यह भी तुम्हारे प्रशिक्षण का एक आवश्यक भाग है। राजनीति में अनेक बार ऐसे अवसर आ जाते हैं जब धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करने वाला व्यक्ति ही सफल होता है। हाँ, तुम्हारे पिता ने लिखा है कि तुम अभी यात्रा करके लौटे हो। किस ओर गये थे ?"

"उत्तर-पश्चिम की ओर गया था।"

"पुष्पपुर गये थे ?"

"गया था, आर्य।"

"कितने दिन पूर्व ?"

"गत बसन्त में मैं वहीं था।"

"वहाँ की राजनीतिक स्थिति के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "राजनीतिक स्थिति अच्छी है। प्रजा सुखी है, और राजा के साथ है। सीमा पर यदा-कदा तुरुष्कों के आक्रमण होते रहते हैं। बड़े आक्रमण की आशंका भी है। परन्तु राजा और प्रजा दोनों का मनोबल ऊँचा है।"

"अर्थात्, राजा जयपाल तुरुष्कों के कारण आतंकित नहीं हैं ?"

"नहीं, आर्य, वे आतंकित नहीं हैं। प्रजा में भी भय की भावना नहीं है। राजा जयपाल एक प्रजाप्रिय शासक हैं। प्रजा को विश्वास है कि वे तुरुष्कों को देश के भीतर नहीं घुसने देंगे।"

"उनकी सैनिक शक्ति कितनी है ?"

"यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। परन्तु प्रजा को विश्वास है कि उनके पास तुरुष्कों के प्रतिरोध के लिए पर्याप्त सेना है।"

महामंत्री ने कहा, "कश्मीर अथवा मुल्तान की ओर भी गये थे ?"

"हाँ, कश्मीर भी गया था, और मुल्तान भी।"

"क्या तुरुष्कों के विरुद्ध राजा जयपाल को कश्मीर से सैनिक सहायता प्राप्त हो सकती है ?"

"इस सम्बन्ध में भी निश्चय के साथ कुछ कहना बड़ा कठिन है। परन्तु मेरी धारणा यह है कि राजा जयपाल को ऐसी आशा नहीं करनी चाहिए। कश्मीर की आन्तरिक स्थिति अच्छी नहीं है। शासन में स्थिरता नहीं है, और सेना पर्याप्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अथवा सुसंगठित नहीं है।"

"मुझे सूचना मिली है कि मुल्तान के शेख हमीद लोदी ने राजा जयपाल को आवश्यकता पड़ने पर सहायता का वचन दिया है। इस सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है?"

क्षण भर विचार करने के पश्चात् सोमेश्वर ने कहा, "लोदी मुसलमान है, और धर्मान्ध है। तुरुष्क भी मुसलमान हैं। उनके अभियानों का घोषित उद्देश्य धर्म-प्रचार ही होता है। अतएव लोदी की सहज सहानुभूति उन्हीं के साथ होगी। परन्तु यदि उसकी अपनी सत्ता पर आँच आने की अशंका हुई तो वह तुरुष्कों का विरोध भी कर सकता है।"

"अर्थात्, लोदी का विश्वास नहीं किया जा सकता। यही न?"

"हाँ आर्य, मेरा तात्पर्य यही था," सोमेश्वर ने कहा।

संदर्भ-परिवर्तन के लिए क्षण भर को भी रुके बिना महामंत्री ने फिर पूछा, "क्या तुम्हें ज्ञात है कि उस दिन जिस व्यक्ति से तुमने रत्नमाला की रक्षा की थी वह कौन था?"

सोमेश्वर ने कहा, "प्रसंगवश देवी रत्नमाला ने ही मुझे बताया था कि वह प्रतिहार सेना का कोई उच्च अधिकारी था।"

महामंत्री ने कहा, "प्रतिहार सेना में वह चाहे जो रहा हो परन्तु हमारे लिए कान्यकुब्ज का एक गुप्तचर मात्र था। वास्तविकता यह है कि खजुराहो में अनेक राज्यों के गुप्तचर मुक्त विचरण कर रहे हैं। हम उन्हें जानते हैं, उन पर दृष्टि भी रखते हैं, परन्तु उनके कार्य में यथासम्भव हस्तक्षेप नहीं करते। ऐसा ही अन्य राज्यों में हमारे गुप्तचरों के साथ किया जाता है। परन्तु जब कोई हमारे किसी नागरिक के अपहरण का प्रयास करता है तो वह निश्चय ही दंड का भागी हो जाता है। कान्यकुब्ज के उस गुप्तचर को उसका उचित दंड मिल चुका है, यह भी सम्भवतः तुमने सुन लिया होगा।"

"हाँ आर्य, सुन चुका हूँ।"

महामात्य ने कहा, "गुप्तचर अपना कार्य कैसे करते हैं और हमें उनके साथ कैसा व्यवहार करना पड़ता है, इस सब का तुम्हें शीघ्र ही प्रत्यक्ष अनुभव हो जाएगा। इस अनुभव के बिना तुम्हारा प्रशिक्षण अधूरा है। परन्तु पहले यह बताओ कि यदि तुम्हें कोई उत्तरदायित्व का कार्य सौंपा जाए तो उसे कर लोगे?"

"करूँगा," सोमेश्वर ने कहा।

"यह भली प्रकार समझ लो कि कार्य अत्यधिक महत्वपूर्ण तथा बड़े उत्तर-दायित्व का है। परन्तु उसमें तुम्हारे लिए किसी प्रकार का भय नहीं है। विशेष चातुर्य की भी आवश्यकता नहीं होगी। केवल थोड़ा-सा अभिनय करना पड़ेगा। कर लोगे?"

"यथाशक्ति प्रयास करूँगा।"

"तो सुनो," महामंत्री ने कहा।" तुमने जैन-मन्दिर देखा है?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"देखा तो नहीं है, परन्तु खोज लूंगा। आर्य आदेश करें।"

महामंत्री ने कहा, "जैन-मन्दिर तुम्हारी हवेली से अधिक दूर नहीं है, अतएव खोजने में विशेष कठिनाई नहीं होगी। उसे खोजकर तुम्हें कल संध्या समय वहाँ पहुँचना है। उस मन्दिर से सम्बद्ध पांथशाला में आजकल एक व्यक्ति टिका हुआ है। वह अपना नाम राजशेखर बताता है तथा अपने आपको उज्जयिनी का निवासी कहता है। उसके मस्तक पर दाहिनी आँख के ठीक ऊपर घाव का एक बड़ा-सा चिह्न है, यह स्मरण रखो तो पहचानने में कठिनाई नहीं होगी। तुम्हें उस व्यक्ति को खोजकर उसके साथ मित्रता स्थापित करनी है।"

"यह मैं कर लूँगा," सोमेश्वर ने कहा।

"यदि किसी प्रकार उसे यह विश्वास दिला सको कि तुम महाराज से तथा मुझसे बहुत प्रसन्न नहीं हो तो तुम्हारा कार्य सरल हो जाएगा।"

"यह भी कर लूँगा'" सोमेश्वर ने विश्वासपूर्वक कहा।

"कुछ घनिष्ठता हो जाने पर तुम उसे अपने साथ लेकर रत्नमाला के यहाँ जाओगे। परिचय देते समय यह स्मरण रखना कि रत्नमाला खजुराहो की सर्वाधिक सुन्दरी नगरवधू है। उस व्यक्ति को रत्नमाला के यहां पहुँचकर तुम्हारा कार्य एक प्रकार से पूरा हो जाएगा। परन्तु तुम उससे पूर्णतया मुक्त नहीं होगे। इस सम्बन्ध में आगे के आदेश तुम्हें रत्नमाला से प्राप्त होंगे। वह जैसा कहे वैसा ही करना। यह ध्यान रखना कि इस कार्य में गोपनीयता अत्यन्त आवश्यक है। तनिक-सी चूक भा राज्य के लिए और तुम्हारे अपने लिए अत्यधिक अहितकर सिद्ध हो सकती है। अब बताओ, कर लोगे?"

"आपके निर्देशों का अक्षरशः पालन होगा," सोमेश्वर ने कहा।

महामंत्री ने कहा, "मुझे तुमसे एसी ही आशा है, वत्स। अच्छा, अब तुम जाओ। बहुत विलम्ब हो गया है। हाँ, राजशेखर से मिलने के पश्चात् कुछ दिन तक यहाँ मेरे पास [मत आना। मेरे आवश्यक निर्देश तुम्हें प्राप्त होते रहेंगे। जाओ, ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।"

महामंत्री के कार्यालय से निकलकर सोमेश्वर जब बाहर आया तब रात्रि गहरी होने लगी थी। खजुराहो का जनरव क्षीण हो चला था और मार्गों पर अन्धकार का साम्राज्य था। रत्नमाला के यहाँ जाने का समय बीत चुका था। परन्तु सोमेश्वर को इसका अधिक दुःख नहीं था। वह भली प्रकार जानता था कि अब उसकी सारी गति-विधियों पर दृष्टि रखी जाएगी। अतएव वास्तव में अभी रत्नमाला के पास जाने का प्रश्न ही नहीं रह गया था। परन्तु यह सोचकर उसे संतोष हो रहा था कि उसके इस नये उत्तरदायित्व ने उसके लिए रत्नमाला के पास जाने का द्वारा खोल दिया था। कुछ विलम्ब से ही सही, परन्तु अब वह निश्शंक होकर वहाँ जा सकेगा। प्रश्न केवल समय का था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अगले दिन प्रातःकाल जब सोमेश्वर महाराज धंगदेव से भेंट करने के लिए प्रासाद में पहुँचा तो उसने महामंत्री को वहाँ पहले से ही उपस्थित पाया। वे महाराज के निकट बैठे थे। उनकी वेष-भूषा पूर्णतया वैसी ही थी जैसी सोमेश्वर ने पूर्व संध्या को देखी थी। परन्तु धंगदेव ने इस समय कौशेय अधोवस्त्र के ऊपर एक ढीली बाँहों वाला अँगरखा धारण कर रखा था।

सोमेश्वर ने दोनों गुरुजनों को यथोचित अभिवादन करते हुए महाराज से कहा, "देव, विलम्ब के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।"

धंगदेव ने उसे बैठने का संकेत करते हुए कहा, "नहीं वत्स, तुम्हें विलम्ब नहीं हुआ है। मैं स्वयं अभी-अभी मन्दिर से लौटकर आया हूँ। महामंत्री मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे, इनसे कुछ बात भी नहीं कर पाया हूँ।" फिर महामंत्री को सम्बोधित करते हुए वे बोले, "यही वह युवक है जिसके सम्बन्ध में परामर्श करने के लिए मैंने आपको इस समय कष्ट दिया है। यह रामनगर के विशालदेव का पुत्र और मेरा पुत्रतुल्य है। इसके सम्बन्ध में मैंने कालंजर से आपको लिखा भी था।"

महामंत्री ने कहा, "मैं आयुष्मान से परिचय प्राप्त कर इनके अनुभव तथा विचारों से लाभान्वित हो चुका हूँ, महाराज।"

"कब?" धंगदेव ने साश्चर्य पूछा।

"गत संध्या को। मैंने इन्हें अपने कार्यालय में बुलाया था। इनका प्रशिक्षण पूर्ण करने के उद्देश्य से मैंने इन्हें एक महत्वपूर्ण कार्य भी सौंप दिया है जिसके परिणामस्वरूप अब कुछ समय तक ये आपसे अथवा मुझसे नहीं मिल सकेंगे।"

धंगदेव ने मुस्कराते हुए कहा, "मुझे स्मरण ही नहीं रहा था कि महामंत्री सदा मुझसे एक पग आगे रहते हैं।"

महामंत्री ने भी किंचित् मुस्कराकर उसी प्रकार विनोद के स्वर में कहा, "क्या महाराज इस वृद्ध ब्राह्मण पर धृष्टता का आरोप कर रहे हैं?"

महाराज ने कहा, "नहीं। धृष्टता का नहीं, दूरदर्शिता का आरोप कर रहा हूँ, और अपनी धारणा पुष्ट करने के उद्देश्य से थोड़ी परीक्षा और करना चाहता हूँ।"

"सेवक अग्नि-परीक्षा के लिए भी प्रस्तुत है।"

"परन्तु मैं इस समय केवल दूरदर्शिता की ही परीक्षा लूंगा," धंगदेव ने कहा। "मुझे यह बताइये कि तुरुष्कों के सम्बन्ध में आप किस नीति का अनुसरण कर रहे हैं? देश की पश्चिमोत्तर सीमा पर इस समय कैसी स्थिति है? इस सम्बन्ध में आपकी क्या धारणा है?"

महामंत्री ने थोड़ा रुक कर कहा, "मुझे सूचना मिली है, महाराज, कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कल शिवानंद नामक एक साधु आपसे मिला था। इस सम्बन्ध में उसने जो चित्र आपके समक्ष प्रस्तुत किया था उसमें अधिक अत्युक्ति नहीं थी। स्थिति वास्तव में बड़ी गम्भीर है। यदि जयपाल की पराजय हुई तो तुरुष्क अन्तर्वेद तक प्रहार करेंगे। बीच में उन्हें रोकने वाली कोई शक्ति नहीं है। मेरी सूचना के अनुसार सुबुक्तगीन एक अत्यधिक महत्वाकांक्षी व्यक्ति है।"

"यह सुबुक्तगीन है कौन?" धंगदेव ने पूछा।

"इस समय गजनी का सुल्तान है, परन्तु पहले बुखारा में एक सामान्य दास था।"

"परन्तु मैंने तो उसके विषय में कभी कुछ नहीं सुना?"

"जब उसका उत्कर्ष हुआ तब आप संन्यस्त हो चुके थे, अन्यथा आप भी उसके नाम से भली प्रकार परिचित होते। वास्तव में वह पारसीक शासक शहरयार का वंशज है। समय की एक करवट ने उसे दास बनाया, और दूसरी ने फिर दास से शासक बना दिया।"

धंगदेव ने कहा, "मैं यह कथा सविस्तार सुनना चाहता हूँ।"

महामंत्री बोले, "मैं यथा सम्भव महाराज की जिज्ञासा संतुष्ट करने का प्रयास करूँगा। शहरयार पारसीक राज्य का अन्तिम शासक था। जब शत्रुओं द्वारा उसकी हत्या कर दी गयी तो उसके परिवार ने प्राण-भय से भागकर तुरुष्क देश में शरण ली। वहाँ अपने आप को सुरक्षित पाकर वे स्थायी रूप से बस गये और शीघ्र ही स्थानीय विवाह-सम्बन्ध करके तुरुष्कों के साथ घुल-मिल गये। इसी परिवार में सुबुक्तगीन का जन्म हुआ था। परन्तु जब उसकी आयु केवल बारह वर्ष की थी तब वह एक स्थानीय युद्ध में बन्दी बना और एक व्यापारी के हाथ क्रय कर दिया गया। इस प्रकार वह दास बना।"

"फिर सुल्तान कैसे बना?" धंगदेव ने पूछा। वे यह कथा बड़े ध्यान से सुन रहे थे। सोमेश्वर को भी उसमें आनन्द आ रहा था।

महामंत्री ने कहा, "सुबुक्तगीन तीन वर्ष तक अपने स्वामी उस व्यापारी के पास रहा। फिर उसका भाग्य जगा। खुरासान के मुख्य मंत्री अलप्तगीन को वह ऐसा भा गया, कि अलप्तगीन ने उसे क्रय कर लिया। इस प्रकार सुबुक्तगीन बुखारा से खुरासान जा पहुँचा।"

"फिर?" धंगदेव ने कहा।

"फिर अलप्तगीन का अपने स्वामी के साथ मतभेद हो गया और उसने स्वयं खुरासान छोड़ दिया। परन्तु उसके पास अपनी पर्याप्त सेना थी जिसकी सहायता से उसने गजनी के अमीर अबूबकर को परास्त करके वहाँ अपने स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की। इस बीच सुबुक्तगीन युवा हो चुका था और अपने आप को एक निर्भीक तथा कुशल योद्धा प्रमाणित कर चुका था। उसकी वीरता तथा स्वामि-भक्ति से प्रसन्न होकर अलप्तगीन ने अपनी पुत्री के साथ उसका विवाह कर दिया तथा उसे अपना सेनापति नियुक्त किया। इस काल में सुबुक्तगीन ने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत की सीमा पर भी कई आक्रमण किये। जयपाल के साथ उसकी शत्रुता का सूत्रपात वस्तुतः इसी काल में और इन्हीं आक्रमणों के साथ हुआ था।''

धंगदेव ने कहा, ''और जब अलप्तगीन के पश्चात् सुबुक्तगीन स्वयं सुल्तान बना तब इस शत्रुता का बढ़ना स्वाभाविक था।''

''हाँ महाराज, ऐसा ही हुआ। परन्तु अलप्तगीन के पश्चात् सुबुक्तगीन तुरन्त सुल्तान नहीं बन सका। उसे कुछ काल तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। अलप्तगीन की मृत्यु के पश्चात् सबसे पहले उसका पुत्र इसहाक सिंहासनारूढ़ हुआ। परन्तु केवल तीन वर्ष शासन करने के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गयी। उसके पश्चात् सत्ता तुरुष्क सेनापति बल्कातिगीन के हाथों में आयी। उसका शासन भी अधिक समय तक नहीं चला। छल से उसकी हत्या करके पीराई नामक अलप्तगीन का एक भूतपूर्व दास स्वयं शासक बन बैठा। पीराई बड़ा क्रूर और अत्याचारी था। उसके अत्याचारों से मुक्ति पाने का और कोई उपाय न देखकर गजनी की प्रजा ने भूतपूर्व अमीर अबू बकर के पुत्र अबू अली को नगर पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित किया। अबू अली स्वयं इस अवसर की ताक में था। परन्तु उसके पास अभी पर्याप्त सेना नहीं थी। अतएव उसने शाही राजा जयपाल से सहायता माँगी। जयपाल भी नहीं चाहते थे कि उनकी सीमा पर स्थित गजनी का मुसलमान राज्य सबल रहे। अतएव उन्होंने अबू अली की सहायता करने का निश्चय किया और अपने एक पुत्र को ससैन्य गजनी पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। इस प्रकार सुबुक्तगीन और जयपाल की शत्रुता की अग्नि में घृत पड़ा।''

''फिर क्या हुआ?'' धंगदेव ने पूछा।

''फिर युद्ध हुआ, महाराज। परन्तु सुबुक्तगीन बड़ा कुशल सेनापति है। उसने युद्ध-कौशल द्वारा अबू अली तथा जयपाल की सम्मिलित सेनाओं को परास्त कर दिया। इस विजय के परिणामस्वरूप गजनी में उसका प्रभाव बहुत बढ़ गया और उसने शीघ्र ही पीराई को अपदस्थ कर राज्य का शासन अपने हाथ में ले लिया। इस प्रकार सुल्तान बनने के पश्चात् उसने थोड़े ही समय में अपनी स्थिति और सुदृढ़ बना ली है। इधर वह अन्य दिशाओं में अपने राज्य का विस्तार करने के साथ-साथ जयपाल के राज्य पर भी आक्रमण करता रहा है। उसने सीमावर्ती क्षेत्र में जयपाल के कई दुर्ग ध्वस्त कर दिये हैं और कई नगरों पर अधिकार कर लिया है। इन युद्धों के द्वारा वह अपने धर्म का बलात् प्रचार भी कर रहा है। इनका संचालन उसका पुत्र महमूद कर रहा है जो स्वयं एक विकट योद्धा तथा कुशल सेनापति है।''

धंगदेव ने कहा, ''आप अपनी परीक्षा में सम्मानसहित उत्तीर्ण हुए। आपका ज्ञान यथेष्ट से भी अधिक विस्तृत है।''

महामंत्री ने कहा, ''हमारे कुछ सूत्र हैं, महाराज, जिनसे हमें समय-समय पर सूचनायें प्राप्त होती रहती हैं। इनके अतिरिक्त अन्य राजधानियों से दूत आते रहते हैं। कल अपराह्न में ही पुष्पपुर से एक विशेष दूत आया था। सुबुक्तगीन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के विषय में विस्तृत सूचना मुझे उससे प्राप्त हुई।"

"यह विशेष दूत किस उद्देश्य से आया है ?"

महामंत्री ने कहा, "उसका उद्देश्य भी वही है जिसे लेकर शिवानंद जी कल आपके समक्ष उपस्थित हुए थे। राजा जयपाल सुबुक्तगीन को दंड देने का निश्चय कर चुके हैं। उनकी योजना गजनी पर तुरन्त आक्रमण करने की है। विशेष दूत उन्होंने यह जानने के लिए भेजा है कि इस अभियान में हम उनकी क्या सहायता कर सकते हैं।"

"हमें प्रत्येक सहायता करनी चाहिए," धंगदेव ने दृढ़ निश्चय के स्वर में कहा।

"अवश्य करनी चाहिए," महामंत्री ने कहा, "क्योंकि यदि राजा जयपाल पराजित हुए तो सुबुक्तगीन आगे बढ़कर इधर भी आ सकता है। परन्तु प्रश्न का दूसरा पक्ष भी है, इस सम्बन्ध में और कई बातें भी विचारणीय हैं। पहली यह कि वर्तमान संघर्ष मूलतः व्यक्तिगत है। इसका सूत्रपात स्वयं राजा जयपाल की ओर से हुआ था और उस समय हमारी सम्मति भी नहीं पूछी गयी थी। अतएव नैतिक दृष्टि से इस समय भी हमारे लिए सहायता देना आवश्यक नहीं है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमसे सहायता आक्रमण के लिए माँगी गयी है, प्रति-रक्षा के लिए नहीं। इसके अतिरिक्त, मेरी सूचना के अनुसार, राजा जयपाल के पास अपनी पर्याप्त सेना है और वह सुसंगठित तथा सुसज्जित है। सोमेश्वर जी पुष्पपुर तथा उद्भाण्ड हो आये हैं और हमारी इस सूचना की पुष्टि करते हैं। इनका यह भी कथन है कि राजा जयपाल स्वयं एक कुशल तथा अनुभवी सेना-पति हैं। ऐसी दशा में यह आवश्यक नहीं है कि जयपाल की पराजय ही हो, और यदि दुर्भाग्यवश हो भी जाए तो हमारे लिए तुरन्त किसी प्रकार की आशंका नहीं होगी। पर युद्ध गजनी के क्षेत्र में होगा, किसी भी भावी आक्रमण का पहला प्रहार झेलने के लिए जयपाल की अपनी सुरक्षा-व्यवस्था फिर भी बनी रहेगी। अतएव राजनीतिक तथा सामरिक दृष्टिकोणों से भी हमारे लिए इस समय सहायता देना आवश्यक नहीं है।"

धंगदेव ने कहा, "इसका अर्थ यह हुआ कि जयपाल की सहायता करनी तो चाहिए, परन्तु हम नहीं करेंगे। क्या आपने ऐसा निश्चय कर लिया है ? क्या अपनी यही नीति है ?"

"नहीं, ऐसा नहीं है, महाराज," महामंत्री ने उत्तर दिया। "अपनी नीति अभी निर्धारित होनी है। इस समय मैं केवल स्थिति की एक व्याख्या प्रस्तुत कर रहा था। उसकी और व्याख्यायें भी सम्भव हैं। नीति का निर्धारण उन सबको ध्यान में रखकर करना होगा, और महाराज स्वयं करेंगे।"

"मैं करूँगा ?" धंगदेव ने साश्चर्य कहा।

"हाँ, महाराज, आपको हीं करना होगा।"

"क्यों ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रश्न का उत्तर प्रश्न से देते हुए महामंत्री ने कहा, "क्या महाराज ने शिवानन्द की प्रार्थना स्वीकार नहीं की है?"

"नहीं, अभी मैंने कोई निर्णय नहीं किया है। महामंत्री को स्मरण रखना चाहिए कि मैं पहले भी उनसे परामर्श किये बिना कोई महत्वपूर्ण निर्णय नहीं लेता था।"

महामंत्री ने मुस्कराकर कहा, "चूक हुई, महाराज। आपका आरोप सत्य है। परन्तु आपने इतने समय से कोई महत्वपूर्ण निर्णय नहीं लिया है कि मेरा भूल जाना स्वाभाविक और क्षम्य सिद्ध किया जा सकता है।"

धंगदेव ने कहा, "यह सत्य है। वास्तव में मैंने इधर कोई निर्णय नहीं लिया है। परन्तु वर्तमान समस्या बड़ी गम्भीर है। इस स्थिति में हमें कुछ न कुछ करना ही होगा। आपका परामर्श क्या है?"

"मैं शिवानंद के तर्क से पूर्णतया सहमत हूँ," महामंत्री ने कहा।

धंगदेव मुस्कराकर बोले, "लगता है शिवानंद के सम्बन्ध में महामंत्री का ज्ञान मेरी अपेक्षा कहीं अधिक है।"

"स्वाभाविक है, महाराज। शिवानंद जी आपसे कल केवल एक बार मिले थे। परन्तु मुझसे उनकी भेंट कई बार हो चुकी है। कल आपसे मिलने के लिए उन्हें वस्तुतः मैंने ही प्रेरित किया था।"

धंगदेव ने कहा, "अर्थात्, शिवानंद के तर्क वस्तुतः आपके तर्क हैं, और आप चाहते हैं कि मैं इस आयु में भगवद्भजन त्यागकर यह नया उत्तरदायित्व अपने सिर पर ले लूँ। यही न?"

महामंत्री ने कहा, "तात्पर्य लगभग यही है, परन्तु मैं उसे दूसरे शब्दों में व्यक्त करने की अनुमति चाहता हूँ। मेरा परामर्श यह है कि अपने राज्य की तथा सम्पूर्ण आर्यावर्त्त की सुरक्षा को ध्यान में रखकर तथा भागवत धर्म के हित में, महाराज हमें—अर्थात् देश को, धर्म को, तथा जाति को—अपनी सत्प्रतिष्ठा तथा अपने सुदीर्घ अनुभव से लाभान्वित होने का अवसर प्रदान करें। यदि आप यह उत्तरदायित्व स्वीकार नहीं करेंगे तो हमारे समक्ष अनेक कठिनाइयाँ उठ खड़ी होंगी, और हमारे लिए आगे भी जयपाल की सहायता करना सम्भव नहीं होगा।"

"आगे भी? क्या हम इस समय सहायता नहीं कर सकते?" धंगदेव ने पूछा।

महामंत्री ने कहा, "नहीं महाराज, तात्कालिक सहायता व्यावहारिक दृष्टि से असम्भव है। यदि हम अपनी सेना का एक बड़ा भाग जयपाल की सहायता के लिए सुदूर उत्तर-पश्चिम भेज देंगे, तो यहाँ हमारी अपनी सुरक्षा-व्यवस्था निर्बल हो जाएगी। यह उचित नहीं होगा क्योंकि देश के भीतर ही हमारे अनेक शत्रु अवसर की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कान्यकुब्ज अभी गोपाद्रि की पराजय को नहीं भूला है। मुझे विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि प्रतिहार सेना उस कलंक को धोने का प्रयास अवश्य करेगी। उधर त्रिपुरी में लक्ष्मणराज इसी घात में बैठे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उज्जयिनी से सूचना की प्रतीक्षा है, परन्तु इतना निश्चित है कि मालवपति ने विशाल सैन्य-संग्रह किया है। इस सेना का संगठन वैसे तो तैलप के विरुद्ध किया गया है, परन्तु अवसर मिलने पर उसका प्रयोग हमारे विरुद्ध भी किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में हमारे लिए अपनी सुरक्षा-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है। अतएव यदि हम जयपाल की सहायता करना चाहते हैं तो कई राज्यों की सम्मिलित सेना एकत्र करनी होगी, जिसके संगठन में स्वभावतः कुछ समय लगेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि हम चाहते हुए भी तत्काल राजा जयपाल की कोई सहायता नहीं कर सकेंगे। परन्तु भविष्य के लिए हमें अभी से योजना बना लेनी चाहिए, क्योंकि यदि आगे चलकर कभी सुबुक्तगीन की ओर से आक्रमण होता है तो जयपाल की सहायता करना हमारी अपनी सुरक्षा के लिए भी आवश्यक होगा। इस स्थिति के लिए हमें अभी से कुछ राज्यों का एक संघ बनाने का प्रयास करना चाहिए। कुछ राज्य जो हमें हानि पहुँचाना चाहते हैं, स्वभावतः इस संघ में सम्मिलित नहीं होंगे। परन्तु हमें इनका भी सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। अतएव मैं उत्तरापथ के लगभग सभी राज्यों को दूत भेजने का विचार कर रहा हूँ। इनमें से अनेक राजधानियों में आपका बड़ा सम्मान है। यदि आप संघ का नेतृत्व स्वीकार कर लें तो हमें उनका सहयोग प्राप्त करने में सरलता होगी। अन्यथा कठिनाई पड़ सकती है, सम्भव है संघ का निर्माण ही न हो सके। इसलिए मैं अपने अनुरोध के साथ महाराज को शिवानंद का प्रस्ताव स्वीकार करने का परामर्श दे रहा हूँ।"

कुछ क्षण विचारमग्न रहने के पश्चात् धंगदेव ने कहा, "यदि मैं आपका अनुरोध स्वीकार कर लूं तो उसके पश्चात् मुझे क्या करना होगा ?"

"कुछ नहीं। उसके पश्चात् का कर्तव्य मेरा है।"

"फिर मुझे कुछ नहीं करना होगा ?"

"नहीं, महाराज ! आप केवल नेतृत्व स्वीकार करलें, शेषसब मे कर लूंगा।"

धंगदेव ने कहा, "अपने महामंत्री का कोई अनुरोध मैंने आज तक अस्वीकार नहीं किया है। आज भी नहीं करूँगा। आप इस सम्वन्ध में युवराज से भी परामर्श करलें और योजना को कार्यान्वित करें।"

महामंत्री तुरन्त खड़े हो गये और बोले, "यदि मेरे योग्य कोई अन्य सेवा न हो तो मैं अब अनुमति की प्रार्थना करूँगा। कार्यालय में मेरी प्रतीक्षा हो रही होगी।"

महाराज ने कहा, "केवल एक सेवा और है। सोमेश्वर का ध्यान रखना है।"

"मुझे स्वयं इनका ध्यान है, महाराज," महामंत्री ने उत्तर दिया। "क्षेत्र तथा स्थानीय परिस्थितियों से भली प्रकार परिचित होने के कारण आयुष्मान् हमारी प्रस्तुत योजना के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। परन्तु अभी इन्हें एक अन्य कार्य सौंपा जा चुका है। वह पूरा हो ले फिर आगे का विचार कर लिया जाएगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महामंत्री के चले जाने के पश्चात् धंगदेव ने सोमेश्वर से कहा, "वत्स, तुमने महामंत्री के कथन का तात्पर्य समझा ? वे तुम्हें कसौटी पर कस रहे हैं। आशा है तुम खरे ही उतरोगे।"

"यथाशक्ति प्रयास ऐसा ही करूँगा, देव," सोमेश्वर ने उत्तर दिया, और महाराज का संकेत समझकर स्वयं भी उठकर खड़ा हो गया।

प्रासाद से अपनी हवेली की ओर लौटते हुए वह मार्ग पर इस भेंट के ही सम्बन्ध में सोचता रहा। दो समादरणीय गुरुजनों के वार्तालाप में उसने स्वयं मौन रहना ही अधिक उचित समझा था। परन्तु उस वार्तालाप से वह बहुत लाभान्वित हुआ था और महामंत्री द्वारा की गयी स्थिति की विस्तृत व्याख्या से उसके ज्ञान की पर्याप्त वृद्धि हुई थी।

१६

जैन-मन्दिर खोजने में सोमेश्वर को तनिक भी कठिनाई नहीं हुई। हवेली के सारे अनुचर उससे परिचित थे।

नदी के निकट स्थित पार्श्वनाथ जी के इस मन्दिर का निर्माण-कार्य केवल दो वर्ष पूर्व पूरा हुआ था। पहिल्ल नामक एक जैन व्यापारी ने एतदर्थ अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति अर्पित कर दी थी, और महाराजाधिराज धंगदेव की उदार धर्म-नीति के अन्तर्गत इसे राज-कोष से भी पर्याप्त सहायता प्रदान की गयी थी। परिणामतः आकार-प्रकार तथा वैभव में यह जैन-मन्दिर खजुराहो के उन वैष्णव अथवा शैव मन्दिरों से कम नहीं था जिनका निर्माण स्वयं धंगदेव अथवा उनके पिता ने कराया था। वास्तव में इसका विस्तार अन्य मन्दिरों की तुलना में अधिक था क्योंकि इसके साथ एक पांथशाला भी जुड़ी हुई थी। इस पांथशाला में भिन्न मतावलंबी यात्रियों को भी निवास की समान सुविधा प्रदान की जाती थी। इस कारण यह मन्दिर अल्प समय में ही दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गया था। इसकी स्थानीय प्रसिद्धि का एक अन्य कारण यह भी था कि इसके प्रांगण में लग-भग नियमित रूप से धार्मिक विवाद हुआ करते थे जो उस समय अभिनय, नृत्य-गान, पशु-युद्ध तथा द्यूत के ही समकक्ष सार्वजनिक मनोरंजन के प्रमुख साधनों में गिने जाते थे।

उस दिन संध्या को जब सोमेश्वर वहाँ पहुँचा तब भी सभा जुड़ी हुई थी और विवाद चल रहा था। इस मन्दिर में सभा-मंडप नहीं था। उसके स्थान पर चारों ओर से घिरा हुआ, परन्तु ऊपर से खुला, एक विस्तृत प्रांगण था। इसी में बीस-पच्चीस व्यक्ति बैठे हुए थे। सोमेश्वर भी जाकर उन्हीं के बीच में बैठ गया। खजुराहो के अनेक नागरिक इन विवादों का आनंद लेने के लिए वहाँ आया करते थे, अतएव सोमेश्वर की ओर किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बैठ जाने के पश्चात् उसने चारों ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई। परन्तु उसे अधिक खोजना नहीं पड़ा। राजशेखर नामधारी वह व्यक्ति सभा में उपस्थित था और उससे थोड़े ही अन्तर पर बैठा था। सोमेश्वर को उसे पहचानने में तनिक भी कठिनाई नहीं हुई। उसके मस्तक पर दाहिनी आँख के ऊपर घाव का चिह्न वस्तुत: इतना गहरा और सुस्पष्ट था कि उसे सहस्रों की भीड़ में भी सरलतापूर्वक पहचाना जा सकता था।

उस समय एक बौद्ध भिक्खु बोल रहा था। स्पष्ट था कि उपस्थित जनसमुदाय की सहानुभूति उसके साथ नहीं है, और सम्भवत: इसीलिए वह अपने मत की श्रेष्ठता प्रमाणित करने के स्थान पर अन्य मतों के विरुद्ध कटुतापूर्ण उद्‌गार व्यक्त कर रहा था। वह कह रहा था—"आज हमारा देश पतन के गर्त में जा गिरा है। जानते हो क्यों? इसीलिए कि उसने श्रेष्ठ मार्ग का परित्याग कर दिया है। आज जिस ओर देखो विवाद ही विवाद है, संघर्ष ही संघर्ष है। धर्म से सम्प्रदाय, और सम्प्रदायों से अनेक उपसम्प्रदाय निकल रहे हैं, और इसके परिणामस्वरूप चारों ओर घोर अव्यवस्था का साम्राज्य है। हम लड़ते हैं, और सामान्य जन धर्म के प्रति उदासीन होते जा रहे हैं। वे अंधविश्वासों और रुढ़ियों के सहारे चल रहे हैं और इन्हीं को धर्म की संज्ञा देते हैं। परन्तु यह सद्धर्म नहीं है, यह निर्वाण का मार्ग नहीं है।"

"फिर निर्वाण का मार्ग कौन-सा है?" प्रश्नकर्त्ता राजशेखर था।

भिक्खु ने उत्तर दिया, "निर्वाण का मार्ग केवल वह है जिसका तथागत ने उपदेश किया था। धम्म का मार्ग निर्वाण का मार्ग है।"

इस कथन पर कई श्रोता हँस पड़े। राजशेखर भी संतुष्ट नहीं हुआ था। उसने कहा, "इसका क्या प्रमाण है कि तथागत का मार्ग ही निर्वाण का मार्ग है?"

भिक्खु ने उत्तर दिया, "यह अनुभव करके ही जाना जा सकता है। निर्वाण की अनुभूति प्रमाणित नहीं की जा सकती।"

राजशेखर ने कहा, "अनुभव करने के लिए अन्य मार्ग भी तो हैं?"

"अन्य सब मार्ग मिथ्या हैं," भिक्खु ने उत्तर दिया।

"केवल तुम्हारा सत्य है?" एक श्रोता ने व्यंग करते हुए कहा।

"मेरा नहीं, तथागत का। केवल तथागत का मार्ग सत्य है।"

"क्यों? प्रमाण प्रस्तुत करो," राजशेखर ने कहा।

भिक्खु ने उत्तर दिया, "तथागत का मार्ग इसलिए सत्य है कि भगवान बुद्ध स्वयं सत्य-स्वरूप थे। वे सामान्य मनुष्य नहीं थे। वे अवतार थे। भागवत मतावलम्बी भी स्वीकार करते हैं कि भगवान बुद्ध अवतार थे। उनका बताया मार्ग मिथ्या कैसे हो सकता है? वे सर्वज्ञ थे।"

अन्तिम वाक्य पूरा होते-होते सोमेश्वर उठकर खड़ा हो चुका था। उसने राजशेखर से कहा, "दो प्रश्न मुझे भी पूछ लेने दीजिए।" फिर वह भिक्खु की ओर घूमकर बोला, "तुम कहते हो कि तुम्हारे बुद्ध सर्वज्ञ थे?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"भगवान बुद्ध सर्वज्ञ थे," भिक्खु ने शुक-वाणी में उत्तर दिया।

सोमेश्वर ने पूछा, "परन्तु इसका क्या प्रमाण है कि वे सर्वज्ञ थे ?"

भिक्खु बोला, "हाँ, इसका प्रमाण है। हमारे धर्म-ग्रन्थों का अध्ययन करो। उनमें ऐसा लिखा है।"

"और तुम्हारे धर्म-ग्रन्थ किसने लिखे हैं ?" सोमेश्वर ने फिर पूछा।

"भगवान बुद्ध ने।"

सोमेश्वर ठहाका मार कर हँस पड़ा और बोला, "इसका अर्थ यह हुआ कि तुम स्वयं बुद्ध के कहने पर उनको सर्वज्ञ स्वीकार कर लेते हो। यदि ऐसा है तो मैं भी कहता हूँ कि मैं सर्वज्ञ हूँ, और तुम्हें स्वीकार करना होगा। सर्वजन ध्यान से सुनें। मैं सर्वज्ञ हूँ। मुझे ज्ञात है कि इस व्यक्ति के पिता, पितामह तथा प्रपितामह, और उनके पिता, पितामह तथा प्रपितामह, सब मेरे पूर्वजो की सेवा में रहे हैं। सभा न्याय करे। क्या यह व्यक्ति अब भी अस्वीकार कर सकता है कि मैं सर्वज्ञ हूँ ?"

इस पर सम्पूर्ण सभा अट्टहास कर उठी, और भिक्खु हतप्रभ हो गया। कुछ क्षण तक उसके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। इसी बीच सोमेश्वर ने, जो अभी खड़ा ही था, अपनी विजय की स्थिति का लाभ उठाते हुए ऊँचे स्वर में कहा, "भिक्षु का कार्य है भिक्षार्जन करना, परन्तु अनेक अज्ञानी यह समझते हैं कि सिर घुटा लेने मात्र से व्यक्ति विद्वान और तत्वज्ञान की चर्चा का अधिकारी हो जाता है।" यह कह कर अह अपने स्थान पर बैठ गया।

तभी उसके निकट बैठे हुए एक व्यक्ति ने बैठे ही बैठे ऊँचे स्वर में कहा "सत्य कहते हो, भाई। इसी कारण तो अब साधु-संन्यासी भी सन्देह की दृष्टि से देखे जाने लगे हैं और जनता में उनका आदर नहीं रह गया है। इसी कारण अब जनता मूल धर्म को भूलकर अनेक दिशाओं में भटकती फिर रही है।"

'और तुम्हार यह मूल धर्म कौन-सा है ?" एक अन्य व्यक्ति ने प्रश्न किया। वह वेश-भूषा से खजुराहो का नगरिक नहीं लगता था।

"मूल धर्म एक है—शक्ति की आराधना का। शक्ति की अराधना वास्तव में वेदों से भी अधिक प्राचीन है। जब कहीं कुछ नहीं था,—विष्णु नहीं थे, शिव नहीं थे, बुद्ध नहीं थे—शक्ति तब भी थी। शक्ति से ही इस सम्पूर्ण सृष्टि का उद्भव हुआ है।"

प्रश्नकर्त्ता ने कहा—"वज्रयानियों की और तुम्हारी साधना में कोई अन्तर नहीं है।"

"है कैसे नहीं ? वज्रयानियों की और हमारी साधना में आस्था का अन्तर है। वज्रयानियों और तंत्रयानियों ने हमारे साधन चुरा लिये हैं, परन्तु हमारे साध्य तक उनकी पहुँच नहीं है, और हमारे आराध्य में उनकी आस्था नहीं है। और हमारे साधन भी उन्होंने क्यों चुराये ? इसीलिए न कि वे भी इन साधनों को ही सर्वोत्तम समझते हैं ? इस कलियुग में पंच-मकार का मार्ग ही साधना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का एक मात्र मार्ग रह गया है।"

प्रश्नकर्त्ता उठकर खड़ा हो गया और बोला, "मैं इससे सहमत नहीं हूँ। वास्तव में कोई भी शिक्षित व्यक्ति इस तर्क से सहमत नहीं हो सकता। जो धर्म वेदों से भी प्राचीन है वह भला इस कलियुग के लिए कैसे उपयुक्त हो सकता है? प्रत्येक युग की अपनी परिस्थितियाँ और अपनी आवश्यकतायें होती हैं, और उनके अनुरूप प्रत्येक युग का अपना धर्म होता है। आज जीवन की धारा वैदिक शिखर से स्खलित होकर हठयोग तथा तन्त्र आदि में उलझ गयी है। ऐहिक जगत के आकर्षण ने अध्यात्म को पूर्णतया आच्छन्न कर लिया है। आज की परिस्थितियाँ नयी हैं, समस्यायें नयी हैं, और उनके अनुरूप नयी-नयी मान्यतायें प्रतिष्ठित हो रही हैं। अतएव आज का धर्म भी नया होना चाहिए। मैं स्वीकार करता हूँ कि धर्म सर्वथा नया नहीं हो सकता, क्योंकि वह शाश्वत है। परन्तु उसके स्वरूप में युग की आवश्यकताओं के अनुसार सदा परिवर्तन किये जा सकते हैं, और किये जाते रहे हैं। महावीर, बुद्ध, शंकर आदि सभी ने ऐसा ही किया है।"

"आप किस सम्प्रदाय के समर्थक हैं?"—राजशेखर ने पूछा।

"मैं लिंगायत शैव हूँ," उसने उत्तर दिया।

"वासव-पंथी?" सोमेश्वर ने पूछा।

लिंगायत ने कहा, "हाँ, मैं वासव ऋषि का अनुयायी हूँ। भगवान वासव अवतारी पुरुष थे। परन्तु उन्होंने किसी नये धर्म का प्रतिपादन नहीं किया है। हमारे सिद्धान्त वही हैं जो शंकर तथा रामानुज ने प्रतिष्ठित किये थे। वासवाचार्य ने नये युग की नयी आवश्यकताओं के संदर्भ में उनकी व्याख्या मात्र की है।"

शाक्त ने कहा, "लिंगायत सम्प्रदाय वास्तव में कोई सम्प्रदाय नहीं है। इसका उद्गम दक्षिण से हुआ है, यही इसकी दुर्बलता का सबसे बड़ा प्रमाण है। दक्षिण के लोग पढ़ते बहुत हैं परन्तु जो कुछ पढ़ते हैं उसका प्रयोजन नहीं धारण कर पाते। वे मंत्रोच्चार से ही संतुष्ट हो जाते हैं, मंत्र की आत्मा तक पहुँचने का प्रयास भी नहीं करते। उन्होंने वेदों को डुबा दिया है।"

लिंगायत ने बिना उत्तेजित हुए उत्तर दिया, "यह सत्य है कि लिंगायत सम्प्रदाय का जन्म दक्षिण में हुआ। परन्तु इस कारण, अथवा अन्य किसी भी कारण से, वह दुर्बल है, यह मैं स्वीकार नहीं कर सकता। वास्तव में अधिकांश प्रचलित सम्प्रदायों का उद्गम दक्षिण से ही हुआ है, परन्तु क्या इस कारण वे सभी दुर्बल हैं? क्या कालिदास, भवभूति, सुबन्धु, वाणभट्ट और शंकर जैसी महाप्राण विभूतियों को जन्म देने वाली शैव साधना दुर्बल है? लिंगायत सम्प्रदाय भी उसी शैव साधना का आधुनीकृत स्वरूप है जिसमें उस प्राचीन साधना को जन-जीवन के अधिक निकट लाने का प्रयास किया गया है। हम पशु-बलि का विरोध केवल इसलिए करते हैं कि देश की अधिकांश जनता इस समय इसके विरुद्ध है। हम वर्णाश्रम धर्म, जाति-व्यवस्था, आदि को आज की परिस्थितियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में उचित नहीं समझते हैं। संन्यास तथा तप की आड़ में पाखंड पनप रहा है, अतएव हम संन्यास तथा तप के विरुद्ध हैं। हम श्रम की महत्ता को स्वीकार करते हैं, और याचना तथा भिक्षावृत्ति के पक्ष में नहीं हैं।''

''अर्थात्, तुम समाज की प्राचीन मर्यादाओं के ध्वंसक और सामाजिक विशृंखलता के समर्थक हो ?'' शाक्त ने व्यंग किया।

''नहीं,'' लिंगायत ने दृढ़तापूर्वक कहा। ''हम सामाजिक विशृंखलता के नहीं, नियमबद्ध जीवन के समर्थक हैं। हमारे गुरु वासवाचार्य ने भक्ति, प्रेम, समर्पण, सत्य, सदाचार और आत्म-प्रक्षालन से परिपूर्ण जीवन का आदर्श प्रस्तुत किया है।''

शाक्त ने उपेक्षा के स्वर में कहा, ''आदर्श ! कोरे आदर्श ! इनसे कुछ नहीं प्राप्त होगा। साधना के बिना सिद्धि असम्भव है। तुम्हारे सम्प्रदाय में साधना का कोई स्थान नहीं है, अतएव तुम कोई सिद्धि भी प्राप्त नहीं कर सकते। तुम्हारा सम्प्रदाय मिथ्या है। तुम्हारा ही क्यों, सारे सम्प्रदाय मिथ्या हैं। सच्चा मार्ग केवल एक है।''

''कूप-मंडूक मत बनो। सभी धर्मान्ध व्यक्ति कूप-मंडूक होते हैं, अतएव धर्मान्ध मत बनो। और धर्मान्ध वह होता है जिसे अपने धर्म से अच्छा कहीं कुछ दिखायी ही नहीं पड़ता।''

विवाद में यह नया स्वर सोमेश्वर को पहचाना-सा लगा। उसने घूमकर देखा, उसके पीछे उपर्युक्त वाक्य कहते हुए स्वामी शिवानन्द उठकर खड़े हो चुके थे। सोमेश्वर ने उन्हें इससे पूर्व सभामें नहीं देखा था। स्पष्ट था कि वे उसके आगमन के पश्चात् किसी समय वहाँ आकर चुपचाप पीछे बैठ गये थे।

शिवानन्द कहते गये, ''सामान्य व्यक्ति अज्ञानवश अपने धर्म को ही सर्वोच्च समझता है, और केवल उसी का जयकार करता है। परन्तु जो प्रबुद्ध है उसकी दृष्टि साम्प्रदायिक मतान्तरों की ओर नहीं जानी चाहिए। अतएव व्यर्थ के विवाद में मत पड़ो। जिस प्रकार तुम अपने धर्म और विश्वास पर दृढ़ बने रहना चाहते हो उसी प्रकार दूसरों को भी अपने-अपने धर्म और विश्वासों पर दृढ़ रहने का अधिकार दो। उनके साथ विवाद मत करो क्योंकि तर्क द्वारा तुम उनसे उनकी भूल स्वीकार नहीं करा सकोगे। ईश्वर की अपार महिमा का विश्वास करो। जब उसकी दया-दृष्टि होगी तो सभी अपनी भूलें स्वयं समझ लेंगे।''

''आप किस सम्प्रदाय के है, महाराज ?'' लिंगायत ने पूछा।

''किसी का नहीं, और सबका हूँ,'' शिवानन्द ने उत्तर दिया। ''मैं ब्राह्मण हूँ, ब्रह्म की उपासना करता हूँ। मैं उस ब्रह्म का उपासक हूँ जो अनादि तथा अनन्त है, जो स्वयं एक है तथा अनेक का कारण-रूप है। उसी एक के कारण अनेक की महत्ता है, उस एक को जानने से ही अनेक का ज्ञान सम्भव है। ज्ञानी उसे ब्रह्म कहता है, योगी परमात्मन् कहता है, और भक्त ईश्वर कह कर सम्बोधित करता है। परन्तु वह वास्तव में एक है। वही शिव है, और वही शक्ति है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ब्रह्म और शक्ति में अन्तर हो सकता है किन्तु भेद नहीं है। अग्नि तथा उसके दाह के समान, रत्न तथा उसकी प्रभा के समान, दोनों अन्ततोगत्वा एक हैं। एक के बिना दूसरे की कल्पना भी असम्भव है। भिन्नता केवल नामों की है, परन्तु भिन्न नाम दे देने से गुण अथवा प्रकृति में अन्तर नहीं आता। जिस प्रकार जल एक है परन्तु भिन्न-भिन्न भाषाओं में उसको भिन्न-भिन्न संज्ञा दी जाती है, उसी प्रकार भिन्न नामों से पुकारा जाने वाला सच्चिदानन्द-स्वरूप ब्रह्म भी वास्तव में एक ही है। जिस प्रकार माता अपनी सन्तान में भेद नहीं रखती है, सबको समान रूप से प्रेम करती है, और प्रत्येक को उसकी रुचि के अनुसार भोजन देती है, वैसे ही ब्रह्म भी है। वह भी सबसे समान प्रेम करता है और भिन्न व्यक्तियों की भिन्न रुचियों तथा क्षमताओं के अनुरूप उन्हें साधना के भिन्न स्वरूप और कल्याण के भिन्न मार्ग प्रदान करता है। सब मार्ग उसके हैं। उन पर चलने की शक्ति भी वही देता है। फिर हम विवाद में क्यों पड़ें ? आक्षेप और विवादकरता वही घूमता है जिसे स्वयं धर्म की इच्छा नहीं होती। धर्मेच्छु के पास ऐसे विवादों के लिए समय ही नहीं होता।''

''यदि ऐसा है तो आप स्वयं तुरुष्कों के विरुद्ध आक्षेप करते हुए क्यों घूम रहे हैं ?'' सोमेश्वर ने प्रश्न किया।

शिवानन्द ने सोमेश्वर की ओर देखते हुए उत्तर दिया, ''मैं तुरुष्कों के धर्माचरण पर आक्षेप नहीं करता। उन्हें अपने धर्म के अनुसार आचरण करने का पूरा अधिकार है। परन्तु इसी प्रकार का अधिकार हमें भी है। जब वे हमारे इस अधिकार पर आघात करते हैं, शस्त्र-विजय द्वारा बलात् अपना धर्म हमारे ऊपर लादने का प्रयत्न करते हैं, वहाँ मैं उनका विरोधी हूँ। मैं उनके धर्म का नहीं, अपितु उनकी धार्मिक असहिष्णुता का विरोध करता हूँ। आज यहाँ भी मैं वास्तव में इसी उद्देश्य से आया था कि खजुराहो के नागरिकों का ध्यान पश्चिम में उठ रही इस विपत्ति की ओर आकर्षित करूँ जो वर्षा के बादलों की भाँति शीघ्र ही यहाँ भी आ सकती है। तुरुष्क धर्मान्ध आततायी हैं। यदि वे यहाँ आ गये तो शैव, शाक्त, वैष्णव अथवा जैन, किसी को नहीं छोड़ेंगे। सबको लूटेंगे, सबको अपना धर्म स्वीकार करने पर विवश करेंगे। अतएव यह समय व्यर्थ के विवाद का नहीं, एकता, संगठन और उत्सर्ग का है। देश की रक्षा, धर्म की रक्षा, और आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए सब को एक होना होगा।''

शिवानन्द की वाणी में, उनके व्यक्तित्व में, और उनकी बातों में कुछ ऐसा था कि उनके खड़े होते ही सभा का वातावरण बदल गया था। उसमें गम्भीरता आ गयी थी, और सभी लोग बड़े ध्यान से उनकी बातें सुन रहे थे। सभी शान्त थे, केवल शिवानन्द की वाणी गूँज रही थी। उनके चुप होने पर भी कोई नहीं बोला।

तब शिवानन्द ने ही फिर कहा, ''और कोई प्रश्न ?''

इस बार राजशेखर ने कहा, ''महाराज, तुरुष्कों के सम्बन्ध में आपने जो कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
बताया है वह सर्वथा सत्य है। इस विषय में मतभेद असम्भव है। हम सबको एक होकर उनका विरोध करना चाहिए। परन्तु आपने धर्म की जो व्याख्या की है उसके सम्बन्ध में यदि आप अनुमति दें तो मैं कुछ पूछना चाहता हूँ।"

शिवानन्द ने ध्यानपूर्वक राजशेखर की ओर देखते हुए कहा, "पूछो।"

राजशेखर ने कहा, "मेरा प्रश्न यह है, महाराज, कि जिस ब्रह्म की उपासना करने को आप कह रहे हैं वह वस्तुत: है क्या ?"

शिवानन्द ने उत्तर दिया, "हम उसे सच्चिदानन्द कहते हैं, जिसका अर्थ यह हुआ कि वह सत् है, चित् है तथा आनन्द है। परन्तु यथार्थ में वह मस्तिष्क तथा वाणी से परे है, धारण तथा ध्यान से परे है, ज्ञाता, ज्ञात तथा ज्ञान से परे है, यथार्थ तथा मिथ्या की धारणाओं से भी परे है। उसे शब्दों की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता। जिस व्यक्ति ने कभी समुद्र न देखा हो उसे तुम किस प्रकार बताओगे कि समुद्र क्या है ? यही कहकर न कि समुद्र जल का एक विशाल पुंज है जहाँ चारों ओर जल ही जल होता है ? ब्रह्म को भी केवल इसी प्रकार समझाया जा सकता है। वह भी समुद्र के समान है। वह चेतना का एक असीम पुंज है। इस निखिल सृष्टि में सब ओर वही वह व्याप्त है।"

"यदि विश्व में सब ओर वही है तो हमें मिल क्यों नहीं पाता ?" राजशेखर ने पूछा।

"कौन कहता है कि नहीं मिल पाता ? परन्तु साधना से मिलता है। समुद्र में मोती होता है, परन्तु उसे प्राप्त करने के लिए बार-बार गहरे जल में पैठना पड़ता है।"

सोमेश्वर सोच रहा था कि उसे भी कुछ पूछना चाहिए। राजशेखर का ध्यान आकर्षित करने के लिए यह आवश्यक था। अतएव वह अवसर पाते ही बोला, "यदि स्वामीजी अनुमति दें तो एक प्रश्न मैं भी पूछना चाहता हूं।"

शिवानन्द ने कहा, "पूछो।"

"परन्तु मेरा प्रश्न धर्म से सम्बन्धित नहीं है," सोमेश्वर ने राजशेखर की ओर देखते हुए कहा।

"यह असम्भव है," शिवानन्द ने कहा। "जीवन का कोई अंग ही नहीं है जो धर्म से सम्बन्धित न हो।"

"मेरे प्रश्न का सम्बन्ध राजनीति से है," सोमेश्वर ने कहा।

"और राजनीति का सम्बन्ध धर्म से है। अपना प्रश्न पूछो।"

सोमेश्वर ने सशंकित भाव से चारों ओर देखते हुए कहा, "मैं यह पूछना चाहता हूँ कि राजा क्या वास्तव में ईश्वर का प्रतिनिधि होता है ?"

शिवानन्द ने कहा, "हाँ, राजा इस लोक में ईश्वर का प्रतिनिधि होता है।"

"अर्थात्, प्रजा को उसकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए ?"

"हाँ, प्रजा को राजा की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। परन्तु तुम पूछना क्या चाहते हो ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर ने कहा, "मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या राजा जो चाहे करे, प्रजा को किसी दशा में उसका विरोध नहीं करना चाहिए ?"

शिवानन्द विचार करने लगे। राजशेखर ने एक बार दृष्टि उठाकर सोमेश्वर की ओर देखा, परन्तु सोमेश्वर के मुख पर संध्या के घने होते हुए अन्धकार का आवरण पड़ने लगा था। मन्दिर के प्रांगण में प्रकाश की कोई व्यवस्था नहीं थी।

क्षण भर विचार करने के पश्चात् शिवानन्द ने कहा, "नहीं, यदि राजा गुण आचार और पौरुष के विरुद्ध आचरण करने लगे तो प्रजा को उसे राज्य का घाती समझ कर त्याग देना चाहिए। शुक्र-नीति की यही व्यवस्था है।"

"बस महाराज, मैं इतना ही जानना चाहता था।" यह कह कर सोमेश्वर उठ खड़ा हुआ।

अंधकार हो जाने के कारण लोग उठ-उठकर चलने लगे थे। प्रांगण में उस समय सोमेश्वर, राजशेखर तथा शिवानन्द के अतिरिक्त केवल तीन-चार व्यक्ति और रह गये थे जो सम्भवत: मन्दिर में ही रहते थे। सोमेश्वर भी द्वार की ओर बढ़ा। तभी राजशेखर ने उसके निकट आकर कहा, "क्या मैं आपका परिचय प्राप्त कर सकता हूँ ?"

सोमेश्वर ने निस्संकोच उत्तर दिया, "मैं रामनगर के सामन्त विशालदेव का पुत्र सोमेश्वर हूँ। और आप ?"

"मैं महाकाल की नगरी का निवासी राजशेखर हूँ। भ्रमण करता हुआ इधर आ निकला हूँ,।"

"खजुराहो आपका स्वागत करता है," सोमेश्वर ने कहा, "और मैं आपसे परिचित होकर गौरवान्वित हूँ।"

"मैं भी," राजेश्वर ने हँसते हुए कहा।

सोमेश्वर भी हँस पड़ा और हँसते ही हँसते फिर द्वार की ओर उन्मुख हुआ। उसे ऐसा करते देखकर राजशेखर ने फिर कहा, "क्या कुछ समय के लिए मेरा आतिथ्य स्वीकार नहीं करेंगे ? मैं यहीं मंदिर की पांथशाला में ठहरा हूँ।"

सोमेश्वर ने फिर उसकी ओर घूमकर कहा, "आप खजुराहो में अतिथि हैं, अतएव निमंत्रण मेरा होना चाहिए।"

"वह भी हो जाएगा। अभी मैं खजुराहो से जा नहीं रहा हूँ।"

सोमेश्वर ने कहा, "तो चलिये। आज यहाँ, कल मेरे आवास पर।"

१७

मंदिर के बाहर चतुर्भुज की तीन रेखाओं के आकार में पांथशाला की कोठरियाँ बनी थीं। चौथी रेखा के स्थान पर मंदिर स्थित था। कोठरियों की संख्या साठ से ऊपर थी और इनमें से अधिकांश सदा भरी रहती थीं। आकार में छोटी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होने के कारण इन्हें कोठरियाँ कहना ही अधिक उचित होगा, यद्यपि अपनी बनावट तथा स्वच्छता दोनों में वे 'कोठरी' शब्द की प्रचलित धारणा से भिन्न थीं। इन्हीं में से एक में राजशेखर ठहरा हुआ था।

जिस समय सोमेश्वर राजशेखर के पीछे-पीछे मंदिर से निकल कर उस कोठरी के निकट पहुँचा, उसका द्वार खुला हुआ था और एक काला, स्थूलकाय व्यक्ति उसके बाहर पैर फैलाये हुए बैठा था। यह राजशेखर का सेवक था जो विश्राम की मुद्रा में अपने स्वामी की प्रतीक्षा कर रहा था। स्वामी को आते हुए देखकर वह बड़ी तत्परता से उठकर कोठरी के भीतर चला गया जिसके परिणामस्वरूप राजशेखर और सोमेश्वर ने प्रवेश करने पर वहाँ दीपक जलता हुआ पाया। दीपक जलाकर सेवक फिर बाहर चला गया।

कोठरी मे प्रवेश करते ही जिस वस्तु ने सबसे पहले सोमेश्वर का ध्यान आर्कार्षित किया वह द्वार के दाहिनी ओर रखे हुए शस्त्रास्त्र थे। सोमेश्वर को उनकी संख्या तथा विविधता पर आश्चर्य हुआ। धनुष-वाण थे, दो लम्बे भाले थे, कई विविध आकारों के खड्ग तथा कृपाण थे, दो ढालें थीं, और उनके बीच में एक भारी गदा रखी थी। सोमेश्वर ने राजशेखर की ओर देखकर हँसते हुए टिप्पणी की, "आपने तो पूरा शस्त्रागार जोड़ रखा है।"

राजशेखर ने सहज स्वर में उत्तर दिया, "कुछ मार्ग के दस्युओं के लिए हैं, कुछ बन के पशुओं के लिए। आखेट मेरा व्यसन है।"

सोमेश्वर ने उत्साह प्रदर्शित करते हुए कहा, "आखेट में मुझे भी बड़ा आनंद आता है।"

राजशेखर ने कहा, "तो बोलिये, कब चलेंगे? कल ही क्यों न चला जाए? आप अन्यथा व्यस्त तो नहीं हैं?"

"नहीं, कल मुझे कोई कार्य नहीं है, और यदि होगा भी तो प्रतीक्षा करेगा। मुझे आखेट से अधिक प्रिय और कुछ भी नहीं है।"

राजशेखर ने कहा, "लगता है हमारी रुचियाँ एक-सी ही हैं। आपके और व्यसन क्या हैं?"

"जो एक सम्भ्रान्त युवक के होने चाहिए। अर्थात्, नृत्य-गान, द्यूत और प्रणय।"

"और सुरा-सेवन?" राजशेखर ने पूछा।

"यह भी कोई पूछने की बात है। सागर-मंथन से प्राप्त नवरत्नों में से एक ही तो मनुष्य को मिला है। क्या उसका भी आनंद न लूँ?"

राजशेखर ने हँसकर कहा, "इस आनन्द में भी मैं आपके साथ हूँ। जो सुरों को प्रिय है वह हमें प्रिय क्यों न हो? सुरा वास्तवव में एक अमूल्य रत्न है। उसके बिना संसार फीका लगता है, यौवन पंगु हो जाता है।"

"सुरा के बिना प्रेम निरानंद लगता है।"

"और कवि की कल्पना को विस्तार नहीं मिल पाता है," राजशेखर ने कहा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तभी उसे ध्यान आया कि उसके साथ सोमेश्वर भी अभी तक खड़ा ही है, और वह बोला, "परन्तु आप आसन तो ग्रहण करें।"

सोमेश्वर के आसन ग्रहण कर लेने के पश्चात् स्वयं भी बैठते हुए राजशेखर ने फिर कहा, "आजकल आप क्या कर रहे है ?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "मौज कर रहा हूँ, मित्र।"

"भाग्यशाली हैं आप।" राजशेखर ने टिप्पणी की।

"भाग्यशाली हूँ ? जिसके लिए इस विस्तृत संसार में करने को कुछ हो ही नहीं वह भाग्यशाली है ? मुझे ऐसा भाग्य नहीं चाहिए। इस निष्क्रियता से मेरा मन ऊब गया है। अब कुछ करना ही होगा।"

राजशेखर ने अनुभव किया कि इस व्यक्ति के भीतर कहीं कोई गहरा असंतोष है। उसकी उत्सुकता बढ़ी। उसने पूछा, "क्या करने का विचार है ?"

"यह अभी नहीं सोचा है।"

राजशेखर ने टटोलते हुए कहा, "क्या पहले भी कभी इस प्रकार का अनुभव हुआ है ?"

"हाँ, कई बार हो चुका है।"

"तब आपने क्या किया ?"

"कुछ नहीं। इसीका तो दुःख है। केवल मन मसोस कर रह गया हूँ। बहुत हुआ तो धनुष-वाण लेकर वन की ओर निकल गया हूँ।"

"मूक पशुओं पर मन का आक्रोश उतारने ?"

"हाँ, परन्तु उससे मन को शान्ति नहीं मिलती।"

राजशेखर ने कहा, "फिर ? भविष्य के लिए क्या सोचा है ?"

सोमेश्वर ने अकारण उत्तेजित होकर उत्तर दिया, "भविष्य ? क्या मेरा भी कोई भविष्य है ? मुझे तो नहीं लगता। हाँ, यह अवश्य सम्भव है कि एक-आध हत्या कर डालूँ।"

"किसकी ?" राजशेखर ने पूछा।

"अभी कैसे बता दूँ ? मैं स्वयं नहीं जानता। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि यदि ऐसा समय आया तो सोमेश्वर पक्षी नहीं मारेगा। किसी नाहर का ही आखेट करेगा।"

राजशेखर की यह धारणा दृढ़ होने लगी कि यह युवक काम का सिद्ध हो सकता है। परन्तु कुछ निश्चय करने से पूर्व उसके सम्बन्ध में और अधिक जानना आवश्यक था, और इसके लिए घनिष्टता आवश्यक थी। अतएव उसने कहा, "यहाँ मंदिर में केवल शुद्ध जल ही उपलब्ध हो सकता है, मैं आपका समुचित आतिथ्य किस प्रकार करूँ ? नगर में चलकर कोई उपयुक्त स्थान क्यों न खोजा जाए ?"

सोमेश्वर मानों इसकी प्रतीक्षा ही कर रहा था। तुरन्त उठकर खड़ा हो गया और बोला, "खोजने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, मेरी अपनी हवेली निकट ही है। उससे अधिक उपयुक्त स्थान और कौन होगा ? चलिये, कंठ भी सूख रहा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है।''

दोनों पांथशाला से निकल कर रामनगर की हवेली की ओर चल दिये। मार्ग में राजशेखर ने सविस्तार अपना परिचय दिया। उसने बताया कि वह कुलीन क्षत्रिय और अपने माता-पिता की एकमात्र सन्तान था। उसके पिता मालव राज्य के एक उच्च अधिकारी थे। राज-सभा में उनका सम्मान था, नगर के सम्मान्य जन उनका आदर करते थे। परन्तु दुर्भाग्यवश वे महाराज मुंज के कोप-भाजन बने। उनका कोई दोष नहीं था, और कारण भी कोई बड़ा नहीं था। परन्तु विधि के लेख को कौन मेट सकता था? माता का देहान्त पहले ही हो चुका था। अब पिता की मृत्यु के पश्चात् वह पूर्णतया अनाथ हो गया। उधर राज-कोप का भय भी था। अतएव अपने शुभचिन्तकों का परामर्श स्वीकार कर वह उज्जयिनी छोड़कर निकल खड़ा हुआ था और फिर लौटकर नहीं गया था। तब से वह निरन्तर भ्रमण ही करता रहा था। जहाँ मन रम जाता था वहाँ कुछ काल के लिए रुक जाता था, और फिर नये अनुभवों की खोज में वहाँ से भी चल पड़ता था। अभी तक उसे श्रीपुर तथा कान्यकुब्ज के नगर सबसे अच्छे लगे थे। श्रीपुर में वह पूरे एक वर्ष रहा था, और कान्यकुब्ज में इससे भी कुछ अधिक। इस प्रकार घूमता-फिरता वह अब खजुराहो आया था। जब तक मन रमेगा यहाँ रहेगा, फिर यहाँ से भी चला जाएगा। यहाँ से चलकर कहाँ जाएगा, इस सम्बन्ध में उसने अभी कुछ निश्चय नहीं किया था। यह भी निश्चित नहीं था कि यहाँ कितने दिन रहेगा। एक वर्ष, या दो वर्ष, या इससे भी अधिक रह सकता था, क्योंकि यहाँ की स्त्रियाँ उसे कान्यकुब्ज की रमणियों से अधिक रमणीय प्रतीत हो रही थीं। परन्तु वह निश्चय के साथ कुछ नहीं कह सकता था क्योंकि उसे खजुराहो आये अभी केवल तीन दिन हुए थे। हाँ, यह भी सम्भव था कि वह जीवन भर यहीं बना रहे। धन का उसके पास अभाव नहीं था। पिता उसके जीवन भर को बहुत छोड़ गये थे। अपना सारा धन वह यात्रा में भी अपने साथ ही रखता था। इस समय भी कई सहस्र मूल्य का कंठहार उसके शरीर पर था।

हवेली पहुँचकर दोनों सोमेश्वर के कक्ष में जा बैठे और सुरा-पान आरम्भ हुआ। तब सोमेश्वर ने भी अपनी यात्राओं के रोचक संस्मरण सुनाये। कश्मीर की रमणियों के सौन्दर्य तथा उनकी प्रेम-लीलाओं का वर्णन उसने विशेष विस्तार के साथ तथा साहित्यिक भाषा में किया। इस संदर्भ में उसने यह भी कह दिया कि खजुराहो की सुन्दरियाँ कश्मीर की किन्नरियों अथवा कान्यकुब्ज की प्रमदाओं से किसी प्रकार कम नहीं हैं।

राजशेखर को सोमेश्वर की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने के लिए विशेष प्रयास नहीं करना पड़ा। बीच-बीच में किये गये प्रश्नों द्वारा ही उसने जान लिया कि सामन्त विशालदेव का कनिष्ठ पुत्र होने के कारण सोमेश्वर उनकी गद्दी अथवा सम्पत्ति का अधिकारी नहीं हो सकता था। यही उसके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

असंतोष का कारण था। वह एक महत्वाकांक्षी युवक था, और जीवन में कुछ करना चाहता था। परन्तु इस दिशा में उसे अपने पिता से प्रोत्साहन अथवा सहायता की कोई आशा नहीं थी। अतएव वह महाराज के समक्ष प्रस्तुत हुआ था, परन्तु वहाँ भी निराशा ही हाथ लगी थी। महाराज ने उसे एक सामान्य सैनिक के रूप में सेना में प्रवेश करने का परामर्श दिया था।

इस स्थल पर आकर सोमेश्वर बहुत उत्तेजित हो गया। उसने कहा, "कहते हैं, सेनापति बनने के लिए पहले सैनिक होना आवश्यक है। तो इसी तर्क से राजा बनने के लिए पहले प्रजा होना क्यों आवश्यक नहीं है? युवराज प्रासाद में क्यों रहते हैं? प्रजा के बीच आकर रहें, समान श्रम करें, हल चलायें, तब मैं जानूँ कि सेनापति होने के लिए सैनिक बनना आवश्यक है। सत्ता के मद में सत्ताधारी यह क्यों भूल जाते हैं कि हम वीर ही उनकी सत्ता के आधार-स्तम्भ हैं? हमारे ही प्रयत्नों से राज्यों का निर्माण होता है, हम चाहें तो उन्हें मिटा भी सकते हैं।"

सोमेश्वर ने इसी प्रकार की और अनेक बातें भी कहीं। राजशेखर बिना कोई टिप्पणी किये सुनता रहा। परन्तु मन ही मन उसने यह निश्चय कर लिया कि यह युवक कभी काम का सिद्ध हो सकता है।

और जब बड़ी रात्रि गये, भोजन भी वहीं करने के पश्चात्, वह हवेली से विदा हुआ तब दोनों मित्र बन चुके थे, परस्पर सामीप्य-सूचक सर्वनाम 'तुम' का प्रयोग करने लग गये थे, और अगले दिन प्रातःकाल साथ-साथ आखेट के लिए जाने की योजना बना चुके थे।

१८

तीन दिन के भीतर सोमेश्वर राजशेखर को साथ,लेकर रत्नमाला के आवास पर जा पहुँचा। यद्यपि उसकी अपनी उत्सुकता कम नहीं थी, परन्तु राजशेखर को सन्देह का अवसर न देने के उद्देश्य से उसने अपनी ओर से अधिक आग्रह नहीं किया, अन्यथा इतना समय भी नहीं लगता।

रत्नमाला को मानों उनके आने की पूर्व-सूचना मिल चुकी थी। वह उनके स्वागत के लिए पूर्णतया तत्पर मिली। सोमेश्वर के साथ एक अपरिचित व्यक्ति को देखकर भी उसने आश्चर्य प्रकट नहीं किया।

सोमेश्वर ने जो उसे देखा तो देखता ही रह गया। शुभ्र परिधान और उजले फूलों के शृंगार में वह रम्भा, उर्वशी तथा मेनका के काल्पनिक वर्णनों की सार्थकता प्रमाणित कर रही थी। लगता था श्वेत वर्ण केवल उसके लिए, मात्र उसके ही लिए बना था।

अपनी कमल-नाल-सी भुजायें नमस्कार की मुद्रा में उठाकर दोनों का अभि-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वादन करते हुए रत्नमाला ने सोमेश्वर से कहा, "अहोभाग्य। आपने बड़ी प्रतीक्षा करायी।"

"अभी तो केवल पाँच दिन हुए हैं," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

'केवल ? और रातें ?" रत्नमाला ने कहा।

"हाँ, पाँच दिन और पाँच रातें।"

"आप जिन्हें केवल दिन और रातें कहते हैं किसी के लिए वे युगों और कल्पों के समान भी तो हो सकते हैं।" फिर राजशेखर को सम्बोधित करके वह बोली, "आप इनके मित्र हैं, आप ही निर्णय कर दीजिये।"

सोमेश्वर ने मुस्कराकर कहा, "इसकी आवश्यकता नहीं है। मैं स्वयं तुम्हारे पक्ष में निर्णय दे रहा हूँ। और तुमने सुधि दिला दी है तो परिचय भी करा दूं। ये मेरे मित्र राजशेखर जी हैं। महाकाल की नगरी के निवासी और इस समय खजुराहो के अतिथि हैं। तुम्हारी कला की प्रशंसा सुनकर तुम्हारे पास आये हैं। यह ध्यान रखना कि ये मेरे समान अज्ञ नहीं हैं। उज्जयिनी के श्रेष्ठतम कलाविदों का संग किये हुए हैं।"

रत्नमाला ने दोनों हाथ जोड़कर राजशेखर का फिर अभिवादन करते हुए कहा, "परन्तु आप लोग पहले आसन तो ग्रहण करें। शिष्टाचार और कला की बातें पीछे भी हो सकती हैं।"

दोनों के आसन ग्रहण करने के पश्चात् वह स्वयं भी बैठ गयी और बोली, "अब यह आदेश करें कि मैं आपका सत्कार किस प्रकार करूँ।"

सोमेश्वर ने विनोद करते हुए कहा, "जैसी तुम्हारी श्रद्धा हो। सत्कार भी क्या आदेश लेकर किया जाता है ?"

राजशेखर ने रत्नमाला को अपनी ओर निहारते हुए देखकर कहा, "मैं तुम्हारा संगीत सुनने आया हूँ, इस इच्छा की पूर्ति को ही सबसे बड़ा सत्कार मानूँगा।"

रत्नमाला ने कहा, "संगीत भी प्रस्तुत करूँगी। परन्तु पहले यह बताने की कृपा करें कि इस समय आप पेय कौन-सा ग्रहण करेंगे।"

रत्नमाला ने सोमेश्वर की बात का कोई उत्तर नहीं दिया था, परन्तु राजशेखर की बातों का दे रही थी। वास्तव में वह केवल राजशेखर को सम्बोधित करके इस प्रकार बातें कर रही थी मानों सोमेश्वर वहाँ उपस्थित ही न हो। सोमेश्वर को यह अच्छा नहीं लगा।

राजशेखर ने एक अर्थपूर्ण दृष्टि रत्नमाला की ओर डालते हुए कहा, "पेय तो वास्तव मे एक ही होता है।"

रत्नमाला मुस्करायी, जिसका अर्थ यह था कि उसने राजशेखर का संकेत समझ लिया है। तत्पश्चात् उसने दासी को बुलाकर अभ्यागतों के लिए मैरेय लाने का आदेश दिया। जब दासी चली गयी तो वह फिर राजशेखर को सम्बोधित करके बोली, "आज आपका आगमन मेरा परम सौभाग्य है। आप उज्जयिनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के निवासी हैं ?''

"हाँ, यह मेरा सौभाग्य है,'' राजशेखर ने कहा।

''और आप वहाँ के कलावंतों का संगीत सुन चुके हैं ?''

''इसे भी मैं अपना सौभाग्य ही मानता हूँ।''

''क्या आपने कभी वाक्पति मुंज का वीणा'वादन भी सुना है ?''

''हाँ, एक बार सुना है। परन्तु उस समय मुझे संगीत का अधिक ज्ञान नहीं थी।''

''आप निश्चय ही सौभाग्यशाली हैं। उज्जयिनी वास्तव में महान संगीतज्ञों की जन्म-भूमि है। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं उनमें से केवल एक को ही जानती हूँ। आर्य चारूमित्र से तो आप भी परिचित होंगे ?''

राजशेखर के मुख पर अनिश्चय की छाया आकर चली गयी। परन्तु रत्न-माला की दृष्टि से वह छिप नहीं सकी। उसने समझ लिया कि वह उत्तर खोज रहा है।

वह तुरन्त फिर बोली, ''मेरा तात्पर्य उन आर्य चारूमित्र से है जिनकी वीणा में सरस्वती का बास बताया जाता है। परन्तु वे एकान्त साधक हैं, इसलिए सम्भव है आप उनसे परिचित न हों।''

इस बार राजशेखर ने तत्परता के साथ उत्तर दिया, ''अच्छा ! तुम वीणा-वादक आचार्य चारूमित्र की बात कर रही हो ? उन्हें मैं जानता हूँ। उनका वीणा-वादन भी सुन चुका हूँ।''

रत्नमाला के मुख पर एक हलकी-सी मुस्कान खेल गयी।

दासी मैरेय लेकर आ गयी थी। रत्माला ने पात्र में उंडेल कर पहले राज-शेखर को दी, फिर सोमेश्वर को। स्वयं नहीं ली।

राजशेखर ने तुरन्त कहा, ''और तुम ? तुम नहीं लोगी ?''

तुम ! सोमेश्वर भीतर ही भीतर एक विचित्र-सी पीड़ा का अनुभव करके कराह उठा, मानों यह 'तुम' एक बड़ा, पैना शूल हो जो उसके अन्तस्थल तक प्रवेश कर गया हो और कसक रहा हो। इस 'तुम' का अर्थ यह था कि राजशेखर कुछ ही क्षणों में रत्नमाला के उतने ही निकट पहुँच गया था जितना सोमेश्वर अब तक, इतने दिनों में पहुँच पाया था।

रत्नमाला ने राजशेखर की ओर दृष्टि उठाकर मुस्कराते हुए अर्थपूर्ण स्वर में कहा, ''मुझे क्षमा करें, मैं केवल विशेष अवसरों पर ही इसे ग्रहण करती हूँ।''

उत्तर में राजशेखर भी मुस्करा दिया।

सोमेश्वर रत्नमाला का अर्थ तो नहीं ग्रहण कर सका, परन्तु राजशेखर का इस प्रकार मुस्कराना उसे अच्छा नहीं लगा। उसके भीतर कहीं कुछ शूल-सा फिर कसक उठा। परन्तु उसने कुछ कहा नहीं। राजशेखर को अपना पात्र उठाते हुए देखकर उसने भी ऐसा ही किया और दोनों मौन सुरा-पान करने लगे।

वार्तालाप का क्रम फिर आरम्भ करते हुए रत्नमाला ने राजशेखर से पूछा,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"खजुराहो में आपका आगमन कब हुआ ?"

राजशेखर ने उत्तर दिया, "अभी एक सप्ताह भी पूरा नहीं हुआ है। यों समझ लो कि खजुराहो में अभी तक मैं केवल एक पुरुष और एक स्त्री से परिचित हो पाया हूँ। पुरुष मेरे मित्र सोमेश्वर जी हैं, और स्त्री तुम हो।"

"आप किसी विशेष प्रयोजन से पधारे है ?"

"नहीं, विशेष कोई प्रयोजन नहीं है। पर्यटक मात्र हूँ। जो एक पर्यटक का प्रयोजन होता है वही मेरा भी है, अर्थात् नये-नये स्थान देखना, नये-नये व्यक्तियों से परिचय प्राप्त करना, और नये नये उपकरणों से अपने व्यसनों की तुष्टि खोजना।"

सोमेश्वर के मन में बार-बार यह विचार उठता था कि उसे भी कुछ कहना चाहिए। परन्तु क्या कहे, यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था, और उससे भी बड़ी समस्या यह थी कि यदि कुछ कहे भी तो कैसे कहे। वे दोनों उसे अवसर ही नहीं दे रहे थे, उसकी ओर देख भी नहीं रहे थे। वे इस प्रकार बातें कर रहे थे मानों प्रस्तुत नाटक के मुख्य पात्र वे ही हों और सोमेश्वर एक श्रोता मात्र हो।

रत्नमाला ने फिर कहा, "तब तो आप अनेक नये-नये स्थान देख चुके होंगे ?"

"हाँ, अनेक देख चुका हूँ और न जाने कितने अभी और देखने हैं। मेरे भाग्य में भटकते रहना ही लिखा है। ?"

"खजुराहो में कब तक का कार्यक्रम है ?" रत्नमाला ने पूछा।

राजशेखर ने कहा, "अभी कुछ निश्चय नहीं है। जब मेरा कोई सुनिश्चित प्रयोजन ही नहीं है तो कार्यक्रम किस प्रकार सुनिश्चित हो सकता है ? वास्तव में इस सम्बन्ध में मैं स्वयं अपना स्वामी नहीं हूँ।"

"फिर कौन है ?" रत्नमाला ने हँसते हुए पूछा।

"स्वर और सौन्दर्य," राजशेखर ने उत्तर दिया। "मैं स्वर और सौन्दर्य का दास हूँ। जब तक जहाँ ये वासनायें तुष्ट होती रहती हैं मैं वहाँ अटका रहता हूँ। खजुराहो में सौन्दर्य का अनुपम भंडार तो मैंने पा लिया है, यदि स्वर का भी मिल गया तो मुझे यहीं जमा समझो। परन्तु अब और अधिक प्रतीक्षा न कराओ। मैं उतावला हो रहा हूँ।"

"अभी प्रस्तुत करती हूँ," कहकर रत्नमाला ने दासी को बुलाया और अपनी वीणा लाने का आदेश दिया।

राजशेखर ने अपना रिक्त पात्र नीचे रख दिया था। रत्नमाला ने उसे उठाकर फिर भरा और राजशेखर की ओर बढ़ा दिया। उसे लेते हुए राजशेखर ने अनावश्यक रूप से रत्नमाला की उंगलियों का स्पर्श कर लिया और क्षण-भर के लिए अपना हाथ वहाँ से नहीं हटाया। उसकी यह क्रिया इतनी खुलकर की गयी थी कि सोमेश्वर ने भी उसे देखा। उसे लगा मानों उसके भीतर चुभा हुआ शूल सहसा विषाक्त हो गया हो।

दासी वीणा लाकर रख गयी थी। रत्नमाला ने सधे हुए हाथों से उसके तार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कसे, स्वर मिलाये, और वादन आरम्भ कर दिया। सोमेश्वर भी आज पहली वार ही उसका वीणा-वादन सुन रहा था। उसे संगीत का अधिक ज्ञान नहीं था, स्वर की विशेष पहचान नहीं थीं। परन्तु इतना वह भी देख सकता था कि वीणा हाथ में लेते ही रत्नमाला की मुद्रा में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया था। उसकी पलकें थोड़ी झुक गयीं थीं, मानों उसने अपने आपको सम्पूर्ण विश्व से विलग कर लिया हो। उसके अधरों में एक नैसर्गिक विस्तार आ गया था, मानों वह अपने द्वारा उत्पन्न स्वरों पर स्वयं रीझ रही हो। उसका सिर लय के साथ हिल रहा था। पहले की स्थूल रत्नमाला—वह अनुपम सौन्दर्यवाली किन्तु हाड़-मांस की कामिनी—न जाने कहाँ चली गयी थी, और उसका स्थान सम्पूर्ण राग-द्वेष और चिन्ता-क्लेश से मुक्त एक नयी, सूक्ष्म रत्नमाला ने ले लिया था। अब वह नारी नहीं रह गयी थी, मूर्तिवती रागिनी बन गयी थी।

रत्नमाला ने आलाप आरम्भ किया। उसका स्पर्श इतना कोमल, इतना सूक्ष्म था कि स्वर दूर से आती हुई गूँज से प्रतीत हो रहे थे। राजशेखर मंत्र-मुग्ध-सा सुन रहा था। उसकी आँखें मुँद गयीं थीं, अधर कभी-कभी विकसित हो जाते थे, और शिर स्वरों के आरोह-अवरोह के साथ झूम रहा था। सोमेश्वर कभी-कभी राजशेखर की ओर भी देख लेता था, अन्यथा उसकी विस्मित दृष्टि साकार कला-सी सुन्दर रत्नमाला के मुख पर जमी हुई थी।

परन्तु स्वर का सम्मोहन सहसा टूट गया। आलाप समाप्त होते ही रत्नमाला ने वीणा एक ओर रख दी और कहा, "बस, आज इतना ही।"

राजशेखर ने मानों स्वप्न से जागते हुए कहा, "अद्‌भुत ! विलक्षण !"

औपचारिकता का निर्वाह करते हुए सोमेश्वर ने भी कहा, "सुन्दर !"

रत्नमाला ने सिर झुकाकर दोनों को धन्यवाद दिया।

राजशेखर ने फिर कहा, "परन्तु तुम सहसा रुक क्यों गयीं ? अभी तो आलाप ही हुआ है।"

रत्नमाला ने कहा, "आज मैं पूर्ण स्वस्थ नहीं अनुभव कर रही हूँ। सारे शरीर में पीड़ा है। क्षमा-प्रार्थी हूँ, मुझे विश्राम की आवश्यकता है।"

राजशेखर ने कुछ नहीं कहा। वह खोया खोया बैठा था, मानों वीणा के स्वर अभी तक उसके कानों में गूंज रहे हों। सोमेश्वर ने उसे झकझोरते हुए कहा, "सुना नहीं ? हमें प्रस्थान का आदेश मिल चुका है।" और वह स्वयं उठकर खड़ा हो गया।

चलते समय रत्नमाला ने कहा, "फिर कब दर्शन होंगे ?"

"कल," राजशेखर ने तुरन्त उत्तर दिया।

सोमेश्वर ने अकारण ही वाक्य पूरा करते हुए कहा, "हाँ-हाँ, हम लोग कल फिर आएंगे।"

सहसा राजशेखर ने कहा, "मुझे भैरवी विशेष प्रिय है।"

रत्नमाला ने कहा, "प्रातःकाल के लिए मुझे क्षमा करें। उस समय मैं चित्र-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कला का अभ्यास करती हूँ।"

सोमेश्वर को एक विषय मिला जिस पर वह भी कुछ कह सकता था। उसने पूछा, "तुम्हारा वह चित्र पूरा हो गया ?"

रत्नमाला ने हाथ जोड़कर उन्हें विदा करते हुए उत्तर दिया, "अभी केवल रेखायें बन पायी हैं। रंग भरने का प्रयास करती हूँ तो वे उभरते ही नहीं है। परन्तु मैं भी कृतसंकल्प हूँ। पूरा करके ही रहूँगी।"

मार्ग में दोनों मित्र मौन ही रहे। केवल एक बार राजशेखर ने मौन भंग करके कहा, "लगता है इस जीवन का अंत खजुराहो में ही होगा।"

परन्तु सोमेश्वर ने इसके उत्तर में भी कुछ नहीं कहा। उसके भीतर चुभा हुआ शूल बहुत पीड़ा दे रहा था। उसकी आँखों में कई चित्र एक साथ तिर रहे थे, उसके कानों में कई वाक्य एक साथ गूँज रहे थे, और उसके मस्तिष्क में कई विचार एक साथ उठकर उलझ गये थे।

१९

कई दिन तक यही क्रम चलता रहा। दोनों सन्ध्या को रत्नमाला के यहाँ जाते थे। कुछ इधर-उधर की बातें होती थीं, जिनमें सोमेश्वर को अधिकांशतः श्रोता बनकर रहना पड़ता था। रत्नमाला उनका सत्कार करती थी और वीणा सुनाती थी। सोमेश्वर बैठा-बैठा कभी-कभी राजशेखर का और अधिकांश रत्नमाला का मुख देखता रहता था।

राजशेखर के व्यवहार और वार्तालाप में स्पष्ट परिवर्तन हो रहा था। अब वह पहले दिन की अपेक्षा अधिक गम्भीर रहने लगा था, कामुकता की चेष्टायें नहीं करता था, और अर्थपूर्ण दृष्टि से रत्नमाला की ओर देखकर हँसता नहीं था। वस्तुतः अब उसकी दृष्टि ही बदल गयी प्रतीत होती थी। सोमेश्वर ने कई बार उसे रत्नमाला की ओर एक विचित्र भाव से निहारते हुए देखा था। स्वयं सोमेश्वर के प्रति भी उसका व्यवहार अब पहले जैसा नहीं रह गया था। बाह्य रूप से उसमें अधिक परिवर्तन नहीं हुआ था, परन्तु अब वह पहले की भाँति खुलकर बातें नहीं करता था और घनिष्ठता बढ़ाने के लिए पहले की भाँति उत्सुक नहीं प्रतीत होता था। उसके सम्पूर्ण व्यवहार में एक प्रकार की उदासीनता आ गई थी और वह प्रत्येक समय कुछ खिचा-खिचा रहता था।

परिवर्तन सोमेश्वर में भी हो रहा था, परन्तु वह इस प्रकार का नहीं था। वह अपने भीतर एक विचित्र प्रकार की उद्विग्नता का अनुभव करने लगा था जिसकी तीव्रता प्रति दिन बढ़ती ही चली जा रही थी। उसे अब राजशेखर के साथ रहना और हँसना-बोलना अच्छा नहीं लगता था, परन्तु इस सम्बन्ध में वह विवश था। रत्नमाला के प्रति वह अपने मन में रोष पाता था, जिसका कारण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसकी समझ में नहीं आता था। वह कहना बहुत कुछ चाहता था, रत्नमाला से भी और राजशेखर से भी, परन्तु नीतिवश अथवा भीतिवश कह कुछ नहीं पाता था। इसके परिणामस्वरूप वह अधिकाधिक आत्म-केन्द्रित होता जा रहा था और भरे बादल-सा अपने ही भीतर घुमड़ता रहता था।

परन्तु रत्नमाला के आचरण में परिवर्तन नहीं हुआ था। पहले दिन की भाँति वह अब भी राजशेखर की ही ओर उन्मुख रहती थी, उससे ही बातें करती थी, उसको ही संगीत सुनाती थी। कभी-कभी वह सोमेश्वर की बातों का उत्तर भी राजशेखर को सम्बोधित करके देती थी।

एक दिन रत्नमाला ने राजशेखर के विशेष अनुरोध पर मौखिक संगीत भी प्रस्तुत किया। जो गीत उसने गाया वह विप्रलंभ शृंगार का था। उसमें एक विरह-दग्धा नायिका के भावों का बड़ा मार्मिक वर्णन किया गया था।

गीत समाप्त होने पर राजशेखर, अपने स्वभाव के अनुसार, कुछ क्षण तक आँखें भीचे मौन बैठा रहा। परन्तु सोमेश्वर उस दिन मौन न रहने का निश्चय करके आया था। गौण बने रहना अब उसके लिए असह्य हो गया था। अतएव उसने तुरन्त टिप्पणी की, "गीत का निर्वाह बड़ा सुन्दर था, परन्तु उसका भाव मुझे अस्वाभाविक प्रतीत होता है।"

यह सुनकर राजशेखर ने आँखें खोल दीं और कहा, "नहीं मित्र, गीत का भाव बड़ा स्वाभाविक और मार्मिक है। उसी के कारण तो इतना सुन्दर निर्वाह सम्भव हुआ है।"

"मुझे अस्वाभाविक प्रतीत होता है," सोमेश्वर ने हठपूर्वक कहा।

"क्यों भला ? उसमें अस्वाभाविक क्या है ?" राजशेखर ने पूछा।

रत्नमाला मौन, विना वक्ताओं की ओर देखे, बिना शिर उठाये, यह विवाद सुन रही थी और कुछ सोच रही थी।

सोमेश्वर ने अकारण ही उत्तेजित होते हुए कहा, "क्या अस्वाभाविक है ? मैं कहता हूँ इसमें स्वाभाविकता का लेश भी नहीं है। इसकी सम्पूर्ण भाव-भूमि अस्वाभाविक है।" अभी उसके मस्तिष्क में अपनी बात पुष्ट करने वाला कोई तर्क नहीं आया था, परन्तु वह खोज रहा था और खोजने के लिए अवकाश चाहता था।

राजशेखर ने कहा, "तो बताते क्यों नहीं, इसमें क्या अस्वाभाविक है ?"

सहसा सोमेश्वर की आँखों में एक चमक दिखायी दी। उसे एक तर्क मिल गया था। उसने कहा, "गीत का भाव सर्वथा अस्वाभाविक है। इसमें एक नायिका की विरह-भावना का वर्णन किया गया है। परन्तु नायिका की विरहानुभूति एक अस्वाभाविक कल्पना मात्र है। जो प्रेम करना ही नहीं जानता उसे विरह की अनुभूति कैसे होगी ?"

"फिर किसे होगी ?" राजशेखर ने कहा।

"जो प्रेम करता है उसे। अर्थात् नायक को, पुरुष को। स्त्री के लिए प्रणय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
एक क्रीड़ा मात्र है। वह केवल स्थिर जल में कंकड़ी फेंकना जानती है। प्रेम के गहन-गम्भीर सागर में डूबना-उतराना उसके वश का नहीं होता। यह सामर्थ्य केवल पुरुष में होती है।"

रत्नमाला ने दृष्टि उठाकर एक बार सोमेश्वर की ओर देखा। दृष्टि मिलते ही सोमेश्वर ने अपनी आँखें नीची कर लीं। रत्नमाला के अधरों पर एक अत्यन्त सूक्ष्म मुस्कान थी जिसे वह देख नहीं पाया।

राजशेखर ने कहा, "तर्क के लिए प्रमाण आवश्यक होता है।"

सोमेश्वर ने कहा, "कालिदास को मानोगे? महाकवि ने यक्ष को ही विरही माना है, उसी के विरह का वर्णन किया है।"

"ऐसा नहीं है। यक्ष की प्रियतमा का वर्णन भी किया गया है।"

सोमेश्वर ने कहा, "महाकवि ने नहीं किया है। अपनी प्रियतमा के विरह का वर्णन स्वयं यक्ष ने किया है। अतएव उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। मेरी दृष्टि में यह यक्ष के अहम् का आरोप मात्र था जिसे कवि ने शब्द दे दिये हैं। अहम्-भावना के वशीभूत प्रत्येक पुरुष यही समझता है कि उसकी प्रेमिका उसके बिना व्याकुल होगी, खान-पान बिसराकर कृश हो गयी होगी, और उसके विरह में जली जा रही होगी। परन्तु यह भ्रान्ति है। यक्ष जब मेघ को अपना संदेश दे रहा था उस समय तक अलकापुरी में उसकी प्रियतमा ने सम्भवतः अपने लिए कोई नया प्रेमी खोज लिया होगा।"

वाक्य पूरा करते-करते उसने एक दृष्टि रत्नमाला की ओर डाली। वह उस समय उसकी ही ओर देख रही थी। उसके अधरों पर अब भी वही अस्पष्ट मुस्कान थी। सोमेश्वर ने फिर अपनी दृष्टि नीची कर ली।

रत्नमाला ने अत्यन्त मधुर स्वर में कहा, "और शकुन्तला के विरह का वर्णन किसने किया है?"

राजशेखर ने कहा, "हाँ। और इनके तर्क के विपक्ष में कृष्ण और गोपियों का उदाहरण भी दिया जा सकता है।"

सोमेश्वर के पास रत्नमाला की बात का कोई उत्तर नहीं था, परन्तु राजशेखर को उत्तर दिये बिना वह रहना नहीं चाहता था। अतएव उसने कहा, "प्रस्तुत संदर्भ में गोपियों का उदाहरण समीचीन नहीं है। उनके प्रेम का आधार लौकिक नहीं था।"

राजशेखर ने थोड़ा झुँझलाकर कहा, "मैं तर्क के लिए तर्क नहीं करना चाहता, और न तुम्हारे तर्क से कभी सहमत हो सकता हूँ। पुरुष भी प्रेम करता है, स्त्री भी करती है। पुरुष की अपनी प्रेम करने की रीति होती है, स्त्री की अपनी। पुरुष का प्रेम स्वभावतः दूध के उफान जैसा होता है। वह प्रवल, उद्दाम तथा दुर्निवार होता है, परन्तु समर्पणशील नहीं होता। पुरुष स्वयं समर्पण नहीं करता। वह समर्पण माँगता है और आधे से सन्तुष्ट होना नहीं जानता। परन्तु जैसे दूध का उफान जल के दो-चार छींटों से, शान्त हो जाता है

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
उसी प्रकार पुरुष का प्रेम भी शीघ्र ही अपना वेग खो देता है। उसके प्रेम में केवल वेग होता है, गहराई नहीं होती, स्थिरता भी नहीं होती। वह बार-बार प्रेम करता है, और कभी सन्तुष्ट नहीं होता। इसके विपरीत नारी जीवन में केवल एक बार प्रेम करती है, और पूर्ण तुष्टि पाती है। उसका प्रेम पुरुष की भाँति ग्रहणशील नहीं होता, वह समर्पणशील होता है। उसमें सागर का ज्वार नहीं होता, अग्नि का दाह नहीं होता, सूर्य की किरणों का प्रखर ताप भी नहीं होता। उसमें होती है चन्द्रिका की स्निग्ध कान्ति, चन्दन की पावन शीतलता, और कुसुम की कोमलता, और कस्तूरी की गंध जो प्रदत्त होकर ही सार्थकता प्राप्त करती है। नारी जब प्रेम करती है तो धरती की उदारता भी लज्जित हो जाती है। वह बिना कुछ पाये, बिना कुछ पाने की इच्छा किये, सब कुछ दे डालती है। अतएव विरह की अनुभूति केवल नारी ही कर सकती है। पुरुष उसकी पूर्ण कल्पना भी नहीं कर सकता।''

सोमेश्वर के उत्तर में कुछ कहने से पूर्व ही रत्नमाला बोल उठी, "आर्य राजशेखर ठीक कह रहे हैं।''

सोमेश्वर का मुख रक्तवर्ण हो गया। उसने कहा, "और मैं? मैं ठीक नहीं कह रहा हूँ?''

"नहीं। आप अभी इस सम्बन्ध में अधिक नहीं जानते।''

सोमेश्वर तिलमिला उठा और स्वर को ऊँचा करके बोला, "मैं नहीं जानता? और तुम जानती हो?''

रत्नमाला ने पूर्ववत् मुस्कराते हुए सहज मधुर स्वर में उत्तर दिया, "हाँ, आप अभी नहीं जानते। मैं जानती हूँ।''

इस उत्तर से मर्माहत होकर सोमेश्वर मौन हो गया, और फिर मौन ही रहा। राजशेखर के साथ रत्नमाला के यहाँ से लौटते हुए वह मार्ग में भी एक शब्द नहीं बोला। हवेली में आकर उसने भोजन नहीं किया। रात्रि में बिलम्ब तक सो भी नहीं सका। लेटा रहा, और करवटें बदलता रहा, और सोचता रहा; न जाने क्या-क्या सोचता रहा।

२०

अगली सन्ध्या को जब राजशेखर रत्नमाला के यहाँ पहुचा तो सोमेश्वर उसके साथ नहीं था। रत्नमाला को यह देखकर विशेष आश्चर्य नहीं हुआ। उसने बड़े उदासीन भाव से, मानो उत्तर की अपेक्षा ही न हो इस प्रकार प्रश्न किया, "आज आपके मित्र नहीं आये?''

राजशेखर ने उत्तर दिया, "मैं स्वयं उन्हें लेने गया था, परन्तु सोमेश्वर जी अपनी हवेली में नहीं मिले। प्रातःकाल ही आखेट के लिए निकल गये थे, और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
अभी तक नहीं लौटे हैं।''

और इस प्रकार केवल दो वाक्यों में सोमेश्वर की बात आयी-गयी हो गयी, और नित्य का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। मदिरा प्रस्तुत करने में रत्नमाला आज नित्य की अपेक्षा अधिक उदारता का प्रदर्शन कर रही थी। यह राजशेखर ने भी लक्ष्य किया, और इस संकेत से प्रोत्साहित होकर उसने रत्नमाला से भी थोड़ी-सी ग्रहण करने का अनुरोध करना आरम्भ किया। अन्त में, उसके बार-बार अनुरोध करने पर रत्नमाला ने उसे स्वीकार भी कर लिया।

फिर संगीत की बारी आयी। आज राजशेखर को उसका संगीत भी और दिनों की अपेक्षा अधिक मादक प्रतीत हुआ।

संगीत समाप्त होते ही राजशेखर ने बिना किसी संकोच अथवा प्रस्तावना के अपनी कामना व्यक्त कर दी। उसने कहा, ''आज की रात्रि मैं यहीं व्यतीत करूँगा।''

''यह सम्भव नहीं होगा,'' रत्नमाला ने उत्तर दिया।

राजशेखर को थोड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा, ''क्यों?''

''मेरी इच्छा।''

राजशेखर मुस्कराया, ''मेरी भी कुछ इच्छा है।''

''उसकी पूर्ति में मैं आपकी सहायता नहीं कर सकूँगी।''

''क्यों?''

''नहीं कर सकूँगी, बस।''

राजशेखर इस प्रकार के अनेक युद्धों का विजेता था। बोला, ''मैं मुंहमाँगा मूल्य दूंगा। बोलो, कितना?''

रत्नमाला इसके उत्तर में कुछ नहीं बोली, केवल मुस्कराकर रह गयी। परन्तु राजशेखर की उत्तेजना बढ़ती जा रही थी। उसने स्वर को और ऊँचा करते हुए कहा, ''बोलो न, कितना? जो कहोगी, दूंगा।''

रत्नमाला के अधरों पर अब भी मुस्कान थी। वह बोली, ''आप नहीं दे सकेंगे।''

''क्यों? मैं प्रतिज्ञा कर रहा हूँ। दूंगा, अवश्य दूंगा'' राजशेखर समझ रहा था कि यह सब उसे अधिकाधिक उत्तेजित करके उससे अधिक से अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है।

रत्नमाला ने कहा, ''आप कभी वचन देकर उसे भंग भी करते हैं?''

''नहीं, मेरा वचन कभी भंग नहीं होता।''

रत्नमाला हँसती हुई बोली, ''तो फिर इस समय प्रतिज्ञा न करें।''

''परन्तु क्यों?'' उसने अत्यधिक उत्तेजित स्वर में पूछा।

''इसलिए कि आप उसे पूरी नहीं कर सकेंगे। आप मेरा मूल्य नहीं दे सकेंगे। मेरा यह शरीर अमूल्य है। इसका मूल्य कुबेर के कोष में भी नहीं है।''

राजशेखर के स्वर और उसकी चेष्टाओं में उत्तेजना की मात्रा उत्तरोत्तर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बढ़ती ही जा रही थी। उसने कहा, "पहेलियाँ मत बुझाओ, रत्नमाला। मेरा मन इस समय अपने वश में नहीं है।"

परन्तु रत्नमाला ने अपने सहज संयत स्वर में ही उत्तर दिया, "ऐसी दशा में आपको अपना मन वश में रखने का प्रयास करना चाहिए। मैं पहेलियाँ नहीं बुझा रही हूँ, वही कह रही हूँ जो यथार्थ है।"

राजशेखर ने कहा, "यह मत भूलो, रत्नमाला, कि तुम एक नगरवधू हो। तुम्हारे शरीर पर उस प्रत्येक पुरुष का अधिकार है जो उसका मूल्य दे सकता है। तुम अपना मूल्य माँग सकती हो, परन्तु मुझे अस्वीकार नहीं कर सकतीं।"

"यह आपका भ्रम है," रत्नमाला ने उत्तर दिया। "मैं आपको अस्वीकार कर सकती हूँ, और कर रही हूँ, क्योंकि मैं नगरवधू नहीं हूँ। मेरी यह अस्वीकृति अन्तिम है।"

"तुम नगरवधू नहीं हो?"

"नहीं। मैं नगरवधू नहीं हूँ। पहले थी, परन्तु अब नहीं हूँ। अब मेरे शरीर पर किसी का अधिकार नहीं है। वास्तव में अब इस पर मेरा भी अधिकार नहीं है।"

राजशेखर ने कहा, "तुम्हारी कोई बात मेरी समझ में नहीं आ रही है।"

"इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मैं जो कुछ कह रही हूँ स्पष्ट कह रही हूँ, ऐसी भाषा में कह रही हूँ जिसका केवल एक अर्थ हो सकता है।"

राजशेखर ने कहा, "परन्तु तुम्हारा वह एक अर्थ मेरी बुद्धि में नहीं आ रहा है। तुम्हारा यह शरीर तुम्हारा नहीं तो किसका है?"

"किसी और की थाती है," रत्नमाला ने कहा।

"और वह सौभाग्यशाली कौन है?" राजशेखर ने पूछा।

"यह बताने के लिए मैं बाध्य नहीं हूँ।"

"और मैं भी जानना आवश्यक नहीं ससझता हूँ। मुझे केवल तुमसे प्रयोजन है, किसी अन्य व्यक्ति से नहीं। मुझे केवल तुम्हारी आवश्यकता है। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। क्यों करता हूँ, यह मैं स्वयं नहीं जानता हूं। सम्भवतः मुझे नहीं करना चाहिए। परन्तु करता हूं, और विक्षेप की सीमा तक करने लगा हूं। मैं तुम्हें साधन बनाना चाहता था, परन्तु तुम स्वयं साध्य बन गयी हो। तुम्हारे संगीत ने मुझे एक ऐसे धरातल पर पहुंचा दिया है जहाँ प्रतिस्पर्धा निरर्थक लगती है, प्रतिद्वंद्विता का विचार ही मन में नहीं आता। लगता है तुम्हारे संगीत के ही कारण मैं तुमसे इतना अधिक प्रेम करने लगा हूं।"

रत्नमाला ने कहा, "अपने संगीत की प्रशंसा के लिए आभारी हूं। उसे सेवा में प्रस्तुत करने में न कभी संकोच किया है, न करूंगी।"

"परन्तु उतने से मेरी तुष्टि नहीं होती। मैं तुम्हें सम्पूर्ण पाना चाहला हूं। मैं सौगंध खाकर कहता हूं मैं तुमसे प्रेम करत हूं, हृदय से प्रेम करता हूं, इतना प्रेम करता हूं जितना कभी किसी पुरुष ने किसी स्त्री को नहीं किया होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने एक बार दृष्टि उठाकर उसकी ओर देखा और उसके अधरों पर एक हलकी-सी मुस्कान खेल गयी। उसने कहा, "जो व्यक्ति अपना परिचय देने में भी असत्य का प्रयोग करता है उसकी सौगंध का विश्वास कौन करेगा ?"

परन्तु राजशेखर इससे हतप्रभ नहीं हुआ। उसने निस्संकोच उत्तर दिया, "तुम्हारा आरोप सत्य है। मैंने पहले अपना सत्य परिचय नहीं दिया था। उसका कारण था। उस समय मैं तुमसे इतना प्रेम नहीं करता था। परन्तु यह भेद तुम्हें किस प्रकार ज्ञात हुआ ?"

रत्नमाला ने हँसकर कहा, "आपसे ही ज्ञात हुआ। जो व्यक्ति अपने आपको उज्जयिनी के प्रसिद्ध वीणा-वादक आचार्य चारूदत्त से भली प्रकार परिचित बताता है वह कभी उज्जयिनी का निवासी नहीं हो सकता।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि उज्जयिनी में इस नाम का कोई वीणा-वादक नहीं है। यह नाम वस्तुतः कल्पना-प्रसूत था। प्रश्न परिहास की भावना से पूछा गया था। परन्तु आप उसका उत्तर देते हुए गम्भीर हो गये थे। तभी मैंने जान लिया था कि आप उज्जयिनी के निवासी नहीं हैं और आपका नाम भी संभवतः वह नहीं होगा जो आप बताते हैं।"

प्रशंसा-सूचक दृष्टि से रत्नमाला की ओर देखते हुए राजशेखर ने कहा, "तुम स्वर, सौन्दर्य और बुद्धि, तीनों में अनुपम हो। मुझे उस व्यक्ति से बड़ी ईर्ष्या हो रही है जो न जाने किस प्रकार तुम्हारे हृदय में आ बसा है। तुम उसका परिचय नहीं देना चाहती हो तो न दो। मैं भी आग्रह नहीं करूँगा। परन्तु एक बात अवश्य जानना चाहता हूँ। बता सकोगी ?"

रत्नमाला ने कहा, "पूछिये, बता सकूँगी तो अवश्य बता दूँगी।"

"क्या वह भी तुमसे इतना ही प्रेम करता है जितना मैं करता हूँ, अथवा जितना तुम उससे करती हो ?"

इस प्रश्न से रत्नमाला तनिक संकुचित हुई। क्षण-भर वह धरती की ओर देखती मौन बैठी रही, मानों निर्णय न कर पा रही हो कि क्या कहे। फिर उसने अत्यन्त धीमे स्वर में कहा, "सम्भवतः नहीं।"

"इस सम्भचतः का क्या अर्थ समझूँ ?" राजशेखर ने पूछा।

"मैं नहीं जानती।"

"जिसका अर्थ यह हुआ कि वह तुमसे प्रेम नहीं करता है। आभागा !"

"यह भी मैं नहीं कह सकती।"

क्षण-भर विचारमग्न रहने के पश्चात् राजशेखर ने सहसा फिर प्रश्न किया, "क्या वह व्यक्ति सोमेश्वर है ?"

रत्नमाला ने उसांस-सी भरते हुए कहा, "हाँ।"

राजशेखर के मुख पर प्रसन्नता की एक लहर-सी दौड़ गयी। उसने कहा, "तब तो मैं आशा कर सकता हूँ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने कहा, "मेरी ओर से आशा न रखें।"

राजशेखर ने हँसकर कहा, "यदि सोमेश्वर मेरा प्रतिद्वंद्वी है तो मैं आशा ही नहीं, अपनी सफलता का विश्वास कर सकता हुँ। प्रेम के युद्ध में मैं उसे सरलता-पूर्वक परास्त कर लूँगा।"

"आपका प्रयोजन फिर भी सिद्ध नहीं होगा।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि प्रेम मैं करती हूँ, और मैं प्रेम के इस युद्ध का पुरस्कार नहीं बनायी जा सकती।"

"मैं तुम्हें भी बदल लूँगा।"

"यह असम्भव है", रत्नमाला ने कहा।

राजशेखर ने उत्तर दिया, "प्रेम असम्भव को भी सम्भव बना सकता है, रत्नमाला। मैं यह प्रमाणित करके दिखा दूँगा। यह सत्य है कि मैंने आरम्भ में अपना ठीक परिचय नहीं दिया था, और इस कारण तुम्हारा मुझपर विश्वास न करना भी स्वाभाविक है। परन्तु उस समय मैं तुन्हें एक नगरवधू मात्र समझता था जिसकी दृष्टि में परिचय का अधिक महत्त्व नहीं होता। इसके अतिरिक्त मेरे आत्म-गोपन का एक गम्भीर कारण भी था, और वह आज भी है। अन्यथा अपना यथार्थ परिचय देने में मुझे प्रसन्नता ही होती। परन्तु मैं तुम्हें विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि उचित अवसर आते ही मैं अपना यथार्थ परिचय देने में संकोच नहीं करूँगा, और तब तुम मुझे सर्वथा अस्वीकार्य भी नहीं समझोगी।"

"मेरी स्थिति में तब भी कोई परिवर्तन नहीं होगा," रत्नमाला ने कहा।

राजशेखर ने कहा, "यह मत भूलो, रत्नमाला, कि तुम्हें प्राप्त करने के अन्य उपाय भी हैं। परन्तु मैं तुम्हें हृदय से प्रेम करने लगा हूँ, और केवल शरीर ही नहीं, तुम्हारा मन भी प्राप्त करना चाहता हूँ। इसके लिए मुझे प्रेम की स्पर्धा करनी होगी।"

सहसा विषयान्तर करते हुए रत्नमाला ने कहा, "विहाग सुनेंगे ?" और उसने निकट रखी हुई वीणा उठाली।

परन्तु राजशेखर उठकर खड़ा हो गया और बोला, "नहीं, इस समय मैं विहाग सुनने की मनःस्थिति में नहीं हूँ। तुम्हें रुचता हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं जा रहा हूँ। मैं इस समय एकान्त में बैठकर विचार करना चाहता हूँ, और तुम्हें भी विचार करने का समय देना चाहता हूँ। कल फिर आऊँगा।"

यह कहता हुआ वह कक्ष से बाहर निकल गया।

रत्नमाला कुछ क्षण तक द्वार के बाहर शून्य में निहारती रही। फिर उसने वीणा पर अत्यन्त विलम्बित लय में बिहाग का आलाप बजाना आरम्भ कर दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

२१

अगले दिन प्रातःकाल सोमेश्वर फिर आखेट के लिए निकल जाना चाहता था। उसने निश्चय कर लिया था कि वह अब रत्नमाला के यहाँ नहीं जाएगा, और यदि गया भी तो राजशेखर के साथ नहीं जाएगा।

परन्तु वह स्नानादि से निवृत्त ही हुआ था कि मल्लिका हवेली में आ उपस्थित हुई और बोली, "स्वामिनी ने आपको बुलाया है।'

दासी से अधिक कुछ कहना उचित न समझकर सोमेश्वर ने संक्षिप्त उत्तर दिया, "अच्छा।"

परन्तु मल्लिका इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुई। उसने कहा, "स्वामिनी ने कहा है कि कार्य बहुत आवश्यक है।"

सोमेश्वर ने प्रयत्न करके अपने ऊपर नियन्त्रण रखते हुए कहा, "सुन लिया। कह देना, आऊँगा।"

"परन्तु स्वामिनी ने अभी बुलाया है," मल्लिका बोली।

इस बार सोमेश्वर के लिए अपने ऊपर नियंत्रण रखना कठिन हो गया। उसने झुँझलाकर कहा, "अभी मुझे अवकाश नहीं है।"

"परन्तु कार्य वहुत आवश्यक है, कुँवरजी। स्वामिनी ने कहा है कि प्रार्थना मानकर अथवा आदेश समझ कर, जैसे भी हो, आप तुरन्त आने की कृपा करें।"

आदेश समझ कर! सोमेश्वर के मस्तिष्क को एक झटका-सा लगा। उसकी आँखों के सामने महामंत्री का चित्र उभर आया। अपने कार्यालय में बैठे वे उससे कह रहे थे—इसके पश्चात् अपने आदेश तुम्हें रत्नमाला से प्राप्त होंगे। वह जैसा कहे वैसा ही करना।

तभी उसने सुना, "कुँवरजी, स्वामिनी ने मुझसे अविलम्ब लौटने को कहा है। मैं जाकर उन्हें क्या उत्तर दूँ?"

सोमेश्वर कुछ क्षण मौन धरती की ओर देखता रहा। फिर उसने मल्लिका की ओर देखे बिना कहा, "जा, कह देना मैं अभी आ रहा हूँ।"

मल्लिका प्रणाम करके चली गयी। सोमेश्वर कुछ काल तक वहीं बैठा न जाने क्या-क्या सोचता रहा। उसे अपने ऊपर बड़ी झुँझलाहट लग रही थी। यह रत्नमाला उसे मनमाना नाच नचा रही थी, मानों वह उसके हाथों में कठपुतली मात्र हो। कभी प्रेम का अभिनय करती थी तो कभी इस प्रकार उपेक्षा करने लगती थी मानों उसका अस्तित्व ही न हो। वह और सब कुछ स्वीकार कर सकता था, परन्तु इस प्रकार नगण्य समझा जाना उसे सह्य नहीं था। रत्नमाला पर बड़ा क्रोध आ रहा था।

कुछ समय पश्चात् उसने उठकर धीरे-धीरे अपने वस्त्र धारण किये, खड्ग लिया, और रत्नमाला के आवास का मार्ग पकड़ा। उस समय उसकी मानसिक स्थिति क्रोध के विस्फोट-विन्दु तक पहुँच चुकी थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला उसे प्रतीक्षा करती हुई मिली, और देखते ही फूल-सी खिल उठी। परन्तु सोमेश्वर की अपनी प्रसन्नता पर तुषारपात-सा हो गया था, अतएव उसे रत्नमाला की प्रसन्नता भी अच्छी नहीं लगी। उसने भरे-भरे स्वर में कहा, "सेवक उपस्थित है, और आदेश करें।"

रत्नमाला के उल्लास में तनिक भी अन्तर नहीं आया। उसने हँसते हुए कहा, "और आदेश करूँ ? लीजिये, प्रस्तुत हैं। क्रम-संख्या एक—कुँवर जी आसन ग्रहण करने की कृपा करें।"

तत्परता के साथ आसन ग्रहण करते हुए वह बोला, "और ?"

रत्नमाला ने कहा, "हाँ। क्रमसंख्या दो, अब यह बताने की कृपा करें कि कल आप राजशेखर के साथ यहाँ क्यों नहीं आये थे ?"

सोमेश्वर ने, मानों इस प्रकार का प्रश्न पूछा जाना ही उसकी दृष्टि में एक अनधिकार चेष्टा हो ऐसे स्वर में, उत्तर दिया, "कल मैं आखेट के लिए गया था।"

रत्नमाला ने कृत्रिम गम्भीरता प्रकट करते हुए कहा, "अर्थात्, किसी और का क्रोध निरीह पशुओं पर उतारने ?"

"क्या आखेट के लिए भी मुझे तुमसे आदेश प्राप्त करने होंगे ?" सोमेश्वर विग्रह के लिए तत्पर था।

परन्तु रत्नमाला ने अत्यन्त स्निग्ध स्वर में कहा, 'अच्छा, एक बात पूँछू ? बतायेंगे ?"

"पूछो," सोमेश्वर ने प्रहार-सा करते हुए कहा।

"बतायेंगे ?"

'कह तो दिया। पूछो।"

"अभी ठीक से कहाँ कहा ?"

"ठीक से कैसे कहा जाता है ?"

"ऐसे कहिये कि मुझे विश्वास हो जाए।"

"कहा तो, बताऊँगा।"

"एक ही बार तो कहा है। एक बार कहने से विश्वास नहीं होता। तीन बार कहिये। बोलिये, कह रहे हैं ? नहीं तो जाइये, मैं भी नहीं पूछूँगी।" यह कहकर रत्नमाला ने मान की मुद्रा बनाली।

सोमेश्वर ने झुँझलाकर कहा, "लो, तीन बार भी कहे देता हूँ। बताऊँगा, बताऊँगा, बताऊँगा। बस ?"

"रत्नमाला ने कहा, "नहीं, अभी ठीक से नहीं हुआ।"

"क्यों ? तीन बार नहीं हुआ ?"

"हाँ, तीन बार हुआ। परन्तु ठीक से कहाँ कहा ?"

"फिर कैसे कहा ?"

"अभी तो झुँझलाकर कहा है।"

अन्तिम वाक्य कहते हुए रत्नमाला ने ऐसी मुद्रा बनायी कि सोमेश्वर के लिए

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और अधिक गम्भीर बने रहना असम्भव हो गया। वह प्रयत्न करने पर भी अपनी हँसी को रोक नहीं सका। परन्तु रत्नमाला ने उसकी इस हँसी में साथ नहीं दिया। उसे हँसाकर वह सहसा गम्भीर हो गयी और बोली, "हाँ, अब ठीक हो गया। अब बताइये कि आपने ऐसा क्यों किया। क्या आपने एक बार भी यह सोचा कि राजशेखर को यहाँ अकेले आने देकर आपने मुझे किस विपत्ति में डाल दिया है?"

"इसकी चिन्ता मुझे क्यों होनी चाहिए?" सोमेश्वर ने एक बार फिर गम्भीर होने का प्रयास करते हुए कहा।

रत्नमाला ने कहा, "हाँ, यह मैं आपको बता सकती हूँ। आपको इसकी चिन्ता इसलिए होनी चाहिए कि आप मेरे अभिभावक और संरक्षक हैं।"

सोमेश्वर का क्रोध अब किसी सीमा तक शान्त हो चुका था। उसने कहा, "एक बात और बता सकती हो?"

"बताऊँगी। पूछिये।"

"मैं तुम्हारा अभिभावक और संरक्षक भला किस अधिकार से हूँ?"

"विजेता के अधिकार से," रत्नमाला ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"सो कैसे?" सोमेश्वर ने पूछा।

"आप यह क्यों भूल जाते हैं," रत्नमाला ने कहा, "कि मेरा उस दिन के बाद का जीवन आपका दिया हुआ है? आज यदि मैं जीवित हूँ तो आपके कारण, और इसलिए मुझ पर आपका प्रत्येक अधिकार है।"

"क्या वे लोग तुम्हारी हत्या कर देते?"

"नहीं, वे मेरी हत्या सम्भवतः नहीं करते, और यदि करना चाहते भी तो अवसर नहीं पाते। क्या आप समझते हैं कि वे दुष्ट मुझे जीवित ले जा सकते थे?' रत्नमाला ने अपने वस्त्र के नीचे हाथ डाल कर वक्ष-प्रदेश से एक छोटी-सी चाँदी की डिबिया निकाली और उसे हथेली पर रखकर सोमेश्वर को दिखाते हुए फिर कहना आरम्भ किया, "इसमें तत्काल घातक प्रभाव करनेवाला विष है, और इसे मैं सदा अपने पास रखती हूँ। उस दिन यदि आप न भी आते तो वे लोग मेरा अपहरण करके नहीं ले जा सकते थे। परन्तु ईश्वर की इच्छा और ही कुछ थी। मेरे सौभाग्य से आप आ गये, और इसके प्रयोग का अवसर नहीं आने पाया। अतएव मुझपर, मेरे इस शरीर पर, और मेरी सम्पूर्ण सम्पत्ति पर यदि आपका अधिकार नहीं है तो और किसका हो सकता है? मैं आपसे केवल इतना पूछना चाहती हूँ कि एक दिन प्राण हथेली पर रखकर आपने जिसकी रक्षा की, अब केवल तनिक से अकारण क्रोध के कारण उसीको भारी विपत्ति में डाल देना कहाँ तक उचित है?"

अपने कार्य का औचित्य सिद्ध करना सोमेश्वर को बहुत कठिन प्रतीत हुआ, अतएव उसने रत्नमाला के प्रश्न का उत्तर न देकर स्वयं प्रश्न किया, "तो मेरे एक दिन न आने से तुम्हारे ऊपर कौन-सी भारी विपत्ति आ पड़ी है?"

"भारी है कि नहीं, यह निश्चय के साथ नहीं कह सकती। परन्तु वह विपत्ति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अवश्य है और आपके एक दिन न आने के कारण ही उठ खड़ी हुई है। शीघ्र ही आप स्वयं उससे प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त करेंगे। परन्तु पहले यह वचन दीजिये कि फिर कभी ऐसा क्रोध नहीं करेंगे, और यथा सम्भव राजशेखर को यहाँ अकेले नहीं आने देंगे। विवशता की बात और है, परन्तु सामान्यतया आप साथ ही रहेंगे। यदि फिर रुष्ट न हों तो एक बात और कहूँ।"

"कहो।"

"इसे भी आप मेरा आदेश समझ सकते हैं।" यह कहकर रत्नमाला हँस दी।

हँसी में योग देते हुए सोमेश्वर ने कहा, "और कुछ?"

"अभी नहीं। परन्तु जब होगा तो बताने में संकोच नहीं करूँगी।"

"तुम्हारी विपत्ति से मेरा प्रत्यक्ष परिचय कब होगा?"

रत्नमाला ने कहा, "उसके लिए आपको अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। आज संध्या को ही हो जाएगा।"

"तो अभी क्यों नहीं बता देती हो?"

"अभी बताने की बात नहीं है। सन्ध्या को वीणा-वादन समाप्त होते ही आप कोई आवश्यक कार्य बताकर कुछ समय के लिए यहाँ से चले जाएँगे। बाहर आपको मल्लिका मिलेगी। वह आपको पृष्ठ-द्वार से पार्श्व के कक्ष में ले आएगी जहाँ गुप्त रूप से बैठे हुए आप यहाँ की सारी बातें सुन सकेंगे। तब आप स्वयं अनुमान लगा लेंगे कि आपने मुझे किस विपत्ति में डाल दिया है। जब आप यह भली प्रकार समझ लें तो फिर इस कक्ष में लौट आने की कृपा करें।"

"जो आज्ञा। और कुछ?" सोमेश्वर ने विनोद करते हुए कहा।

"हाँ, एक आदेश और है। बातों-बातों में मुझे स्मरण ही नहीं रहा कि आपने अभी कलेवा नहीं किया होगा। उठिये, भीतर चलिये।"

कलेवा करने के पश्चात् अपनी हवेली की ओर लौटते हुए सोमेश्वर ने अपने आपको बहुत हलका अनुभव किया। कई दिन से उसके आकाश पर जो बादल छाये थे वे आज की इस भेंट के परिणामस्वरूप छँट गये थे। उजली धूप निकल आयी थी। ऊपर नीला आकाश हँस रहा था, और नीचे हरी-भरी धरती मुस्करा रही थी।

२२

उस दिन संध्या को सोमेश्वर स्वयं राजशेखर को लेने जैन-मंदिर जा पहुँचा और दोनों साथ-साथ रत्नमाला के आवास की ओर चले। दोनों ओर संकोच था, दोनों मौन थे।

परन्तु आधे मार्ग में राजशेखर ने मौन भंग करते हुए पूछा, "रत्नमाला के साथ तुम्हारा परिचय तो बहुत दिनों का होगा?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मुझे खजुराहो में आये ही अभी बहुत दिन नहीं हुए हैं," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

राजशेखर ने फिर कहा, "घनिष्ठता देखकर मैंने सोचा था कि परिचय बहुत दिनों का होगा।"

सोमेश्वर ने कहा, 'ऐसी बात नहीं है। परन्तु तुम चाहते क्या हो ?" प्रातः काल रत्नमाला से मिले संकेत के कारण वह राजशेर की प्रत्येक बात को संदेह की दृष्टि से देख रहा था।

राजशेखर ने कहा, "चाहता कुछ नहीं हूँ, यों ही जिज्ञासावश पूछ रहा था।"

"एक बार के उत्तर से तुम्हारी जिज्ञासा शान्त नहीं होती क्या ?" सोमेश्वर ने तनिक तीखे स्वर में कहा।

परन्तु राजशेखर ने भी मानों हतोत्साहत न होने का निश्चय कर रखा था। वह तुरन्त फिर बोला, "रत्नमाला अच्छी स्त्री है।"

"हाँ-आँ," सोमेश्वर ने रुखे स्वर में कहा।

"जैसी सुन्दर है वैसी ही गुणवती भी है।"

"हाँ, सुन्दर है। गुणवती भी है।"

"संगीत में उसकी पैंठ बड़ी गहरी है।"

"अवश्य होगी।"

"क्यों ?" राजशेखेर ने सोमेश्वर के मुख पर दृष्टि गड़ाकर कहा।

"तुम जो कह रहे हो। तुम असत्य थोड़े ही कहोगे," सोमेश्वर ने अत्यन्त निर्विकार भाव से उत्तर दिया।

राजशेखर ने कहा, "आज तुम्हें हो क्या गया है ? कैसी बातें कर रहे हो ?"

सोमेश्वर ने कहा, "यही प्रश्न मैं भी तुमसे पूछ सकता हूँ। तुम आज मुझसे इस प्रकार के प्रश्न क्यों कर रहे हो ?"

"मेरा एक प्रयोजन है। मैं एक बात जानना चाहता हूँ।"

"क्या ?"

राजशेखर चलते-चलते खड़ा हो गया। उसने सोमेश्वर की बाँह पकड़ ली और उसके मुख पर दृष्टि गड़ा कर कहा, "मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या··· क्या तुम रत्नमाला से प्रेम करते हो ?"

प्रश्न इतना अप्रत्याशित था कि क्षण भर के लिए सोमेश्वर स्तब्ध रह गया। परन्तु उसने यत्नपूर्वक यह भाव राजशेखर पर नहीं प्रकट होने दिया।

उत्तर में विलम्ब होते देखकर राजशेखर ने फिर कहा, "बोलो, क्या तुम रत्नमाला से प्रेम करते हो ? क्या तुम्हारे मौन को स्वीकृति का लक्षण समझूँ ?"

एक बार तो सोमेश्वर के मन में आया कि वह तनिक भी दुराव न करे, और स्पष्ट शब्दों में कह दे कि हाँ, मैं रत्नमाला से प्रेम करता हूँ, और इतना प्रेम करता हूँ कि उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। परन्तु फिर उसने, कुछ सोचकर, ऐसा न करने का निश्चय किया, और कहा, "तुम यह क्यों जानना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहते हो ?"

"जिज्ञासा, केवल जिज्ञासा," राजशेखर ने उत्तर दिया।

इतनी देर में सोमेश्वर ने यह निश्चय कर लिया था कि उसे क्या कहना है। वह बोला, "देखता हूँ तुम्हारी जिज्ञासा बड़ी तीव्र है। क्या उसे यह जानकर संतोष होगा कि मैं रत्नमाला से प्रेम नहीं करता हूँ? मेरा और उसका सम्पर्क संयोग से हुआ और उसी आधार पर चल रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि वह सुन्दरी है, और गुणवती भी है। परन्तु इस कारण उससे प्रेम करना आवश्यक नहीं है। वह एक नगर वधू है। हमारे समाज में नगरवधुएँ मनोरंजन के लिए होती हैं, प्रेम करने के लिए नहीं। तुम यदि उससे प्रेम करना चाहो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। परन्तु मेरी प्रेम की धारणा इतनी निम्न नहीं है।"

राजशेखर ने उसका हाथ छोड़ दिया और दोनों फिर साथ-साथ चल दिये। कुछ क्षण पश्चात् राजशेखर ने कहा, "तुम इतने उत्तेजित क्यों हो गये थे? मैंने तो केवल विनोद किया था।"

"जानता हूँ।"

"फिर?"

"मैं भी विनोद ही कर रहा था," सोमेश्वर ने कहा।

शेष मर्ग भर दोनों अपने-अपने विचारों में खोये हुए मौन चलते रहे।

यह मौन रत्नमाला के यहाँ पहुँचकर भी तुरन्त नहीं टूटा। सोमेश्वर तो वैसे ही अधिक नहीं बोलता था, आज राजशेखर ने भी उसका अनुकरण करना सीख लिया था। और तो और, आज रत्नमाला भी वार्तालाप के लिए अधिक उत्सुक नहीं प्रतीत होती थी। उसने दोनों का सत्कार करने के पश्चात् तुरन्त अपनी वीणा उठा ली।

वीणा-वादन समाप्त होते ही सोमेश्वर उठकर खड़ा हो गया और बोला, "मैं थोड़े समय के लिए क्षमा चाहता हूँ। मुझे स्मरण ही नहीं रहा था कि आज गुरुवार है।"

राजशेखर ने आँखे खोलते हुए कहा, "क्यों? क्या हुआ?"

रत्नमाला बोली, "क्या आपको कहीं जाना है?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "जाना कहीं नहीं हैं। केवल अपने श्रेष्ठि से भेंट करके कुछ प्राप्ति कर लेनी है। अधिक समय नहीं लगेगा। मैं अभी लौटकर आ रहा हूँ।"

राजशेखर ने उत्साहहीन स्वर में कहा, "मैं भी साथ चलूँ?"

"नहीं, इतनी प्राप्ति नहीं होनी है। तुम तब तक यहीं बैठकर एक गीत और सुनो, मैं अभी आ रहा हूँ। विलम्ब नहीं होगा।" यह कहता हुआ सोमेश्वर कक्ष से बाहर निकल गया।

उसके जाने के पश्चात् राजशेखर फिर गम्भीर और मौन हो गया। रत्न-माला ने मदिरा से भरकर पात्र उसके हाथ में पकड़ा दिया। परन्तु उसने बिना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ कहे पात्र लेकर सामने रख लिया और स्थिर दृष्टि से रत्नमाला की ओर देखना आरम्भ किया। रत्नमाला भी कुछ क्षण मौन, दृष्टि नीची किये बैठी रही। फिर उसने अपनी वीणा उठा ली।

इसी समय भीतर के द्वार से मल्लिका ने कक्ष में प्रवेश किया। वह रत्नमाला के निकट आकर बोली, "देवी ने मुझे स्मरण किया था ?"

"नहीं तो," रत्नमाला ने कहा। परन्तु तुरन्त ही, मानों कुछ सोचकर वह फिर बोली, "हाँ, तुझे जो कार्य बताया था वह पूर्ण हो गया ?"

"हाँ, देवी," मल्लिका ने उत्तर दिया।

"तो ठीक है ! तू जा।"

मल्लिका जिस ओर से आयी थी उसी ओर लौट गयी, और रत्नमाला की उँगलियाँ वीणा के तारों को स्पर्श करने लगीं। परन्तु राग का स्वरूप निर्धारित होने से पूर्व ही, केवल स्वर सुनकर, राजशेखर चौंक उठा और अत्यधिक उत्तेजित स्वर में बोला, "फिर विहाग ! बंद करो इसे। मैं कहता हूँ इसे बंद करो। मैं तुमसे विहाग नहीं सुनना चाहता। तुम्हारी यह मूर्खता मुझे असह्य हो चली है।"

रत्नमाला ने वीणा एक ओर रखते हुए कहा, "कौन-सी मूर्खता ? मैं आपका तात्पर्य नहीं समझी।"

राजशेखर ने फिर कुछ क्षण स्थिर दृष्टि से रत्नमाला की ओर देखा। तत्पश्चात् उसने पहले मदिरा का पात्र सामने से उठाकर उसे एक घूँट में रिक्त कर दिया, और फिर पहले से भी अधिक उत्तेजित स्वर में कहना आरम्भ किया, "कौन-सी मूर्खता ? वही जिसे तुम प्रेम समझती हो, जिसके कारण तुम विहागमयी हो रही हो। तुम्हारा यह प्रेम एक भारी मूर्खता है।"

रत्नमाला ने अत्यन्त शान्त स्वर में, मानों उसे चिढ़ाते हुए, कहा, "बस ? यही कहने के लिए आप इतने उत्तेजित हो रहे थे ?"

"हाँ, यही कहने के लिए।" राजशेखर को और कोई उत्तर नहीं सूझ पड़ा।

"तो अपनी उत्तेजना का अपव्यय न करें। यह कोई नयी बात नहीं है। प्रेम सदा से मूर्खता का पर्याय रहा है।"

"परन्तु तुम्हारा प्रेम सर्वथा निष्प्रयोजन है, भावना का अपव्यय मात्र है।"

"क्यों ?" रत्नमाला ने पूछा।

"तुम जिसके लिए विहाग छेड़ती हो वह तुम्हारी तनिक भी चिन्ता नहीं करता, तुमसे तनिक भी प्रेम नहीं करता है।"

"आप क्या ज्योतिषी हैं ?" रत्नमाला ने व्यंग के स्वर में कहा।

"मैं ज्योतिषी नहीं हूँ, परन्तु इतना जानता हूँ कि सोमेश्वर तुमसे प्रेम नहीं करता है। कभी कर भी नहीं सकता है।"

"भविष्य में भी नहीं ?"

"नहीं।"

"अगले जन्म में भी नहीं ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजशेखर ने झुँझलाकर कहा, "नहीं। अगले जन्म में भी नहीं। प्रलय तक भी नहीं। कभी नहीं।"

रत्नमाला ने कहा, "आप तो त्रिकालज्ञ प्रतीत होते हैं। क्या कुछ और बताने की भी कृपा करेंगे?"

राजशेखर ने कहा, "नहीं, मैं और कुछ बताने की कृपा नहीं करूँगा। मैं त्रिकालज्ञ नहीं हूँ, मुझे और कुछ ज्ञात नहीं है।"

"फिर यह एक बात कैसे ज्ञात हुई?"

"मैंने स्वयं सोमेश्वर से पूछा था। वास्तव में पूछने की भी आवश्यकता नहीं थी। मुझे पहले से ज्ञात था। तुमसे कह भी चुका हूँ।"

रत्नमाला ने परिहास के स्वर में कहा, "तो आप स्वयं उनसे पूछ चुके हैं! तब तो आपकी बात निश्चय ही सत्य होगी, और मुझे उस पर विश्वास करना चाहिए। परन्तु मुझे फिर भी विश्वास नहीं हो रहा है।"

राजशेखर ने परिहास की ध्वनि को अनसुनी करते हुए कहा, "तुम्हें विश्वास करना ही होगा, रत्नमाला।"

रत्नमाला ने कहा, "अभी तो मैं ऐसी किसी विवशता का अनुभव नहीं कर रही हूँ। आप की बात भी कुछ पुरानी लग रही है। आपने उनसे कब पूछा था?"

"बात पुरानी नहीं, आज की है।"

"आपने आज पूछा?"

"हाँ, आज।"

"और उन्होंने क्या कहा?"

"उसके शब्द दुहराकर मैं तुम्हारे हृदय को आघात नही पहुँचाना चाहता हूँ। उनका तात्पर्य वही था जो मैं बता चुका हूँ, अर्थात् उस ओर प्रेम का लेश भी नहीं है।"

"मैं उन्हीं के शब्द सुनना चाहती हूँ। आप निश्चिन्त रहें, मेरा हृदय पर्याप्त कठोर है। वह किसी भी आघात को सहन कर सकता है।"

"तुम्हारा हृदय कितना कठोर है यह कोई मुझसे पूछे", राजशेखर ने उसाँस भर कर कहा।

"आप से ही पूछ रही हूँ। बताइये, उन्होंने क्या कहा?"

"सुनना ही चाहती हो तो सुनो। उसने कहा कि नगरवधुएँ मनोरंजन के लिए होती हैं, प्रेम करने के लिए नहीं।"

रत्नमाला ने मुस्कराकर कहा, "ठीक ही तो कहा उन्होंने।"

"ठीक ही तो कहा? अर्थात् तुम मनोरंजन के लिए हो?"

"नहीं, अब नही हूँ। परन्तु पहले थी। तब मैं नगरवधू थी, अब नहीं हूँ।"

राजशेखर ने आश्चर्य से उसकी ओर देखते हुए कहा, "तब थी, अब नहीं हो! तुम्हारा तात्पर्य क्या है? तुम्हारी प्रत्येक बात आश्चर्य में डालने वाली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होती है।"

"परन्तु असत्य नहीं होती, और मेरा तात्पर्य वही है जो मैं कह रही हूँ। जब नगरवधू थी तब मैं भी मनोरंजन की वस्तु थी। परन्तु अब मैंने अपने नगरवधूत्व का परित्याग कर दिया है।"

राजशेखर ने कहा, "तुम कह रही हो तो ऐसा ही होगा। परन्तु मैं पूछना चाहता हूँ कि ऐसे प्रेम से भला लाभ ही क्या है?"

रत्नमाला ने मुस्कराकर उत्तर दिया, "हानि-लाभ का लेखा करना व्यापारियों का कार्य है, मेरा नहीं। मैं तो केवल इतना जानती हूँ कि प्रेम को लाभ की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। इस अनोखे व्यापार में लाभ से हानि होती है और हानि लाभ बन जाती है।"

"परन्तु यदि दूसरा पक्ष प्रेम का अनादर करे?"

"दूसरे पक्ष को ऐसा करने का पूरा अधिकार है।"

"और तुम फिर भी उससे प्रेम करती रहोगी?"

"हाँ, यह मेरा अधिकार है," रत्नमाला ने कहा।

"ऐसे अपात्र से तुम कब तक प्रेम करती रहोगी?"

"जब तक वह सुपात्र नहीं बन जाता, जब तक उसका हृदय-परिवर्तन नहीं हो जाता।"

राजशेखर ने कहा, "तब क्या मुझे भी ऐसा ही नहीं करना चाहिए?"

"आपको भी पूरा अधिकार है," रत्नमाला ने उत्तर दिया।

राजशेखर ने धीमे गम्भीर स्वर में कहा, "करूँगा। मैं भी ऐसा ही करूँगा। परन्तु मैं अनन्त काल तक प्रतीक्षा नहीं कर सकूँगा। मेरा प्रेम इतना निष्प्राण नहीं है। जब तक धैर्य्य है तब तक तुम्हारे हृदय-परिवर्तन की प्रतीक्षा करता रहूँगा, परन्तु उसकी सीमा पार होते ही मेरा प्रेम मुझसे क्या नहीं करा लेगा. यह मैं स्वयं अभी नहीं कह सकता। जब प्राप्त करना ही अभीष्ठ हो जाए तो प्राप्ति के और उपाय भी हो सकते हैं। यह भली प्रकार समझ लो।"

रत्नमाला का मुख रक्तवर्ण हो गया। उसने कहा, "यदि आपका उद्देश्य मुझे भयभीत करना है तो वह सिद्ध नहीं होगा। परन्तु मुझे विवश होकर आपके साथ अशिष्टता का व्यवहार करना पड़ेगा। अब आप यहाँ से पधारने की कृपा करें, और फिर कभी आने का कष्ट न करें।"

राजशेखर ने एक बार रत्नमाला की ओर देखा और फिर स्वर को यथासम्भव कोमल बनाते हुए कहा, "मेरा यह उद्देश्य नहीं था, रत्नमाला। उत्तेजनावश मुख से निकल गया, उसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। प्रेम ने मेरी बुद्धि को कुंठित कर दिया है। लगता है तुम्हारे बिना मैं अधिक समय तक जीवित भी नहीं रह सकूँगा।"

रत्नमाला दूसरी ओर देखती हुई मौन बैठी रही।

राजशेखर ने फिर कहा, "मैं तुमसे विनती करता हूँ, रत्नमाला, मेरी उपेक्षा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न करो। मुझे स्वीकार कर लो । मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम्हें राजरानी बना दूंगा।"

"कहाँ की ?" रत्नमाला ने व्यंग के स्वर में पूछा।

राजशेखर ने उत्तर में कुछ कहने के लिए मुख खोला ही था कि सोमेश्वर ने कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा, "मुझे अधिक समय तो नहीं लगा ?"

उसे देखते ही रत्नमाला उठकर खड़ी हो गयी और बोली, "नहीं, आपको अधिक समय नहीं लगा। परन्तु मुझे भी आज एक आवश्यक कार्य है, अतएव अब क्षमा चाहती हूँ।" फिर राजशेखर को सम्बोधित करके उसने कहा, "उस सम्बन्ध में कल और बात हो सकेगी।"

उस दिन रत्नमाला के यहाँ से लौटते हुए सोमेश्वर की मनोदशा बड़ी विचित्र थी। एक ओर उसे अपने साथ मौन चल रहे राजशेखर पर क्रोध आ रहा था, और दूसरी ओर उसका मस्तिष्क यह सोच-सोचकर विजय-भावना से भर जाता था कि अपने आपको उसका प्रतिद्वंद्वी समझने वाला यह व्यक्ति वास्तव में कितना निरीह, कितना मूर्ख है। रत्नमाला के कई वाक्य अब भी उसके कानों में गूंज रहे थे। उनकी सुधि आते ही वह पुलक-पुलक उठता था।

उसने एक दृष्टि अपने प्रतिद्वंद्वी की ओर डाली। राजशेखर उसे कीट-पतंग से भी तुच्छ प्रतीत हुआ, और वह स्वयं बढ़कर इतना बड़ा हो गया था कि धरती और आकाश के बीच समा नहीं रहा था। उसे लगा मानों उसका शिर आकाश से टकरा रहा है और उसके पैर धरती पर नहीं पड़ रहे हैं।

प्रेम-विजय वस्तुतः किसी दिग्विजय से कम नहीं होती है !

२३

रात्रि भर स्वप्न देखने के पश्चात् सोमेश्वर की आँख बड़े तड़के खुल गयी और फिर उसे नींद नहीं आयी। उसके मन की दशा इस समय भी बड़ी विचित्र थी। वहाँ सागर की लहरों के समान अनेक भाव उमड़ रहे थे, और अभिव्यक्ति न पाने के कारण परस्पर टकराकर उसे व्यथित बना रहे थे। उसे रत्नमाला से बहुत-कुछ कहना था। पर्यंक पर पड़ा-पड़ा वह बड़ी देर तक यही सोचता रहा कि क्या-क्या कहेगा और किस बात को किन शब्दों में किस प्रकार व्यक्त करेगा। बीच-बीच में उसका मस्तिष्क यह कल्पना भी कर लेता था कि उसकी किसी बात के उत्तर में रत्नमाला क्या कहेगी और फिर वह उसका क्या उत्तर देगा।

परन्तु मन की मन में ही रह गयी। प्रातःकाल के कुछ पश्चात् जब वह रत्नमाला के यहाँ पहुँचा तो भाग्य ने उसका साथ नही दिया। रत्नमाला से उसकी भेंट नहीं हुई। मल्लिका भी नहीं मिली। एक अन्य दासी से ज्ञात हुआ कि रत्न-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माला मल्लिका तथा कुछ अनुचरों के साथ भोर होने के कुछ समय पश्चात ही कहीं चली गयी थी। वह कहाँ गयी थी, यह दासी को ज्ञात नहीं था। परन्तु वह रथ पर गयी थी और संध्या तक लौटने को कह गयी थी। इससे स्पष्ट था कि वह कहीं नगर से बाहर गयी है।

निराश होकर सोमेश्वर वहाँ से लौटा। उसे पहले रत्नमाला पर, और फिर अपने आप पर बड़ा क्रोध आया। परन्तु वह विवश था।

अपनी हवेली की ओर लौटते हुए उसके पग अनायास जैन-मंदिर की दिशा में बढ़ गये। राजशेखर से उसका कोई विशेष प्रयोजन नहीं था। परन्तु उसके मन में यह जानने की बड़ी प्रबल इच्छा हो रही थी कि राजशेखर पर कल की बातों का क्या प्रभाव पड़ा है। उसने सोचा—राजशेखर को संदेह भी नहीं होगा कि मुझे उन बातों का ज्ञान है, परन्तु यदि किसी प्रकार यह उस पर प्रकट कर दिया जाए तो क्या प्रतिक्रिया होगी? इस कल्पना मात्र से सोमेश्वर की सारी खिन्नता, रत्नमाला से भेंट न होने की सारी निराशा, दूर हो गयी।

परन्तु भाग्य ने इस बार भी उसका साथ नहीं दिया। राजशेखर उस समय पांथशाला में नहीं था। अचानक सोमेश्वर के मस्तिष्क में एक भयानक संदेह कौंध गया, जिसके विचार मात्र से वह अत्यधिक उद्वेलित हो गया। परन्तु उसी समय उसकी दृष्टि मंदिर की ओर से आ रहे राजशेखर के सेवक पर पड़ी। उसे देखकर सोमेश्वर थोड़ा आश्वस्त हुआ। सेवक से यह जानकर उसे विशेष संतोष हुआ कि राजशेखर नगर में ही कहीं गया है और अभी लौटकर आ रहा होगा। सेवक ने उससे कुछ काल प्रतीक्षा करने का बहुत अनुरोध किया, परन्तु सोमेश्वर नहीं रुका। अब राजशेखर से मिलने की उसकी तनिक भी इच्छा नहीं रह गयी थी।

इस समय उसकी इच्छा हवेली लौटने की भी नहीं हो रही थी। वास्तव में वह स्वयं नहीं समझ पा रहा था कि उसकी इच्छा क्या है। मनःस्थिति में निरुद्देश्य भटकता हुआ वह नगर के दक्षिणी द्वार पर जा पहुँचा। परन्तु वहाँ पहुँचकर उसकी इच्छा नगर से बाहर जाने की भी नहीं हुई और वह कुछ काल तक वहीं खड़ा-खड़ा द्वार से आने-जाने वालों को देखता रहा। भिन्न-भिन्न प्रकार के लोग वृद्ध तथा युवा, पुरुष तथा स्त्रियाँ, धनी तथा निर्धन, सैनिक तथा कृषक—आ-जा रहे थे। कोई नगर में प्रवेश कर रहा था, कोई बाहर जा रहा था। परन्तु रुकता कोई नहीं था। सब चलते जा रहे थे, बिना इधर-उधर देखे अपनी निर्दिष्ट दिशा में बढ़ते चले जा रहे थे, मानों कोई अश्रुत स्वर उन्हें पुकार रहा हो, कोई अदृश्य हाथ संकेत कर रहा हो, कोई अज्ञात प्रेरणा पीछे से आगे की ओर ढकेल रही हो। जैसे जल की लहर सदा आगे ही बहती है, वैसे ही वे अनेक मानव बहे जा रहे थे। सोमेश्वर सोचने लगा—वह अश्रुत स्वर कहाँ से आता है? वह अदृश्य हाथ किसका है? वह अज्ञात प्रेरणा क्या है? कैसी है? ये लोग क्यों इस प्रकार भाग रहे है? कहाँ जा रहे हैं? कौन-सा है वह गन्तव्य जिसकी ओर ये जीवन भर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी प्रकार चलते रहेंगे ?

सहसा उसके मन में एक और विचार आया—क्या मेरा कोई गन्तव्य नहीं है जिसकी ओर मुझे जीवन भर चलते रहना चाहिए? फिर मैं भी क्यों नहीं चल रहा हूँ ? सब चल रहे हैं परन्तु मैं उन्हें देखता हुआ खड़ा क्यों हूँ ?

परन्तु यह सब सोचकर भी सोमेश्वर अपने स्थान से नहीं हिला, आने-जाने वालों को देखता हुआ मौन वहीं खड़ा रहा ।

अचानक उसके कानों में एक परिचित स्वर पड़ा । कोई कह रहा था, "यहाँ खड़े क्या कर रहे हो ?" इसके साथ ही उसने अपने कंधे पर किसीके हाथ का स्पर्श अनुभव किया । उसने घूमकर देखा । पीछे राजशेखर खड़ा था । वह बड़ा प्रसन्न लग रहा था ।

राजशेखर ने फिर कहा, "क्या वन की ओर चलने का विचार है ?"

"नहीं," सोमेश्वर ने अन्यमनस्क भाव से उत्तर दिया ।

"फिर यहाँ खड़े क्या कर रहे हो ?"

"कुछ नहीं । एसे ही घूमता हुआ आ गया हूँ । तुम किधर जा रहे हो ?"

"मैं भी तुम्हें खोजता हुआ यहीं तक आया हूँ । पांथशाला लौट कर ज्ञात हुआ कि तुम आये थे । सेवक ने बताया कि मुझे न पाकर तुम इसी ओर आये हो, सो मैं भी चला आया । कोई आवश्यक कार्य था क्या ?"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं । कार्य कुछ नहीं था । बैठे-बैठे मन नहीं लग रहा था सो निकल पड़ा । सोचा था बैठकर बातें करेंगे ।"

"तो चलो । मुझे भी कोई अन्य कार्य नहीं है ।"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं, अब नहीं चल सकूँगा ।"

"क्यों ? क्या और कहीं जाना है ?"

"नहीं । हवेली ही जाना है । पिताजी आने वाले हैं । न जाने किस समय आ जाएँ ।" सोमेश्वर और कोई बहाना नहीं सोच पाया । परन्तु वह इस समय अकेला रहना चाहता था ।

"तो चलो । यहाँ से तो चलो," राजशेखर ने कहा ।

सोमेश्वर निर्विरोध लौट पड़ा । वह यथासम्भव शीघ्र राजशेखर का संग छोड़ देना चाहता था ।

कुछ दूर चलने के पश्चात् मौन भंग करते हुए राजशेखर ने कहा, "मैंने सुना है खजुराहो से उद्भाण्ड के राजा जयपाल की सहायता के लिए सेना भेजी जा रही है । क्या यह सत्य है ?"

सोमेश्वर ने पूर्ववत् अन्यमनस्कता के स्वर में उत्तर दिया, "तुम्हें कोई आपत्ति है ?"

परन्तु राजशेखर इस समय बहुत प्रसन्न था । हँसते हुए बोला, "नहीं । मुझे आपत्ति क्यों होने लगी ? मैं तो ऐसे ही पूछ रहा था । आज ही नगर में सुना था, सोचा तुम से पूछ लूँ ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"परन्तु क्यों ? मुझसे क्यों ?"

"तुम खजुराहो में मेरे एकमात्र मित्र हो, इसलिए ।"

"धन्यवाद ।" सोमेश्वर ने पैने स्वर में कहा ।

दोनों फिर मौन चलने लगे । कुछ समय पश्चात् राजशेखर ने धीमे स्वर में कहा, "तुम भी इस युद्ध में क्यों नहीं चले जाते ?"

सोमेश्वर उबल पड़ा, "एक साधारण सैनिक बनकर ? मैं कभी नहीं जाऊँगा ।"

राजशेखर ने कहा, "देश-विदेश घूमने और अपनी वीरता प्रदर्शित करने का इससे अच्छा अवसर सरलता से नहीं मिलेगा ।"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "देश-विदेश में पहले ही बहुत घूम चुका हूँ, और अपनी वीरता प्रदर्शित करने का अवसर जब चाहूँगा यहीं निकाल लूँगा ।"

राजशेखर ने हँसते हुए कहा, "इसमें मुझे तनिक भी सन्देश नहीं है । उस समय यदि किसी सहायक की आवश्यकता पड़े तो संकोच न करना ।"

"नहीं करूँगा," सोमेश्वर ने बात समाप्त करने के उद्देश्य से कहा ।

परन्तु राजशेखर ने कुछ ही क्षण पश्चात् फिर कहा, "यदि चलो तो इस अभियान में मैं भी तुम्हारा साथ दे सकता हूँ । मुझे उधर जाना भी है ।"

"तो तुम चले जाओ । मैं सामन्त-पुत्र हूँ, सामान्य सैनिक बनकर कभी नहीं जाऊँगा ।"

"अधिकारी बनकर जा सकते हो ?"

"हाँ," सोमेश्वर ने कहा ।

"मैं प्रयत्न करूँ ?" राजशेखर ने पूछा ।

सोमेश्वर ने साश्चर्य उसकी ओर देखते हुए कहा, "तुम ! तुम मेरे लिए प्रयत्न करोगे ?"

"क्यों ? मैं तुम्हारा मित्र नहीं हूं ? मैं प्रयत्न करूँगा और तीन दिन के भीतर तुम्हारे सामने कोई प्रस्ताव रखूँगा । परन्तु तुम आज इतने उद्विग्न क्यों हो ? चलो, अश्व लेकर आखेट के लिए निकल चलें । मन बहल जाएगा । संध्या तक लौट आएंगे ।"

इस समय ये लोग जैन-मन्दिर के निकट पहुँच चुके थे और राजशेखर सोमेश्वर का हाथ पकड़कर उसे पांथशाला की ओर लिए जा रहा था । परन्तु सोमेश्वर ने सहसा झटककर अपना हाथ छुड़ा लिया, और बिना कुछ कहे राजशेखर को वहीं खड़ा छोड़कर अपनी हवेली का मार्ग पकड़ा । उसे इस समय राजशेखर की अदम्य प्रसन्नता बहुत अखर रही थी ।

परन्तु वह कुछ ही पग चला होगा कि उसके मस्तिष्क में एक विचार आया, और वह खड़ा हो गया । उसने पीछे घूमकर देखा, राजशेखर अभी अपने स्थान से हिला भी नहीं था । उसने पुकार कर कहा, "सुनो ।"

राजशेखर जब आगे बढ़कर थोड़ा निकट आ गया तो उसने फिर कहा,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"रत्नमाला के साथ तुम्हारा प्रेम का व्यापार कैसा चल रहा है ?"

सोमेश्वर ने सोचा था कि इस प्रश्न के परिणाम स्वरूप राजशेखर की प्रसन्नता लुप्त हो जाएगी और वह आकाश से गिर कर धरती पर आ जाएगा। परन्तु उसकी यह आशा पूरी नहीं हुई। राजशेखर पर इस प्रश्न की कोई विपरीत प्रतिक्रिया नहीं हुई। उसने पूर्ववत् हँसते हुए उत्तर दिया, "अभी तक तो घाटे में नहीं हूँ। आशा है रहूँगा भी नहीं। परन्तु अपनी कहो। कहाँ दाँव हार आये हो, जिसकी खीझ मुझपर उतारने का प्रयास कर रहे हो ?"

"संध्या को फिर भेंट होगी, मैं वहीं आ जाऊँगा।" यह कहता हुआ सोमेश्वर शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़ गया। इस बार उसने पीछे घूमकर भी नहीं देखा।

परन्तु अपनी हवेली में आकर भी उसे एकान्त अथवा विश्राम नहीं मिला। एक राजकर्मचारी वहाँ पहले से उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। महामंत्री ने उसे स्मरण किया था।

२४

महामंत्री के कार्यालय में इस बार सोमेश्वर को तनिक भी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। महामंत्री स्वयं उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

सोमेश्वर के अभिवादन के उत्तर में आशीर्वाद देते हुए उन्होंने कहा, "आओ वत्स, इधर बैठो। मैं तुम्हें बधाई देता हूँ। तुमने अपने प्रथम उत्तरदायित्व का निर्वाह आशानुकूल सफलतापूर्वक किया है।"

सोमेश्वर ने हाथ जोड़कर फिर प्रणाम किया।

महामंत्री कहते गये, "मुझ तुमसे ऐसी ही आशा थी। अब तुम्हें दूसरा, इससे अधिक महत्व और सम्मान का कार्य सौंपूंगा। परन्तु पहले मुझे यह बताओ कि अपने साहचर्य्य के परिणामस्वरूप तुमने राजशेखर के सम्बन्ध में क्या धारण बनायी है ?"

क्षण भर विचार करने के पश्चात् सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "मेरी धारणा बहुत अच्छी नहीं है। वह व्यक्ति मुझे संदिग्ध प्रतीत होता है।"

"आधार ?" महामंत्री ने प्रश्न किया।

"वह अपने आपको पर्यटक बताता है परन्तु उसकी रुचियाँ पर्यटकों जैसी नहीं हैं। उदाहरण के लिए उसने राजधानी के दर्शनीय स्थलों के सम्बन्ध में कभी जिज्ञासा नहीं व्यक्त की है।"

महामंत्री ने कहा, "इससे कुछ सिद्ध नहीं होता। और ?"

"उसके पास उसकी आवश्यकता से अधिक शस्त्रास्त्र हैं।"

"शस्त्रास्त्रों का संग्रह करना उसका व्यसन हो सकता है। और कुछ ?"

"हाँ, एक बात और है। मैं कई बार उससे रुष्ट हो चुका हूँ, परन्तु वह

Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कभी मुझसे रुष्ट नहीं होता। अन्यमनस्कता की ओर ध्यान नहीं देता, कटुता को पी जाता है। आज भी ऐसा हो चुका है। मैं अशिष्टता करता रहा परन्तु वह हँसता रहा। आज उसने मुझे सेना में उच्च पद दिलाने का वचन दिया है। तीन दिन के भीतर वह मेरे समक्ष इस सम्बन्ध में अपना कोई प्रस्ताव प्रस्तुत करेगा।"

महामंत्री ने कहा, "हाँ, इसमें कुछ तथ्य हो सकता है। अच्छा, अब वह कार्य सुनो जिसके लिए मैंने इस समय तुम्हें बुलाया है। तुम्हें यात्रा पर जाना होगा।"

"मैं तत्पर हूँ," सोमेश्वर ने कहा। परन्तु उसके स्वर में स्पष्ट था कि वह तत्पर नहीं है।

महामंत्री ने कहा, "तुम्हें कल सूर्योदय से पूर्व चन्देल साम्राज्य का विशेष दूत बनकर कान्यकुब्ज के लिए प्रस्थान करना है। जा सकोगे? कोई कठिनाई तो नहीं है?"

सोमेश्वर का हृदय बैठ गया। परन्तु महामंत्री के स्वर में आदेश की स्पष्ट झंकार थी। वे इस प्रकार बोल रहे थे मानों उनके समक्ष उसकी सुविधा अथवा इच्छा का कोई महत्व हो न हो। अतएव और कुछ कहना व्यर्थ जानकर सोमेश्वर ने धीमे स्वर में कहा, "आर्य आज्ञा दें, प्रस्तुत हूँ।"

महामंत्री ने कहा, "मैं तुम्हें एक पत्र दूँगा जिसके आधार पर तुम्हें कान्यकुब्ज की सर्वोच्च सत्ता से वार्तालाप करना होगा। तुम चन्देल राज्य-सत्ता के प्रतिनिधि होगे और तुम्हें कुछ भी कहने अथवा करने का अधिकार होगा। परन्तु कार्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि उसे बुद्धिमत्ता से करोगे तो साम्राज्य का हित होगा। यदि चूक हुई तो साम्राज्य का अहित हो सकता है।"

"मैं यथासम्भव अहित नहीं होने दूँगा", सोमेश्वर ने कहा।

"जिस प्रश्न पर वार्तालाप करना है उसकी राजनीतिक पृष्ठभूमि से तुम अवगत हो। हमने भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर राजा जयपाल की सहायता करने का निश्चय किया है। उनका दूत हमारा यह आश्वासन लेकर पुष्पपुर लौट गया है, और राजा जयपाल इसके बल पर शीघ्र ही गजनी के विरुद्ध प्रयाण करेंगे। यदि उनकी विजय हुई तो हम बिना कुछ किये ही उससे लाभान्वित होंगे परन्तु यदि वे असफल रहे तो हमें उनकी सहायता के लिए सेना भेजनी होगी। इस प्रयोजन से हम कई राज्यों का एक संघ बना रहे हैं जिसका नेतृत्व स्वयं महाराजाधिराज धंगदेव करेंगे। इसी आशय का पत्र और निमंत्रण लेकर तुम्हें विजयपालदेव से भेंट करनी है। उन्हें सहमत करना सरल नहीं होगा। परन्तु राजनीति में आशातीत को भी असम्भव नहीं मानना चाहिए। तुम्हारा कार्य यथासम्भव प्रयत्न करना है।"

"मैं यथासम्भव प्रयत्न करूँगा", सोमेश्वर ने कहा।

महामंत्री ने फिर कहा, "इस सम्बन्ध में तुम्हें दो बातें स्मरण रखनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहिए। पहली यह कि विजयपालदेव हमसे रुष्ट तथा सशंकित होंगे। हमने अपने प्रासाद का निर्माण उन्हीं के खंडहरों पर किया है। आज जिस विस्तृत क्षेत्र पर हम शासन कर रहे हैं वह कभी प्रतिहार साम्राज्य का ही अंग था। हमने इसे उनसे छीनकर अपने अधीन किया है। अतएव उनका रुष्ट होना स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त गोपाद्रि का घाव अभी बहुत हरा होगा। उस दुर्ग पर हमने अभी बलपूर्वक अधिकार किया है। अतएव विजयपालदेव सशंकित भी होंगे और हमारे प्रत्येक प्रस्ताव को सन्देह की दृष्टि से देखेंगे। तुम्हें उनकी शंकाओं का निवारण करना है, उनके रोष को शान्त करना है। उन्हें आश्वस्त करने के लिए तुम स्थायी सन्धि का प्रस्ताव भी कर सकते हो। स्मरण रखने की दूसरी बात यह है कि इस समय शक्ति का संतुलन हमारे पक्ष में है। हम पहले कभी प्रतिहारों के सामन्त अवश्य रहे हैं परन्तु वर्तमान स्थिति यह है कि हम उनसे कहीं अधिक शक्तिशाली हैं और यदि इच्छा करें तो शेष प्रतिहार क्षेत्र को भी सरलतापूर्वक अपने अधीन कर सकते हैं। यदि आवश्यकता पड़े तो विजयपालदेव को यह भी स्मरण करा देना।"

"अन्य सारे उपाय विफल हो जाने पर ही इस प्रकार का संकेत करना उचित होगा?" सोमेश्वर ने कहा।

"सो तो है ही," महामंत्री ने उत्तर दिया। "यह तुम्हारा अन्तिम अस्त्र होगा। इसका प्रयोग कब और किस प्रकार किया जाए, यह निर्णय तुम्हें स्वयं करना होगा। हाँ, एक बात और। तुम्हें ज्ञात ही है कि जिस व्यक्ति से तुमने रत्नमाला की रक्षा की थी वह कान्यकुब्ज की सेना का एक उच्च अधिकारी था। उसे रत्नमाला का अपहरण करने के लिए सम्भवतः कान्यकुब्ज के युवराज जयपालदेव ने भेजा था। तुम्हारे कारण उनकी योजना विफल हुई, अतएव कान्यकुब्ज में तुम्हारे लिए आशंका भी हो सकती है। तुम राजदूत होकर जा रहे हो, अतएव प्रत्यक्ष आशंका कोई नहीं होगी। परन्तु अप्रत्यक्ष हो सकती है। मार्ग में सुरक्षा के लिए मैं पर्याप्त रक्षक-दल तुम्हारे साथ भेज रहा हूँ। परन्तु तुम्हें भी, विशेष रूप से कान्यकुब्ज नगर में, बहुत सतर्क रहना होगा।"

"मैं सतर्क रहूँगा," सोमेश्वर ने कहा।

"हाँ, सतर्क अवश्य रहना। वैसे अधिक सम्भावना इस बात की है कि उन्हें तुम्हारे सम्बन्ध में विशेष ज्ञान नहीं होगा। यदि वे यह नहीं जानते कि उनकी योजना को विफल करने वाले व्यक्ति तुम्हीं हो तो कान्यकुब्ज में तुम्हारे लिए कहीं कोई भय नहीं है। बस, मुझे इतना ही कहना था। अब तुम जाओ। परन्तु हवेली में ही रहना। मेरा एक दर्शक तुम्हारे लिए आवश्यक सामग्री एकत्र कर रहा है। वह किसी समय विजयपालदेव के लिए महाराज का मुद्रांकित पत्र और तुम्हारे लिए आवश्यक धन इत्यादि लेकर तुम्हारे पास आएगा। यात्रा तथा कार्य सम्मन्धी विस्तृत निर्देश भी तुम्हें उससे ही प्राप्त होंगे। अतएव उसके आने तक तुम हवेली में ही रहना, कहीं बाहर मत जाना। और अपनी इस यात्रा के सम्बन्ध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में किसी से कोई चर्चा मत करना, तुम्हारे अनुचरों को भी यह ज्ञात न हो कि तुम कहाँ जा रहे हो। प्रातःकाल यथासम्भव शीघ्र हवेली से निकल पड़ना। रक्षक-दल तुम्हें उत्तरी द्वार पर प्रतीक्षा करता हुआ मिलेगा। और कोई प्रश्न?"

संकेत स्पष्ट था, सोमेश्वर उठकर खड़ा हो गया। चलते समय महामंत्री ने व्यस्त किन्तु प्रसन्न मुद्रा से सफलता की कामना करते हुए उसे आशीर्वाद दिया।

अपनी हवेली में आकर सोमेश्वर ने महामंत्री के दर्शक की प्रतीक्षा आरम्भ की। नवीन उत्तरदायित्व की कल्पनाओं ने कुछ समय के लिए रत्नमाला से सम्बन्धित विचारों को दबा दिया था, परन्तु अब दीर्घ प्रतीक्षा-काल की निष्क्रियता में वे फिर उभर-उभर कर ऊपर आने लगे और सोमेश्वर का मन उद्विग्न होने लगा। परन्तु इस उद्विग्नता का कोई समाधान उसके पास नहीं था। वह इस समय पिंजरे का पंछी था, केवल आकाश के सपने देख सकता था, उड़कर वहाँ जा नहीं सकता था।

धीरे-धीरे सन्ध्या होने लगी। रत्नमाला के यहाँ जाने का समय आया और चला भी गया, और पंछी पिंजरे में छटपटाता रहा। प्रातःकाल जब वह मुक्त था तब रत्नमाला के लिए कहीं जाना आवश्यक हो गया था, और इस समय जब रत्नमाला उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी तो वह मुक्त नहीं था। सोमेश्वर ने सोचा—भाग्य की विडम्बना सम्भवतः इसी को कहते होंगे।

अन्त में जब महामंत्री का दर्शक आया तब एक प्रहर रात्रि व्यतीत हो चुकी थी, और जब वह महामंत्री का विश्वस्त बूढ़ा कर्मचारी विस्तृत निर्देश देकर हवेली से गया तब रत्नमाला के यहाँ जाने का प्रश्न ही नहीं रह गया था।

२५

कान्यकुब्ज पहुँचकर सोमेश्वर को महाराज विजयपालदेव के दर्शन की अनुमति प्राप्त करने में अधिक समय नहीं लगा। महाराज को उसके आगमन की पूर्व-सूचना प्राप्त हो चुकी थी, अतएव इसमें कठिनाई नहीं हुई।

महाराज विजयपालदेव ने प्रासाद के सभा-भवन में उससे भेंट की। भेंट के समय युवराज जयपालदेव भी उपस्थित थे, परन्तु चौथा व्यक्ति कोई नहीं था। युवराज ऊँचे सिंहासन पर महाराज के निकट बैठे थे।

विस्तृत सभा-कक्ष में प्रवेश करते ही उसका वैभव देखकर सोमेश्वर चकित रह गया। वास्तव में उस समय का कान्यकुब्ज अपने गौरवपूर्ण अतीत की छाया मात्र रह गया था। केवल पचास वर्ष पूर्व वह देश की राजनीतिक तथा सामरिक शक्ति का केन्द्र था। उस समय पूर्व में काशी से पश्चिम में सौराष्ट्र तथा पंचनद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तक का सम्पूर्ण प्रदेश प्रतिहार साम्राज्य के अधीन था, और उत्तर में कश्मीर तथा भोट देश से दक्षिण में नर्मदा के उस पार तक उसकी विजयवाहिनी का आतंक था। परन्तु धीरे-धीरे सामन्त स्वतन्त्र होते गये, गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य विखंडित होता गया, ये खंड साम्राज्य से विलग होकर स्वतन्त्र राज्यों का रूप धारण करते गये, और साम्राज्य स्वयं संकुचित तथा निर्बल होता गया। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप उस समय साम्राज्य शक्ति तथा क्षेत्रफल में किसी छोटे-मोटे सामान्य राज्य से अधिक नहीं रह गया था। परन्तु प्रतिहार शासकों की आन-बान पहले जैसी ही चली आ रही थी। वे अब भी अपने को सम्राट् कहते थे, और उनके बाह्य वैभव में किसी प्रकार की कमी नहीं आयी थी।

परन्तु सोमेश्वर के पास सभा-भवन के वैभव पर आश्चर्य करने तथा यह सब सोचने के लिए अधिक समय नहीं था। महाराज उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। अतएव शीघ्रतापूर्वक सिंहासन के निकट पहुँचकर समुचित अभिवादन करते हुए उसने कहा, "सेवक खजुराहो की राज्य-सत्ता की ओर से तथा अपनी ओर से सम्राट् की शत-शत अभ्यर्थना करता है।"

विजयपालदेव ने सिर हिलाकर अभिवादन स्वीकार करते हुए कहा, "तुम खजुराहो से हमारे लिए पत्र लाये हो ?"

सोमेश्वर ने वस्त्र के नीचे से पत्र निकालकर उसे विजयपालदेव के समक्ष प्रस्तुत करते हुए कहा, "सेवक सम्राट् की सेवा में महाराजाधिराज धंगदेव का यह पत्र प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही उपस्थित हुआ है, और अनुमति की प्रार्थना करता है।"

विजयपालदेव ने पत्र उसके हाथ से लेकर खोला और पढ़ना आरम्भ किया। सोमेश्वर पूर्ववत् खड़ा-खड़ा धरती की ओर देखता रहा।

विजयपालदेव ने पत्र पढ़कर युवराज की ओर बढ़ा दिया और स्वयं कुछ क्षण तक विचारमग्न बैठे रहे। तत्पश्चात् उन्होंने सोमेश्वर को सम्बोधित करते हुए धीमे स्वर में कहा, "इसी प्रकार के पत्र और राज्यों को भी तो भेजे गये होंगे ?"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं सम्राट्, अभी भेजे नहीं गये हैं, मेरे खजुराहो लौटने पर भेजे जाएंगे।"

विजयपालदेव ने कहा, "तुम्हारे महाराज कई राज्यों का एक संघ बनाना चाहते हैं। परन्तु उसका नेता कौन होगा ? पत्र में इसका, सम्भवतः जान-बूझकर, कोई उल्लेख नहीं किया गया है। क्या तुम्हारे महाराज धंगदेव यह आशा करते हैं कि हम किसी ऐसे संघ में सम्मिलित होना स्वीकार कर लेंगे ? हमने तो सुना था, दूत, कि तुम्हारे महामंत्री एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं।"

व्यंग का उत्तर नम्रता से देते हुए सोमेश्वर ने कहा, "सम्राट् ने जो सुना था वह सत्य है। हमारे महामंत्री वास्तव में एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं। वे कभी यह सोचने की भी धृष्टता नहीं कर सकते कि सम्राट् किसी ऐसे संघ में सम्मि-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लित होंगे जिसका नेता अन्य कोई हो।"

"फिर उन्होंने हमारे पास यह पत्र भेजने का साहस कैसे किया?"

सोमेश्वर ने कहा, "यह पत्र सम्राट् के लिए एक निमंत्रण है। संघ के नेता का उल्लेख इसमें वस्तुतः जान-बूझकर नहीं किया गया है। महामंत्री का तात्पर्य यह है कि योजना में सम्मिलित होना स्वीकार करते ही सम्राट् स्वयं स्वभावतः नेता हो जाएँगे। महाराजाधिराज धंगदेव ने अपने ऊपर केवल योजना के सूत्र-पात का भार लिया है। आगे जैसा सम्राट् आदेश देंगे वैसा होगा।"

विजयपालदेव ने सिर हिलाकर इस तर्क को स्वीकार किया और कहा, "परन्तु इस प्रकार के संघ की आवश्यकता ही क्या थी? क्या चन्देलों के पास इतनी सेना नहीं है कि वे स्वयं जयपाल की सहायता कर सकें?"

"है, सम्राट्। चन्देलों के पास इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त से भी अधिक सेना है। हम बिना संघ के भी राजा जयपाल की सहायता कर सकते हैं।"

"फिर इस संघ की क्या आवश्यकता है? यह नाटक क्यों खेला जा रहा है?" युवराज ने कहा।

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "यह नाटक नहीं है, युवराज। इस योजना के पीछे एक महान उद्देश्य है।"

"क्या?" विजयपालदेव ने पूछा।

"यह वास्तव में देश और जाति की सुषुप्त राष्ट्रीय भावना को जगाने का एक प्रयास है, सम्राट्। सुबुक्तगीन केवल चन्देलों का नहीं, सम्पूर्ण राष्ट्र का शत्रु है, अतएव उसके विरुद्ध किया जाने वाला अभियान भी राष्ट्रीय अभियान होना चाहिए। विदेशी, विधर्मी आक्रमणकारियों के विरुद्ध यदि सब एक होकर न खड़े हुए तो एक-एक करके सब पदाक्रान्त होंगे और हमारी राष्ट्रीय स्वतंत्रता का लोप हो जाएगा।"

विजयपालदेव ने कहा, "तुम सत्य कहते हो, दूत। मैं तुमसे पूर्णतया सहमत हूँ। परन्तु प्रत्येक सत्य व्यावहारिक नहीं होता। क्या तुम समझते हो कि सब एक होकर खड़े हो सकेंगे?"

"कभी नहीं," युवराज ने कहा।

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "सम्राट् का कथन सत्य है। सब एक होकर कभी नहीं खड़े हो सकेंगे। हमें भी ऐसी आशा नहीं है। परन्तु कुछ तो खड़े ही हो सकते हैं। संघ की योजना के पीछे यही उद्देश्य है और इसी कारण मुझे सर्व प्रथम सम्राट् की सेवा में भेजा गया है।"

विजयपालदेव ने कहा, "यह योजना तुम्हारे महामंत्री की है, और तुम्हारे महाराज की ओर से कार्यान्वित की जा रही है। हमारे लिए उसमें कहीं स्थान नहीं है।"

"आप का स्थान तो शीर्ष पर है, सम्राट्।"

"परन्तु हम से आशा क्या की जाती है?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हमारे महाराज योजना के लिए सम्राट् का आशीर्वाद चाहते हैं।"

"क्यों ? यदि तुम्हारे पास अपनी पर्याप्त शक्ति है तो हमारे आशीर्वाद की अपेक्षा क्यों की जा रही है ?"

सम्राट् भारतीय अधिनायकों के सिरमौर हैं। आप का नाम लेकर हम और राज्यों को भी योजना में सम्मिलित होने के लिए सहमत कर सकते हैं।"

युवराज ने कहा, "यह हम समझ रहे हैं। परन्तु यदि हम भारतीय अधिनायकों के सिरमौर हैं और हमारा सम्मिलित होना योजना की सफलता के लिए इतना आवश्यक है तो इस सम्बन्ध में हमसे पूर्व परामर्श क्यों नहीं किया गया ?"

"हाँ, हमसे पूर्व-परामर्श क्यों नहीं किया गया ?" विजयपालदेव ने दुहराया।

युवराज ने कहा, "मुझे तो इसमें छल की गंध आती है। योजना के पीछे अवश्य तुम्हारे महामंत्री का कोई गुप्त उद्देश्य होगा।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं सम्राट् को विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि इस प्रकार का संदेह हमारे महमंत्री के प्रति अन्याय है। मुझे आपका परामर्श प्राप्त करने के लिए ही भेजा गया हैं। सम्राट् जब योजना को उसका अन्तिम स्वरूप तथा अपना आशीर्वाद प्रदान कर देंगे तभी अन्य राज्यों के साथ सम्पर्क स्थापित किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, जब सम्राट् स्वयं संघ के नेता होंगे तब छल का प्रश्न ही नहीं उठना चाहिए।"

विजयपालदेव ने कहा, "हाँ, उठना तो नहीं चाहिए। परन्तु गोपाद्रि के कटु अनुभव के पश्चात् हमें अब तुम्हारे महामंत्री का विश्वास नहीं रह गया है।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं फिर निवेदन करूँगा कि सम्राट् हमारे महामंत्री के प्रति अन्याय कर रहे हैं। महामंत्री प्रभास विद्वान हैं, कार्य-कुशल हैं, तथा चन्देल राज्य के हित-चिन्तक हैं। परन्तु वे विश्वासघाती नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, वे कान्यकुब्ज के परम प्रशंसक भी हैं। अतएव धृष्टता का अपराध करके भी सेवक यह अवश्य कहेगा कि उनके विरुद्ध साम्राट् का संदेह निराधार तथा अकारण है। गोपाद्रि का दुर्ग, केवल साम्राज्य की दुर्बलता के कारण हाथ से गया। महामंत्री प्रभास के विरुद्ध इतना अवश्य कहा जा सकता है कि उन्होंने वज्रदमन को सामन्त-रूप में स्वीकार कर लिया। परन्तु यहाँ पर वे विवश थे। उनके सामने दूसरा कोई मार्ग ही नहीं था। यदि वे वज्रदमन को स्वीकार न करते तो वह उज्जयिनी का सामन्त बन जाता और इस प्रकार वाक्पति मुंज का एक दुर्ग उत्तर में भी हो जाता।"

युवराज ने कहा, "बिना चन्देलों की सहायता के वज्रदमन कभी गोपाद्रि पर आक्रमण करने का साहस नहीं कर सकता था, और यदि करता भी तो सफल नहीं हो सकता था।"

"हाँ, कभी सफल नहीं हो सकता था, "विजयपालदेव ने कहा।

सोमेश्वर ने कहा, "यदि अभय-दान पाऊँ तो मैं भी कुछ निवेदन करूँ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विजयपालदेव ने कहा, "तुम दूत हो, जो चाहो कहो।"

सोमेश्वर बोला, "मैं चन्देल राज्य-सत्ता का एक दूत मात्र हूँ, सम्राट्। परन्तु चन्देलों की शक्ति का कुछ ज्ञान मुझे भी है, और उसके आधार पर मैं निश्चय-पूर्वक कह सकता हूँ कि यदि वे साम्राज्य के विरुद्ध अपनी शक्ति के प्रयोग का निर्णय करें तो केवल एक दुर्ग पर अधिकार करके संतुष्ट नहीं होंगे। अतएव साम्राज्य के विरुद्ध अन्य किसी अभियान का न होना ही इस बात का प्रमाण है कि वज्रदमन को चन्देलों का सैनिक-समर्थन नहीं प्राप्त था। मैं निवेदन करना चाहता हूँ, सम्राट्, कि पूर्वजों के संघर्ष उनके साथ चले गये। अब खजुराहो की नीति वह नहीं रह गयी है जैसी पहले थी। हमारे महामंत्री एक दूरदर्शी व्यक्ति हैं। उनकी यह सुनिश्चित धारणा है कि उत्तर भारत की राजनीतिक स्थिरता के लिए सबल कान्यकुब्ज का आधार-स्तम्भ नितान्त आवश्यक है। हम साम्राज्य को सबल बनाये रखने में ही अपना हित समझते है, साम्राट्।"

युवराज ने कहा, "हमारी समृद्धि में तुम्हारा हित हो सकता है, परन्तु इस योजना में हमारा क्या हित है? हम इसमें क्यों सम्मिलित हों? गजनी बहुत दूर है। पुष्पपुर भी बहुत दूर है। वहाँ यदि युद्ध होता है तो उसका हमारे अथवा तुम्हारे ऊपर क्या प्रभाव पड़ सकता है? हम अकारण इस बीच में क्यों पड़ें?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "यह सत्य है, युवराज, कि गजनी बहुत दूर है, और पुष्पपुर भी बहुत दूर है। परन्तु विजय-वाहिनी के लिए दूर भी निकट हो जाता है। यवनराज अलक्षेन्द्र का देश गजनी से भी बहुत आगे था, परन्तु उसकी विजय-वाहिनी क्या भारत तक नहीं चली आयी थी? स्वयं कान्यकुब्ज की सेनायें क्या कश्मीर तथा पुष्पपुर तक नहीं जाती थीं? अतएव आज वहाँ जो कुछ हो रहा है कल उसका प्रभाव हम पर भी पड़ सकता है। मेरी बुद्धि अल्प है, सम्राट्, परन्तु मैं समझता हूँ कि उस दशा में खजुराहो की अपेक्षा कान्यकुब्ज के लिए अधिक आशंका होगी। यदि सुबुक्तगीन विजयी हुआ तो उसकी सेना सबसें पहले इसी ओर अभियान करेगी। खजुराहो फिर भी सुरक्षित रहेगा।"

"क्यों?" विजयपालदेव ने पूछा।

"कान्यकुब्ज की अपार धन-सम्पत्ति लोक-विश्रुत है, सम्राट्, और तुरुष्क मूलतः दस्यु है। उन्हें धन चाहिए, जहाँ अधिक होगा उसी ओर दौड़ पड़ेंगे। इसके अतिरिक्त कान्यकुब्ज का मार्ग अपेक्षाकृत अधिक सीधा और सुगम है। खजुराहो तक पहुँचना इतना सरल नहीं होगा।"

"तुम्हारे इस कथन में पर्याप्त तथ्य है, दूत," विजयपालदेव ने कहा। फिर युवराज की ओर देखकर उन्होंने पूछा, "तुम क्या कहते हो?"

"हमारा वैभव निर्विवाद है, और दस्युओं के लिए वैभव का आकर्षण भी निर्विवाद है," युवराज ने कहा।

कुछ क्षण विचारमग्न रहने के पश्चात् विजयपालदेव ने सोमेश्वर को सम्बोधित करते हुए कहा, "अच्छा, यदि हम नेतृत्व स्वीकार कर लें तो कौन-कौन से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राज्य इस योजना में सम्मिलित हो सकते हैं ? तुमने इस सम्बन्ध में कुछ अनुमान लगाया है ?"

"हाँ सम्राट्, लगाया है। हमारा अनुमान है कि आपका अनुकरण करके मालवपति सम्मिलित हो सकते हैं, यद्यपि वे इस समय तैलप के साथ उलझे हुए हैं। शाकम्भरी के चाहमान तथा अजयमेरु के तोमर लगभग निश्चित रूप से सम्मिलित होंगे। श्रीपथ के यदुवंशी भी आपके आग्रह की अवहेलना नहीं कर सकेंगे। अनहिलवाड़ के मूलराज सोलंकी के सम्बन्ध में निश्चय के साथ कुछ कहना कठिन है, परन्तु वहाँ भी केवल सम्राट् का प्रभाव ही सफल हो सकता है। इसके अतिरिक्त अनेक छोटे राज्य भी होंगे।"

युवराज ने कहा, "दक्षिण के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है ? वहां से सहयोग नहीं मिलेगा ?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "दक्षिण के राज्य योजना में सम्मिलित नहीं होंगे। यह लगभग निश्चित है। वे अपने आप को विपत्ति से बहुत दूर समझकर परस्पर शौर्य-प्रदर्शन में संलग्न हैं। यही मगध, अंग, बंग ओड्र, आदि पूर्वात्य राज्यों के विषय में भी कहा जा सकता है।"

"और त्रिपुरी के कलचुरि ?" युवराज ने फिर पूछा।

"त्रिपुरी के कलचुरि भी निश्चित रूप से सम्मिलित नहीं होंगे। सम्राट् से तथा हमारे महाराज से सम्बन्धित कोई भी योजना उनके लिए स्वीकार्य नहीं हो सकतीं। प्रस्तुत योजना को भी वे सम्भवतः अपने विरुद्ध एक षड्यंत्र समझेंगे। इसके अतिरिक्त वे इस समय कोशल के साथ उलझे हुए हैं।"

विजयपालदेव ने कहा, "परन्तु यदि हमने अपनी सेना पुष्पपुर भेज दी तो वे हमारे ऊपर भी तो आक्रमण कर सकते हैं ?"

"यह असम्भव है, सम्राट्," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"क्यों ?"

"कोशल-नरेश महाभावगुप्त ही उन्हें इस योग्य नहीं रखेंगे। और यदि उन्होंने इसके पश्चात् भी साम्राज्य की ओर आँख उठाकर देखने का दुस्साहस किया तो चन्देल सेना उनकी सीमा पर ही उनके स्वागत के लिए तत्पर मिलेगी। और इसके पश्चात् साम्राज्य की अपनी सेना भी होगी ही। इस योजना का सबसे बड़ा लाभ यही है, सम्राट्। हम सब अपनी थोड़ी-थोड़ी सेना पुष्पपुर भेजेंगे, शेष हमारी अपनी सुरक्षा के लिए यहाँ रहेगी।"

युवराज ने कहा, "और यदि चन्देल सेना ही कलचुरियों के साथ मिलकर हमारे ऊपर आक्रमण कर दे तो हम क्या करेंगे ?"

"यह भी असम्भव है, युवराज। चन्देल कभी विश्वासघात नहीं करेंगे। इस सम्बन्ध में आप जो भी आश्वासन चाहें हमारे महामंत्री उसके लिए सहमत होंगे।"

इस पर विजयपालदेव ने युवराज से धीरे से कुछ कहा, और युवराज ने भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिर हिलाकर धीरे से ही उसका उत्तर दिया। तत्पश्चात् विजयपालदेव सोमेश्वर को सम्बोधित करके बोले, "अच्छा, दूत। इस समय तुम जा सकते हो। यह एक महत्वपूर्ण विषय है। हम परामर्श के पश्चात् ही इस सम्बन्ध में कुछ निर्णय कर सकेंगे। तुम्हारे पत्र का उत्तर हम कल देंगे।"

सोमेश्वर ने सिर नवाकर कहा, "जैसी सम्राट् की आज्ञा। कान्यकुब्ज का शुभचिन्तक और सम्राट् का सेवक होने के नाते एक अन्तिम निवेदन और करने की अनुमति चाहता हूँ, और वह यह है कि साम्राज्य को अपनी प्रतिष्ठा फिर स्थापित करने का यह स्वर्ण-अवसर प्राप्त हुआ है। सम्राट् इसे हाथ से न जाने दें।"

यह कहकर पुनः प्रणिपात करता हुआ वह विदा हुआ।

अगले दिन विजयपालदेव से पत्र प्राप्त करके उसने तुरन्त खजुराहो के लिए प्रस्थान कर दिया। उसे स्वयं आश्चर्य हो रहा था कि अपनी वर्तमान मनःस्थिति में वह पूरे पाँच दिन खजुराहो से बाहर, अर्थात् रत्नमाला से दूर, कैसे रह सका था।

२६

खजुराहो पहुँचकर भी वह तुरन्त रत्नमाला से नहीं मिल सकता था, यह सोमेश्वर को बहुत अखरा। उसके लिए पहले महामंत्री से मिलकर उन्हें अपनी यात्रा के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण देना आवश्यक था।

महामंत्री विजयपालदेव का पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्न हुए। सोमेश्वर ने विस्तारपूर्वक वह वार्तालाप दुहराया जो उसके तथा विजयपालदेव के बीच हुआ था। उसे ध्यानपूर्वक सुनने के पश्चात् महामंत्री ने सोमेश्वर से इसी सम्बन्ध में अनेक प्रश्न किये। इस सब में बहुत विलम्ब हो गया, और सोमेश्वर जब महामंत्री के कार्यालय से निकलकर बाहर आया तो सन्ध्या हो चुकी थी।

सोमेश्वर वहाँ से सीधा रत्नमाला के आवास की ओर चल पड़ा। हवेली जाकर विश्राम करने के लिए समय नहीं था, और वस्त्र बदलना उसे अनावश्यक प्रतीत हुआ। मार्ग में उसे राजशेखर का ध्यान आया और उसने सोचा कि इस समय वह भी सम्भवतः रत्नमाला के ही यहाँ होगा। इधर उसे जब-जब राजशेखर का ध्यान आता था तो उसका हृदय ईर्ष्या की प्रबल भावना से भर जाता था और एक आशंका बार-बार उसके मस्तिष्क में उभरने लगती थी। उसने अपने मन में यह निश्चय कर लिया था कि यदि उसकी अनुपस्थिति में राजशेखर ने कोई अनुचित व्यवहार किया होगा तो वह भी क्षमा नहीं करेगा, उसे समुचित दंड देगा।

परन्तु राजशेखर उसे रत्नमाला के यहाँ नहीं मिला। रत्नमाला मिली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह बड़ी प्रफुल्लित, पहले से भी अधिक सुन्दर लग रही थी। न जाने क्यों,, वह जब भी रत्नमाला को देखता था तो वह पहले से अधिक सुन्दर प्रतीत होती थी, मानों उसका सौन्दर्य शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा हो जिसकी कलायें प्रतिदिन बढ़ती ही जाती हैं। रत्नमाला उस समय बहुत प्रसन्न थी। यह सोमेश्वर को अच्छा नहीं लगा। प्रेम की अहंमन्यता ही ऐसी होती है कि वह अपनी अनुपस्थिति में प्रेम-पात्र का प्रसन्न होना नहीं सहन कर सकता, उसे अपनी उपेक्षा समझता है।

रत्नमाला ने हँसकर स्वागत करते हुए कहा, "इस बार पहले से भी अधिक रुष्ट हो गये थे क्या ?"

सोमेश्वर का मस्तिष्क उस समय न जाने किन विचारों में उलझा हुआ था कि उसने इस प्रत्यक्ष परिहास को भी गम्भीरतापूर्वक ग्रहण किया। उसने कहा, "मैं रुष्ट नहीं था, रत्नमाला। यात्रा पर चला गया था।"

रत्नमाला ने मान का अभिनय करते हुए कहा, "यात्रा पर चले गये थे ? बिना सूचना ? मुझे बताया तक नहीं। कहीं मैं भी साथ न चल दूं, इसलिए न ?"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं, ऐसा कुछ नहीं था जो तुमसे छिपाता। परन्तु कार्य इतना आवश्यक था कि मुझे तुरन्त जाना पड़ा और मैं तुम्हें सूचना देने यहाँ तक नहीं आ सका।"

"क्या आपका कोई अनुचर भी संदेश लेकर नहीं आ सकता था ? क्या वे सब भी आपके साथ चले गये थे ?"

"यह चूक मुझसे अवश्य हुई," सोमेश्वर ने स्वीकार किया। "मैं संदेश भेज सकता था। मुझे संदेश भेजना चाहिए था। परन्तु जाने की हड़बड़ी में न जाने कैसे इस बात का ध्यान ही नहीं आया।"

रत्नमाला ने उपालम्भ के स्वर में कहा, "यही उचित भी था। पथ की पहचान का अधिक ध्यान रखना ही नहीं चाहिए।"

सोमेश्वर कहने के लिए बहुत कुछ सोचकर आया था। परन्तु वार्तालाप का आरम्भ इस प्रकार होगा, इसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी। परिणामतः इस समय उसे रत्नमाला की बातों के उत्तर खोजने में बड़ी कठिनाई का अनुभव हो रहा था। जो व्यक्ति अभी-अभी स्वयं कान्यकुब्जेश्वर के साथ आत्मविश्वासपूर्वक, और सफलतापूर्वक, वार्तालाप करके आ रहा था, वही इस समय मात्र एक नारी के समक्ष संकुचित हुआ जा रहा था, मानों उसका मस्तिष्क ही कार्य न कर रहा हो। अतएव उसने रत्नमाला की बात का कुछ उत्तर न देकर केवल सिर झुका लिया।

उसके असमंजस का आनन्द लेते हुए रत्नमाला ने फिर कहा, "किस ओर गये थे ? यह बता सकते हैं ?"

"हाँ बता सकता हूँ," सोमेश्वर ने कहा।

"तो बताने की कृपा करें।"

सोमेश्वर ने क्षण-भर रुक कर कहा, "अजयगढ़ गया था। बड़ा आवश्यक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कार्य था।"

"भूल तो नहीं रहे हैं?" रत्नमाला ने एक कुटिल दृष्टि उसकी ओर डालते हुए कहा।

"भूलूँगा क्यों?"

"इसीलिए तो कह रही हूँ। स्मरण करने का प्रयत्न कीजिये। कहीं फिर तो चूक नहीं हो रही है जो आगे भी पश्चाताप करना पड़े?"

"नहीं, नहीं। मैं वास्तव में अजयगढ़ ही गया था।"

एक वक्र मुस्कान बिखेरते हुए रत्नमाला ने कहा, "अजयगढ़ क्या उत्तर में स्थित है?"

"नहीं तो। अजयगढ़ उत्तर में नहीं है।"

"परन्तु मेरा ज्योतिष कह रहा है कि आप उत्तर की ओर गये थे, जिसका अर्थ यह हुआ कि आप अजयगढ़ नहीं गये थे।"

अपने असत्य पर परिहास का आवरण डालने का प्रयत्न करते हुए सोमेश्वर ने कहा, "अच्छा! तुम ज्योतिषी भी हो? यह मुझे नहीं ज्ञात था।"

"आपको मेरे सम्बन्ध में बहुत कुछ नहीं ज्ञात है।"

सोमेश्वर ने कहा, "लगता तो ऐसा ही है। अच्छा, तुम्हारा ज्योतिष और क्या कहता है?"

रत्नमाला मुस्कराकर बोली, "परीक्षा ले रहे हैं? तो सुनिये। मेरा ज्योतिष कहता है कि आप अजयगढ़ नहीं, कान्यकुब्ज गये थे, और वहाँ आपने कान्यकुब्जेश्वर महाराज विजयपालदेव से भेंट की। मेरा ज्योतिष यह भी कहता है कि आप आज मध्याह्न के कुछ समय पश्चात् खजुराहो लौटकर आ गये थे, परन्तु अभी तक अपनी हवेली नहीं पहुँचे हैं। कहिये तो कारण भी बता दूँ?"

"बताओ," सोमेश्वर ने साश्चर्य कहा।

"कारण यह है कि आपके लिए लौटते ही उस व्यक्ति से मिलना आवश्यक था जिसने आपको कान्यकुब्ज भेजा था। अब बताइये, यह सब सत्य है कि नहीं?"

"सत्य है," सोमेश्वर ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

"फिर आपने मुझसे छिपाया क्यों?"

सोमेश्वर ने कहा, "यह भी अपने ज्योतिष से ही क्यों नहीं पूछ लेती हो?"

रत्नमाला बोली, "जैसी आज्ञा, यह भी ज्योतिष से ही पूछ लूंगी। परन्तु इसी बीच यदि आप स्नान कर लें तो बड़ी कृपा होगी। यात्रा की थकान उतर जाएगी।"

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, स्नान अवश्य करूँगा। परन्तु पहले मुझे यह बतादो कि तुम्हें यह सब कैसे ज्ञात हुआ।"

"अभी नहीं। जब आप स्नान के पश्चात् भोजन करने बैठेंगे तब बताऊँगी।"

यह कहकर रत्नमाला ने सोमेश्वर को बलात् उठाकर खड़ाकर दिया और अपने साथ कक्ष से भीतर की ओर ले गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्नान के पश्चात् सोमेश्वर को भोजन के लिए बैठाकर रत्नमाला स्वयं भी उसके निकट बैठ गयी तथा विजन डुलाते हुए बोली, "अब कहिये, आप क्या पूछ रहे थे ?"

सोमेश्वर ने कहा, "समझ नहीं पा रहा हूँ कि क्या पूछूं।"

"क्यों ? जो चाहें पूछिये, मैं बताने का वचन दे चुकी हूँ।"

"मुझे बहुत कुछ पूछना है, यही मेरी कठिनाई है। समझ नहीं पा रहा हूँ कि कहाँ से आरम्भ करूँ। तुम वास्तव में एक विलक्षण स्त्री हो, रत्नमाला।"

रत्नमाला हँसकर बोली, "यह तो कोई प्रश्न नहीं हुआ।"

सोमेश्वर भी हँस दिया और बोला, "हाँ रत्नमाला, तुम ठीक कह रही हो। यह कोई प्रश्न नहीं हुआ। तुम्हारे लिए हो भी नहीं सकता है। परन्तु मेरे लिए है। मेरे लिए तुम स्वयं एक प्रश्न हो, एक पहेली हो जिसका उत्तर मैं प्रयास करके भी नहीं खोज पाता हूँ।"

"इस प्रश्न का उत्तर मैं नहीं दे सकूँगी। आपको ही खोजना होगा।"

सोमेश्वर ने कहा, "बहुत खोजा है, परन्तु पा नहीं सका हूँ।"

"तो और प्रयत्न कीजिये।"

"सो तो करूँगा ही। परन्तु सफलता की आशा नहीं हैं। मैं जितना प्रयत्न करता हूँ उतना ही और उलझता जाता हूँ। क्या तुम इसमें मेरी कुछ सहायता नहीं कर सकतीं ?"

"हाँ, कर सकती हूँ। मैं आपको दिशा बता सकती हूँ।"

"बताओ," सोमेश्वर ने बाल-सुलभ उत्सुकता के स्वर में कहा।

रत्नमाला कुछ क्षण मौन बैठी रही, फिर धीमे, चिन्तन के स्वर में बोली, "आपकी समस्या आपके लिए गम्भीर हो सकती है परन्तु वास्तव में वह न गम्भीर है, न समस्या ही है। इसकी सृष्टि स्वयं आपने की है; यदि आप यह समझ लें तो समस्या नहीं रह जाएगी। प्रत्यक्ष को भी पहेली बना लेना पुरुष के स्वभाव का एक अंग होता है। वह न जाने क्यों प्रत्यक्ष को स्वीकार नहीं करना चाहता, और सदा उसके पीछे कोई गूढ़ अर्थ खोजने का प्रयास करता है। परन्तु बहुधा वहाँ कोई गूढ़ अर्थ होता ही नहीं है। इसी कारण आप लोगों की बुद्धि उलझ जाती है और तब आप प्रत्यक्ष को भी ग्रहण नहीं कर पाते हैं।"

सोमेश्वर विस्मित, मौन रत्नमाला के इस अपरिचित स्वरूप को देख रहा था। उसे लग रहा था कि पहेली और जटिल होती जा रही है।

रत्नमाला कहती गयी, "हम स्त्रियों को अस्थिर और परिवर्तनशील कहा जाता है। परन्तु ऐसा समझने और कहने वाले केवल पुरुष होते हैं, और वे इतना कहकर संतुष्ट हो जाते हैं। वे हमारी परिवर्तनशीलता के कारण तक पहुँचने का प्रयास ही नहीं करते, और इसीलिए वे कभी यह नहीं जान पाते कि इसके कारण वे स्वयं होते हैं। वे हमें चाहते हैं परन्तु स्वीकार नहीं कर पाते, क्योंकि उनकी दृष्टि हमारे पीछे न जाने क्या कुछ और खोजा करती है। और जब हम उनकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस अस्वीकृति में तिलमिलाती हैं, और स्वीकृति के लिए प्रयास करती हैं, तब वे हमें अस्थिर कह कर अपनी उच्चता प्रमाणित करते हैं। हम पुरुष को पुरुष करके स्वीकार करना जानती हैं, इसी कारण आप लोग हमारे लिए पहेली नहीं होते। परन्तु आप हमें नारी करके स्वीकार नहीं कर पाते, अतएव हम स्त्रियाँ आप के लिए पहेलियाँ बन जाती हैं।"

वातावरण सहसा बहुत गम्भीर हो गया था। यह अनुभव करते हुए सोमेश्वर ने कहा, "तुम जो कुछ कह रही हो वह सत्य ही होगा। वास्तव मे मुझे स्त्रियों का अधिक अनुभव नहीं है। परन्तु तुम्हारे तर्क से मैं पूर्णतया सहमत हूँ। अतएव अब तुम्हीं मेरा मार्ग-दर्शन करो। बताओ, मुझे क्या करना चाहिए ?"

"यह भी मैं ही बताऊँ ?" रत्नमाला ने निराशा के स्वर में कहा।

"हाँ," सोमेश्वर ने सहज भाव से उत्तर दिया।

रत्नमाला की मुद्रा सहसा कठोर हो गयी और उसने किंचित् आवेश के स्वर में कहा, "तो सुनिये। आपको चाहिए कि यहाँ आना छोड़ दें, मुझे छोड़ दें और इस प्रकार भुला दें जैसे कभी भेंट ही नहीं हुई थी।"

"यह असंभव है," सोमेश्वर के मुख से हठात् निकल गया।

"क्यों ?" रत्नमाला ने पूछा। उसके स्वर में कोमलता लौट आयी थी, उसकी मुद्रा का तनाव विलीन हो चुका था।

सोमेश्वर ने कहा, "यह मैं नहीं बता सकता। केवल इतना जानता हूँ कि तुम्हें भुला देना अब मेरे वश की बात नहीं है। तुमने न जाने कैसे और किस बंधन में मुझे बाँध लिया है कि मैं क्षण भर के लिए भी तुम्हें नहीं भुला पाता हूँ। कान्यकुब्ज में भी मैं यहीं सोचा करता था कि तुम यहाँ अकेली होगी और राजशेखर······"

रत्नमाला ने उसके मुख पर हाथ रखते हुए कहा, "उसका नाम मत लीजिये।"

"क्यों ? वह आज यहाँ नहीं आया क्या ?"

"नहीं। वह बड़ा भयानक व्यक्ति था।"

सोमेश्वर ने कुछ चिन्तित होकर पूछा, "परन्तु हुआ क्या ? क्या उसने तुम्हारे साथ कोई धृष्टता की ?"

रत्नमाला ने मुस्कराकर उत्तर दिया, "नहीं। मेरे साथ धृष्टता करने के लिए जितनी सामर्थ्य चाहिए, उसके पास नहीं थी। परन्तु था वह बड़ा भयानक व्यक्ति, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।"

सोमेश्वर के मन में दबी हुई सारी ईर्ष्या अचानक एक साथ उबल पड़ी। उसने आवेश के स्वर में कहा, "मुझे पहले से आशंका थी। मैं उसे दंड दूँगा।"

रत्नमाला ने पूर्ववत् मुस्कराते हुए कहा, "परन्तु अब वह दंड देने के लिए आपको कभी मिलेगा इसकी सम्भावना बहुत कम है।"

"क्यों ? मर गया क्या ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"नहीं, मरा नहीं है।"

"फिर ? खजुराहो छोड़कर भाग गया ?"

"नहीं, खजुराहो में ही है, और अब जब तक जीवित है यहीं रहेगा।"

"फिर मुझे क्यों नहीं मिलेगा ?"

"अब वह स्वयं महाराज का अतिथि बन गया है, इसलिए। और स्पष्ट करूँ ? आपका वह योग्य मित्र आजकल राज्य के कारागार की शोभा बढ़ा रहा है ?"

"क्यों ?" सोमेश्वर ने पूछा।

रत्नमाला ने कहा, "यह आपको महामंत्री जी ही बता सकेंगे। मैं केवल इतना जानती हूँ कि वह उस दिन यहीं बैठा हुआ सुरा-पान करता-करता अचेत हो गया था। मुझे बड़ा भय लगा कि कहीं मेरे यहाँ मर न जाए। अतएव मैंने महाप्रतिहार के कर्मचारियों को बुलाकर उन्हें सारी स्थिति समझायी। कर्मचारी जब उसे ले जाने के लिए उठाने लगे तो उसके पास एक पत्र मिला जिससे यह ज्ञात हुआ कि वह किसी राज्य का गुप्तचर था और हमारी सेना में राजद्रोह का प्रचार कर रहा था। इस कारण उसे तुरन्त बन्दी बना लिया गया और तब से वह कारागार में है।"

अनेक बातें एक साथ सोमेश्वर के मस्तिष्क में घूम गयीं। उसने मुस्कराकर पूछा, "वह सुरापान करता हुआ अचानक अचेत हो गया था ?"

"हाँ, अचानक। इतना अधिक सुरा-पान भी नहीं किया था।"

"कुछ भूल तो नहीं रही हो ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"इसमें भूलने की कोई बात ही नहीं है।"

"है," सोमेश्वर ने कहा। "केवल एक, बहुत छोटी-सी बात है। तुम उस औषधि का उल्लेख करना भूल रही हो जो तुमने राजशेखर की दृष्टि बचाकर उसके सुरा-पात्र में डाली थी।"

रत्नमाला ने मुस्कराकर पूछा, "आपने कैसे जाना ?"

सोमेश्वर ने कहा, "ज्योतिष से। तुम्हारे साथ उठते-बैठते थोड़ा-सा मैं भी सीख गया हूँ।"

और दोनों के समवेत हास से कक्ष गूँज उठा।

भोजन समाप्त हो चुका था। सोमेश्वर ने उठकर कर-प्रक्षालन किया और फिर खड़े ही खड़े ताम्बूल ग्रहण किया। उसे इस प्रकार जाने के लिए उद्यत देखकर रत्नमाला ने कहा, "बैठेंगे नहीं ?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "विलम्ब बहुत हो गया है।"

रत्नमाला ने कहा, "आज आप बहुत थके होंगे। यदि असुविधा न हो, और हवेली जाना अत्यधिक आवश्यक न हो, तो रात्रि में यहीं विश्राम क्यों न करें ?"

"क्यों न करूँ ?" सोमेश्वर ने किंचित् विचलित भाव से उसकी ओर देखते हुए कहा, "तुम्हारा ज्योतिष क्या कहता है ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला कुछ क्षण मौन उसकी ओर देखती रही, फिर बोली, "मेरा ज्योतिष कहता है कि आप यहाँ नहीं रुकेंगे।"

"ठीक कहता है। तुम्हारा ज्योतिष ठीक कहता है। मेरा हवेली पहुँचना आवश्यक है। कल फिर भेंट होगी।" यह कहता हुआ सोमेश्वर शीघ्रतापूर्वक कक्ष से बाहर निकल आया।

२७

इसके पश्चात् एक बार रत्नमाला के यहां जाना सोमेश्वर की दैनिक चर्य्या का एक अनिवार्य-सा अंग बन गया। कभी-कभी उसे महामंत्री के पास भी जाना होता था, और कभी-कभी वे उसे किसी कार्य में भी लगा देते थे। इसके परिणामस्वरूप उसका रत्नमाला के यहाँ जाने का समय नहीं निश्चित हो पाता था। परन्तु उस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध भी नहीं था। सन्ध्या को अथवा प्रातःकाल, जिस समय भी वह पहुँच जाता था, रत्नमाला उसका स्वागत करती थी, और प्रत्येक प्रकार से सत्कार करती थी, और फिर दोनों साथ बैठकर अनेक विषयों पर बातें करते थे। कभी-कभी राजनीतिक विषयों को भी चर्चा हो जाती थी और तब सोमेश्वर आश्चर्य के साथ यह अनुभव करता था कि इस क्षेत्र में भी रत्नमाला का ज्ञान सामान्य से कहीं अधिक है।

रत्नमाला के साथ उसके अपने सम्बन्ध भी धीरे-धीरे सुस्पष्ट और सुस्थिर होते जा रहे थे। यद्यपि स्पष्ट कहने में उसे अब भी संकोच होता था, परन्तु अपने मन में वह भली प्रकार समझने लगा था कि वह रत्नमाला से प्रेम करता है। प्रेम करना सुखद होता है, प्रेम किया जाना सुखदतर। सोमेश्वर को ये दोनों सुख प्राप्त थे, क्योंकि इसमें भी संदेह नहीं रह गया था कि रत्नमाला उसे प्रेम करती है। परन्तु वह सुखी होकर भी सन्तुष्ट नहीं था। कभी-कभी, एकान्त में, एक प्रश्न उभर कर उसके सामने आ जाता था। इस प्रेम की परिणति कहाँ होगी? कैसे होगी? वह देर-देर तक सोचता रहता था परन्तु इस प्रश्न का उत्तर नहीं खोज पाता था।

कभी-कभी उसे रत्नमाला के यहाँ नित्य जाना भी अखरने लगता था। ऐसा नहीं था कि रत्नमाला से मिलकर उसे सुख न होता हो। रत्नमाला उसे प्रिय लगती थी। रत्नमाला से मिलना, उसके साथ बैठना और बातें करना, सब कुछ उसे प्रिय लगता था। परन्तु नित्य उसके यहाँ जाने की विवशता एक ऐसा बन्धन थी जिससे उसकी अहम्भावना को ठेस लगती थी। जब कभी किसी प्रतिकूल परिस्थिति के कारण जाना कठिन प्रतीत होने लगता था, तभी उसका अहं कोंचने लगता था, और वह इस बंधन से मुक्त होने की योजनायें बनाने लगता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक दिन उसने रत्नमाला के सामने भी इस प्रश्न को उठा ही दिया। वे बाहर वाटिका में बैठे थे। रात्रि घनी होने लगी थी। धीमी-धीमी बयार बह रही थी और उत्तर-ग्रीष्म की मैली चाँदनी वृक्षों की काली पत्तियों के साथ आँख-मिचौली खेल रही थी। तभी चलने का उपक्रम करते हुए सोमेश्वर ने कहा, "कल सम्भवतः मैं नहीं आ सकूँगा।"

"कहीं बाहर जा रहे हैं?" रत्नमाला ने सहज भाव से पूछा।

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं।"

"फिर? कोई आवश्यक कार्य आ गया है?"

"नहीं, आवश्यक कार्य भी नहीं है।"

"फिर क्यों नहीं आ सकेंगे?"

सोमेश्वर ने दूसरी ओर देखते हुए उत्तर दिया, "ऐसे ही। कोई विशेष कारण नहीं है।"

रत्नमाला ने कहा, "कारण तो कोई न कोई होगा ही। विशेष नहीं तो अविशेष होगा।"

"हाँ, कारण है। यों समझ लो कि आना नहीं चाहता हूँ, इसलिए नहीं आ सकूँगा। बात यह है कि नित्य आते-आते ऐसा अभ्यास पड़ता जा रहा है जो आगे चलकर कष्टकर सिद्ध हो सकता है। इसलिए ऐसा सोचा है। दासता अभ्यास की भी अच्छी नहीं होती।"

रत्नमाला ने अपनी दृष्टि उसके मुख पर स्थिर करते हुए कहा, "यही कारण है?"

"हाँ, बन्धन अखरता है।"

रत्नमाला ने कहा, "तो आप उससे मुक्त होने का प्रयत्न करें, अवश्य करें। मेरी धारणा इससे भिन्न है। अतएव मैं ऐसा प्रयत्न नहीं करूँगी। बँधी मैं भी तो हूँ, परन्तु मैं इस बन्धन से मुक्त नहीं होना चाहती। मुझे यह अखरता नहीं है।"

सोमेश्वर ने पूछा, "तुम्हारी धारणा क्या है?"

"मैं बन्धन को शक्ति का स्रोत मानती हूँ, देवताओं का वरदान समझती हूँ। मेरी धारणा यह है कि बन्धन से मुक्त होकर आत्मा अशक्त हो जाती है।"

"तुम्हारी इस धारणा का आधार क्या है?"

"मेरा अपना अनुभव।"

सोमेश्वर ने निर्णायक के स्वर में कहा, "तुम्हारा यह कथन सुनने में बहुत अच्छा अवश्य लगता है, परन्तु तर्कसंगत नहीं है।"

"और यदि मैं इसे प्रमाणित कर दूँ।"

"यह असम्भव है।"

रत्नमाला ने कहा, "असम्भव है तो मैं उसे भी सम्भव करके दिखा दूँगी। आप कल यहाँ न आने का यथासम्भव प्रयत्न करें, यदि मुझमें शक्ति है तो मैं भी

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बुलाकर ही रहूँगी। बोलिये, स्वीकार है ?"

सोमेश्वर ने इसका उत्तर तुरन्त नहीं दिया। वह कुछ क्षण सोचता रहा, मन ही मन अपने आप को तोलता रहा।

रत्नमाला ने फिर कहा, "बोलिये, स्वीकार है ?"

सोमेश्वर ने धीमे स्वर में उत्तर दिया, "नहीं, यह मुझे स्वीकार नहीं है। मुझे भय है मैं हार जाऊँगा।"

"मुझे निश्चय है कि आप हार जाएँगे। और जानते हैं क्यों ? जानते हैं मेरी शक्ति का रहस्य क्या है ? वही बन्धन जो आपको अखरता है।"

सोमेश्वर ने कहा, "तुमने क्यों मुझे इस प्रकार बाँध रखा है, रत्ना ?"

रत्नमाला की आँखें चमक उठीं। सोमेश्वर ने आज पहली बार उसे आधा नाम लेकर पुकारा था। वह कुछ नहीं बोली, केवल अपलक दृष्टि से सोमेश्वर की ओर देखती रही।

सोमेश्वर ने अपना प्रश्न दुहराया, "बोलो रत्ना, यह कैसा सम्मोहन डाल दिया है तुमने मुझ पर ?"

उसी प्रकार सोमेश्वर के मुख की ओर देखते हुए मधु-सिंचित स्वर में रत्नमाला ने कहा, "और यही प्रश्न यदि मैं पूछूँ ?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "तो मेरी भी वही दशा होगी जो इस समय तुम्हारी हो रही है। मैं भी उत्तर नहीं दे पाऊँगा।"

रत्नमाला बोली, "ऐसी दशा में हमारे लिए यही उचित है कि इस प्रश्न को न उठाएँ। वास्तव में, यदि मेरा वश चले तो मैं यही क्या, किसी प्रश्न को कभी न उठने दूँ, एक साथ जीवन की पुस्तक से सारे प्रश्न-चिह्नों को मिटा दूँ। मुझे ये तनिक भी नहीं सुहाते हैं। इस संसार में ईश्वर का दिया हुआ इतना सौन्दर्य है, इतना माधुर्य है, इतना सुख है। क्या उस सबसे विरत होकर प्रश्नों में उलझे रहने के लिए ही हमारा जीवन होता है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "परन्तु प्रश्न सदा निष्प्रयोजन नहीं होते। उनका भी कुछ प्रयोजन होता है।"

"क्या प्रयोजन होता है ?"

"इनके द्वारा हम अतीत से शिक्षा ग्रहण करते हैं, इन्हीं के आधार पर हम भविष्य के लिए योजनाएँ बनाते हैं। प्रश्न हमारी अन्तरात्मा को स्वर देते हैं, हमारी मानवता के प्रतीक होते हैं। प्रश्नों के बिना विवेक का अस्तित्व असम्भव है। प्रश्न वस्तुतः हमारे मार्ग-दर्शक होते हैं।"

रत्नमाला ने कहा, "प्रश्नों में उलझा रहने वाला व्यक्ति कभी सीधे और सच्चे मार्ग को नहीं पा सकता। प्रश्न वस्तुतः हमारे मार्ग के कंटक होते हैं। वे हमें वर्तमान में नहीं रहने देते। कभी अतीत में घसीट ले जाते हैं—जो बीत चुका है तथा बदला नहीं जा सकता—तो कभी उस भविष्य में झाँकने का प्रयास कराते हैं जो अनिश्चित तथा अज्ञात है। इसलिए प्रश्नों में मेरी आस्था नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं केवल वर्तमान में रहना चाहती हूँ, उस वर्तमान में जो सामने है और जिसका प्रत्येक पल चिल्लाकर कह रहा है—मुझे भोगो, अभागो, मुझे भोग लो, अन्यथा मैं जा रहा हूँ और एक बार जाकर फिर कभी नहीं लौटूँगा। इसीलिए मुझे केवल वर्तमान अच्छा लगता है, उससे दूर ले जाने वाले प्रश्न तनिक भी नहीं सुहाते।"

रत्नमाला यह कहते-कहते कुछ उत्तेजित हो गयी थी, अतएव उसे शान्त करने के लिए सोमेश्वर ने अपनी हथेली से उसके दाहिने हाथ का स्पर्श करते हुए कहा, "तुम अच्छी हो, रत्ना। तुम वास्तव में बहुत अच्छी हो। तुम्हें प्रश्नन हीं सुहाते, तो मैं कब कहता हूँ कि तुम उनमें उलझो ? तुम कभी प्रश्नों के उत्तर न दो। मैं भी तुमसे कभी कोई प्रश्न नहीं पूछूंगा, एक के अतिरिक्त अन्य कोई प्रश्न मस्तिष्क में भी नहीं उठने दूंगा। उस एक के लिए मैं तुम्हारी अनुमति चाहता हूँ, क्योंकि उसे अपने मस्तिष्क से सम्भवतः कभी नहीं निकाल पाऊँगा।"

"वह क्या है ?" रत्नमाला ने पूछा।

"लो, अब तो तुम भी प्रश्न पूछने लगीं," सोमेश्वर ने हँसकर कहा।

परन्तु रत्नमाला के अधरों पर स्मिति का आभास भी नहीं उभरा। वह पूर्ववत् गम्भीर स्वर में बोली, "शीघ्र बताइये, वह कौन-सा प्रश्न है जिसे आप अपने मस्तिष्क से कभी नहीं निकाल सकेंगे ?"

सोमेश्वर ने विनोद करते हुए कहा, "संकेत से काम नहीं चलेगा ? उस प्रश्न का सम्बन्ध हमारे भविष्य से है।"

रत्नमाला कुछ क्षण मौन सोमेश्वर की ओर देखती रही, फिर उसके मुख पर से दृष्टि हटाकर सामने शून्य में निहारती हुई अत्यन्त धीमे स्वर में बोली, "आपके भविष्य से हो सकता है। परन्तु मेरा कोई भविष्य नहीं है। मैं भली प्रकार जानती हूँ कि मेरा कोई भविष्य नहीं है। मेरे सामने अंधकार है। इस लिए मैं वर्तमान में ही रहना चाहती हूँ।"

रत्नमाला की मुद्रा में परिवर्तन हो गया था। उसके मुख पर बादल-सा घिर आया था, और उसका स्वर करुण हो गया था। सोमेश्वर उसका यह स्वरूप पहले भी दो-तीन बार देख चुका था और किसी सीमा तक उसे समझने भी लगा था। अतएव विषय परिवर्तित करते हुए उसने कहा, "परन्तु मैं अपने इस वर्तमान में नहीं रहना चाहता। जानती हो इसमें क्या है ? भूख, भयानक भूख जिसके कारण इस समय मेरे भीतर अग्नि-सी प्रज्ज्वलित हो रही है।" और वह उठकर खड़ा हो गया।

रत्नमाला भी उठ खड़ी हुई और बोली, "लो, मैं भी कैसी मूर्ख हूँ ! इतना विलम्ब हो गया और मैंने भोजन तक को नहीं पूछा !"

और उसने भोजन करने के पश्चात् ही सोमेश्वर को वहाँ से जाने दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अहं-भावना अत्यधिक दुर्दमनीय होती है। वह पराजित भले हो जाए परन्तु पराजय स्वीकार नहीं करती, कुचली जाकर भी बार-बार शिर उठाती रहती है।

अतएव सोमेश्वर भी एक दिन रत्नमाला के यहाँ नहीं ही गया। उसे कोई अन्य आवश्य कार्य नहीं था, कहीं जाना भी नहीं था, फिर भी वह रत्नमाला के यहाँ नहीं गया। हवेली में अकेला बैठा-बैठा ऊबता रहा और अपनी विजय पर इतराता रहा। केवल एक प्रहार में, मात्र एक छोटे-से, महत्वहीन-से कार्य द्वारा क्या उसने एक साथ अपनी दुर्बलता और रत्नमाला की शक्ति, इन दोनों पर विजय नहीं प्राप्त कर ली थी?

परन्तु विजय का मद भी, अन्य सभी मदों की भाँति, अत्यधिक अस्थिर, अत्यधिक क्षणभंगुर होता है। वह जब चढ़ता है तो समुद्र के ज्वार की भाँति सम्पूर्ण चेतना को आप्लावित कर देता है, परन्तु समुद्र के ज्वार के ही समान जब उतरता है तब कुछ शेष नहीं छोड़ जाता है। रह जाता है केवल व्यक्ति और उसका अत्यन्त क्षुद्र, अत्यन्त नगण्य व्यक्तित्व। रह जाता है केवल उसका पराजित, खिन्न अहं।

यही दशा अगले दिन सोमेश्वर की भी हुई। रात्रि में वह ठीक था, अपनी स्थिति से पूर्णतया संतुष्ट था। फिर न जाने कब उसकी आँख लग गयी और वह सो गया। परन्तु प्रातःकाल जब उसकी आँख खुली तब विजय का मद उतर चुका था। उसके सिर में पीड़ा हो रही थी, उसका मन खिन्नता से भरा था। उसे लग रहा था मानो वह शिखर से गिरकर नीचे दलदल में आ पड़ा हो।

और तब जैसे नाद के सम्मोहन से खिचकर मृग बँध जाने के लिए भागता है वैसे ही सोमेश्वर भी, अपनी दुर्बलता को अंगीकार करने के लिए उतावला होकर, बंधन की ओर भागा।

रत्नमाला उस समय स्नान करके प्रभात की हलकी धूप में अपने केश सुखा रही थी। उसके अमावस्या की रात्रि-से सघन-श्यामल तथा कौशेय-तन्तुओं-से कोमल केश कंधों पर और पृष्ठ-भाग पर अव्यवस्थित बिखरे हुए थे। सद्यःस्नात शरीर की हेम-कान्ति झीने कौशेय आवरण को भेदकर विकीर्णित हो रही थी। परन्तु उसका मुख उदास था, मानो पूर्णिमा के चन्द्रमा पर विषाद के मेघ की छाया आ पड़ी हो। मेघावृत्त चन्द्रमा भी कितना सुन्दर होता है, यह सोमेश्वर ने उसी दिन अनुभव किया।

रत्नमाला सदा उसे देखकर खिल जाया करती थी। परन्तु उस दिन नहीं खिली। वह अपने स्थान से उठकर खड़ी भी नहीं हुई, बैठे ही बैठे, म्लानमुख उत्साहहीन स्वर में स्वागत करती हुई बोली, "आइये कुँवरजी, पधारिये। यहीं विराजिये।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर ने उसके निकट बैठते हुए पूछा, "आज कुछ अस्वस्थ हो क्या ?"

रत्नमाला ने उपालम्भ के स्वर में कहा, "आज कुंवरजी को मेरे स्वास्थ्य की बड़ी चिन्ता हो रही है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "होनी नहीं चाहिए ?"

"नहीं। मेरे स्वस्थ अथवा अस्वस्थ होने से क्या अन्तर पड़ता है ? यहाँ कौन रोने वाला बैठा है ? अपनी कहिये। आप तो स्वस्थ हैं ?"

अर्ध-अवरुद्ध कंठ से सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ।"

"तो मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार कीजिये," रत्नमाला बोली।

"स्वस्थ होने के उपलक्ष में ?"

"हाँ, और उससे भी अधिक विजय के उपलक्ष में। आप जीते, मैं हारी। अब तो आप संतुष्ट हैं ? अब तो आपको बंधन नहीं अखरता ?"

सोमेश्वर ने हतप्रभ होकर कहा, "मुझे अधिक लज्जित न करो, रत्ना। मैं वैसे ही पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ। मैं अपनी विजय में भी पराजित हूँ, और तुम पराजित होकर भी विजयी हो।"

रत्नमाला ने कहा, "मैं तो आपको केवल लज्जित ही कर रही हूँ, परन्तु आपने मुझे दुःखी किया है, और कितना दुःखी किया है इसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते।"

"क्या तुम समझती हो कि मैं स्वयं भी उतना ही दुःखी नहीं हुआ हूँ ?"

"नहीं, मेरे दुःख की आप कल्पना भी नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त, मैंने आपको दुःखी नहीं किया, सम्भवतः कर भी नहीं सकती थी। आप यदि दुःखी हुए हैं तो उसका कारण भी आप स्वयं हैं। आपने जैसा किया, वैसा पाया। परन्तु मैंने ऐसा क्या किया था ?"

"हाँ रत्ना, तुमने कुछ नहीं किया था। यह सत्य है। अपराध मेरा था। मैं तुम्हारा अपराधी हूँ। मुझे जो चाहो दंड दो, मैं स्वीकार करूँगा।"

परन्तु रत्नमाला का रोष कम नहीं हुआ। वह बोली, "मैं आपको दंड देने वाली कौन होती हूँ ? मेरा क्या अधिकार है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "तुम्हारा क्या अधिकार है यह तुम भली प्रकार जानती हो, और यदि कहोगी तो मैं भी बता दूँगा। परन्तु उससे पूर्व मैं एक और बात कहना चाहता हूँ। कहूँ ?"

रत्नमाला ने कहा, "मैं मना भी करूँ तो क्या आप मान लेंगे ? कहिये।"

एक पक्ष जब रोष करता है तो दूसरे में पश्चात्ताप की अनुभूति स्वभावतः क्षीण हो जाती है। अतएव सोमेश्वर ने लगभग प्रकृतिस्थ होते हुए कहा, "तुम्हारा रोष तुम्हारे सौन्दर्य को द्विगुणित कर देता है, रत्ना। इस समय तुम्हारा मुख प्रभात के ओस-भीगे पाटल जैसा लग रहा है, और तुम्हारे अधर मानो पलाश-कुसुम की दो रक्तवर्ण, कुंचित पंखुड़ियाँ हों, और तुम्हारी......"

"अब रहने भी दीजिये," रत्नमाला ने किंचित् खीझ के स्वर में कहा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर बोला, "रहने कैसे दूँ ? क्या तुम्हारे रोष के भय से मैं सत्य से मुख मोड़ लूँगा ? कदापि नहीं। यह असम्भव है। मैं अवश्य कहूँगा कि तुम्हारी आँखें……"

"कमल के समान हैं। यही न ? परन्तु कमल के समान होकर भी ये व्यर्थ हैं, इनसे किसी का कोई लाभ नहीं होता। विजन का कुसुम जैसे खिला वैसे न खिला।"

"क्यों ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"कुसुम की सार्थकता देवता पर अर्पित होने में होती है, खिल कर डाल पर ही मुरझा जाने में नहीं।"

सोमेश्वर ने कहा, "परन्तु तुम्हारा सौन्दर्य-कुसुम निरर्थक नहीं है, रत्ना। यदि कुसुम की सार्थकता भ्रमर के गुंजन में है तो तुम्हारा सौन्दर्य निरर्थक नहीं है। मैं तुम्हारा भ्रमर हूँ। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, रत्ना। आज मैंने यह अनुभव कर लिया है कि तुम्हारे बिना मेरा जीवित रहना भी सम्भव नहीं है।"

रत्नमाला ने एक बार सोमेश्वर की ओर देखा और फिर अपना सिर झुका लिया। उसकी पलकें धीरे-धीरे मुँद गयीं और वह कई क्षण तक इसी प्रकार मौन, किसी मधुर स्वप्न में खोयी-सी बैठी रही। ताप में नवनीत के समान उसका रोष द्रवित हो चुका था, और उसका मुख-मंडल शारदीया ज्योत्स्ना की स्निग्ध, धवल कान्ति से भर गया था। कुछ समय पश्चात् उसके अधर धीरे-धीरे हिले और उसने बिना पलकें खोले, मानों स्वप्न-लोक से आ रहा हो ऐसे स्वर में कहा, "यही वाक्य एक बार फिर कह सकते हैं ?"

"हाँ, कह सकता हूँ, एक बार ही क्यों, सहस्र बार कह सकता हूँ," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"तो कह दीजिये।"

"लो, कह रहा हूँ। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, रत्ना। आकाश की सीमा हो सकती है, परन्तु मेरे प्रेम की नहीं है। तुम्हारे बिना अब मेरा जीवित रहना भी सम्भव नहीं है।"

रत्नमाला ने पलकें अब भी नहीं खोलीं, केवल अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया और कहा, "मेरा हाथ हाथ में लेकर कहिये कि मुझे कभी मन से विलग नहीं करेंगे।"

सोमेश्वर ने उसका बढ़ा हुआ हाथ अपने दाहिने हाथ में ले लिया और कहा, "मैं तुम्हारी शपथ खाकर कहता हूँ कि तुम्हें कभी मन से विलग नहीं करूँगा। अब तो संतुष्ट हो ?"

तब रत्नमाला ने धीरे-धीरे अपनी आँखें खोलीं, और एक स्वप्निल दृष्टि सोमेश्वर की ओर डालते हुए कहा, "आप उस दिन मेरे चित्र के विषय में पूछ रहे थे। वह पूरा हो गया है। देखेंगे ?"

"कहाँ है ?" सोमेश्वर ने किंचित् खिन्न स्वर में कहा। उसे यह विषयान्तर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तनिक भी अच्छा नहीं लगा था।

"भीतर चलिये। अब यहाँ से उठना भी चाहिये, सूर्य की किरणें प्रखर होने लगी हैं।" यह कहकर रत्नमाला ने बहुत धीरे-से सोमेश्वर के हाथ में से अपना हाथ खींचकर अलग किया। फिर वह उठकर खड़ी हो गयी।

इसके पश्चात् स्वयं आगे-आगे चलती हुई वह उसे अपने शयन-कक्ष की ओर ले गयी।

२९

रत्नमाला के शयन-कक्ष में प्रवेश करते ही सोमेश्वर को ऐसा लगा मानों वह सामान्य जीवन के सुपरिचित यथार्थ से निकलकर अनायास ही एक अपरिचित स्वप्न-लोक में पहुँच गया हो। कक्ष बहुत बड़ा नहीं था। उसमें केवल एक द्वार था, और उसके ठीक सामने एक वातायन था। द्वार तथा वातायन दोनों ही गहरे काले रंग के परदों से ढके थे, इस कारण कक्ष में इस समय भी प्रकाश की अपेक्षा अंधकार अधिक था। वर्षा ऋतु में कभी-कभी जब घने काले बादल क्षितिज से क्षितिज तक आकाश पर छा जाते हैं और सूर्य के सम्बन्ध में अनुमान लगाना भी कठिन हो जाता है कि वह कहाँ होगा, तब जैसा प्रकाश होता है वैसा ही उस समय रत्नमाला के शयन-कक्ष में था। सम्पूर्ण वातावरण एक भीनी, मादक गंध से सिंचित था। वातायन के निकट रत्नमाला का पर्यंक बिछा हुआ था। उस पर शुभ्र, दुग्ध-धवल आवरण पड़ा हुआ था जिस पर पीत पाटल की पंखुड़ियाँ बिखरी थीं। पर्यंक के दक्षिण पार्श्व में एक ऊँची काष्ठ-पीठिका थी जिस पर एक चित्र रखा था। उसके निकट एक सुगंध-दीप जल रहा था, और पीठिका भर पर, चित्र के चरणों में, उजले फूलों का ढेर लगा था।

रत्नमाला ने सोमेश्वर को ले जाकर इसी चित्र के सम्मुख खड़ा कर दिया और कहा, "देखिये।"

सोमेश्वर ने देखा। अनुकृति त्रुटिरहित नहीं थी—नासिका कुछ अधिक दीर्घ तथा पैनी हो गयी थी, ग्रीवा कुछ अधिक संकुचित हो गयी थी—परन्तु चित्र निस्संदेह उसी का था। उसने अपनी दृष्टि चित्र से हटाकर रत्नमाला की ओर डाली। वह संकुचित-सी खड़ी धरती की ओर देख रही थी।

सोमेश्वर ने कहा, "तुम अद्भुत कलाकार हो, रत्ना।"

रत्नमाला ने किंचित् संकोच के स्वर में बिना दृष्टि ऊपर उठाये कहा, "स्मृति से बनाया गया है, अतएव कहीं-कहीं त्रुटियाँ आ गयी हैं। परन्तु रंग देखिये, कैसे उभरे हैं!"

"समय के साथ अभी और उभरेंगे", सोमेश्वर ने कहा।

"समय के साथ? अर्थात् भविष्य में?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हाँ।"

रत्नमाला ने कहा, "मैं पहले ही कह चुकी हूँ कि भविष्य में मेरी आस्था नहीं है। मैं केवल वर्तमान को जानती हूँ।"

"तो अपना भविष्य मुझे दे दो," सोमेश्वर ने कहा।

"मेरा तो सब कुछ आपका ही है—भूत भी, वर्तमान भी, और यदि कोई भविष्य है तो वह भी।"

"रत्ना !" सोमेश्वर ने कहा।

"हाँ, मेरे पास मेरा कुछ नहीं है, जो कुछ है वह आपका है और आपके लिए। ...परन्तु आप खड़े कब तक रहेंगे ? बैठ तो जाइये।" यह कहते हुए रत्नमाला ने हाथ पकड़कर, एक प्रकार से खींचते हुए ले जाकर, सोमेश्वर को पर्यंक पर बैठा दिया और फिर वह स्वयं भी वहीं उसके निकट बैठ गयी।

सोमेश्वर ने संकोच का अनुभव करते हुए कहा, "तुम्हारी यह एक बात मैं कभी नहीं समझ पाता हूँ, रत्ना। तुम अपने भविष्य के प्रति इतनी उदासीन क्यों हो ?"

रत्नमाला ने कहा, "यह बताने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु आप सम्भवतः समझ नहीं सकेंगे।"

"तुम बताओ तो, मैं समझने का प्रयास करूँगा।"

रत्नमाला ने कहा, "तो सुनिये, और प्रयास कीजिये। मैं अपने भविष्य के प्रति उदासीन इसलिए हूँ कि मैंने उसके लिए कुछ बचाकर नहीं रखा है। हार जाऊँगी यह जानते हुए भी मैंने अपनी सारी पूँजी वर्तमान के एक दाँव पर लगा दी है। परन्तु मुझे इसका पश्चात्ताप नहीं है। कभी होगा भी नहीं, क्योंकि दाँव मैंने जान-बूझ कर लगाया है। वास्तव में मैं सब-कुछ हार कर भी सम्पन्न बनी रहूँगी। में इस समय भी दुःखी नहीं हूँ, क्योंकि दाँव लगाना अपने आप में एक सुखद अनुभव होता हैं। बताइये, समझ रहे है ?"

"हाँ...नहीं...।" और अन्तिम शब्द कहते-कहते सोमेश्वर ने उसका हाथ कसकर पकड़ लिया। रत्नमाला स्वतः उसके थोड़ा और निकट आ गयी। उसकी लम्बी, पतली, कोमल उँगलियाँ सोमेश्वर की उँगलियों से लिपट गयीं, जैसे लता अपनी अनगिनत बाँहों में वृक्ष को चारों ओर से कसकर उससे लिपट जाती है। फिर उसकी पलकें मुँद गयीं और शिर सोमेश्वर के कंधे पर आ गिरा। उसके सुदीर्घ काले केश सोमेश्वर के वक्ष पर तथा पृष्ठ-भाग पर बिखर गये।

सोमेश्वर ने अपने सम्पूर्ण शरीर में एक अपरिचित प्रकार की स्फूर्ति का अनुभव किया। उसे लगा मानों एक सर्वग्राही ज्वाला उसके शरीर के कई भागों से एक साथ उठकर तीव्र गति से उसके मस्तिष्क की ओर बढ़ रही है और उसकी लपटें शरीर के रोम-रोम से फूट-फूटकर बाहर निकलने लगी हैं। उसका मस्तक क्षण-भर में ही स्वेद से भीग गया, वह भीतर-बाहर सभी ठौर जल रहा था।

उसकी कातर दृष्टि द्वार की ओर बढ़ती हुई सहसा बीच में ही अटक गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसे लगा मानों रत्नमाला द्वारा अंकित उसका वह चित्र उसे घूर-घूरकर देख रहा हो और कुछ कहना चाहता हो। सम्मोहित-सा सोमेश्वर भी अपलक उसे निहा-रने लगा। तभी उसका ध्यान अचानक चित्र के चरणों में भक्तिपूर्वक अर्पित उजले फूलों की ओर चला गया, और इसके साथ ही उसके मस्तिष्क में तीक्ष्ण प्रकाश की एक रेखा कौंध गयी। उसे लगा मानों युगों-युगों तक सागर की लहरों पर भटकते रहने के पश्चात् उसे तट की क्षीण किन्तु आशाप्रद रेखा दिखायी पड़ गयी हो।

उधर रत्नमाला कह रही थी, "मेरे स्वामी! मैं तुम्हारी हूँ। मेरा रोम-रोम तुम्हारा है। मुझे मन से मत बिसारना।"

सोमेश्वर ने अपना मुक्त हाथ उसके सिर पर फेरते हुए आश्वासन के स्वर में कहा, "नहीं रत्ना, यह असम्भव है। मै तुम्हें कभी नहीं बिसार सकूँगा। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।"

रत्नमाला खिसक कर उसके थोड़ा और समीप आ गयी।

सोमेश्वर ने फिर कहा, "रत्ना, चित्र के चरणों में ये फूल तुमने ही चढ़ाये हैं?"

उसके कंधे पर टिका हुआ रत्नमाला का सिर स्वीकृति में हिला।

उसने फिर पूछा "प्रतिदिन चढ़ाती हो?"

"हाँ," रत्नमाला ने उत्तर दिगा।

"क्यों? जानती हो, फूल देवता के चरणों में चढ़ाये जाते हैं?"

"जानती हूँ। इतना मैं भी जानती हूँ।"

"फिर?"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "फिर क्या? मैं भी तो देवता के चरणों ही में चढ़ाती हूँ।"

"रत्ना!"

"क्या? कहिये।"

सोमेश्वर ने कहा, "सुनो, रत्ना। मैं देवता नहीं हूँ, इतना निश्चित है। मैं चाहता हूँ कि यह तुम भी भली प्रकार समझ लो। और मैं पशु भी नहीं हूँ। यह भी भली प्रकार समझ लो कि मैं पशु नहीं बनना चाहता हूँ। अतएव आज मैंने एक निश्चय किया है, और वह यह है कि जिस अतीत को तुम अपने पीछे छोड़ आयी हो, मैं तुम्हें लौटकर फिर उसमें नहीं जाने दूंगा। यह मेरी प्रतिज्ञा है कि मैं तुम्हें फिर नगरवधू नहीं बनने दूंगा। मैं तुम्हें वधू, केवल अपनी वधू बनाऊँगा, यह मेरी प्रतिज्ञा है।"

रत्नमाला ने उत्तर में कुछ भी नहीं कहा, वह एक दयनीय, खोयी-खोयी दृष्टि से सोमेश्वर की ओर देखती हुई उसी प्रकार बैठी रही।

कुछ क्षण प्रतीक्षा करने के पश्चात् सोमेश्वर ने ही फिर कहा, "रत्ना, तुम प्रसन्न नहीं हो?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तब रत्नमाला ने सिर उठाया। सोमेश्वर ने देखा उसकी आँखों में आँसू थे और आँसूओं के पीछे से झाँकती हुई एक अत्यन्त प्रबल, अनुनयपूर्ण कातरता थी।

सोमेश्वर ने कहा, "तुम रो रही हो, रत्ना ?"

प्रश्न की उपेक्षा करते हुए रत्नमाला बोली, "इसीलिए तो मैं वर्तमान को जी लेना चाहती हूँ। इसीलिए भविष्य में मेरी आस्था नहीं है।"

"परन्तु क्यों ? तुम ऐसा क्यों सोचती हो ? क्या तुम्हें मेरा विश्वास नहीं है ?"

रत्नमाला ने कहा, "आपका है, परन्तु स्वयं अपने भाग्य का नहीं है। आपका प्रण कभी पूरा नहीं होगा। यह असम्भव है।"

"तुम कहना क्या चाहती हो, रत्ना ? मेरा प्रण क्यों कभी पूरा नहीं होगा ? यह क्यों असम्भव है ?"

रत्नमाला ने एक शीतल उसाँस भरकर कहा, "मैं ऐसा भाग्य लेकर नहीं आयी हूँ, इसलिए। आप पूरा प्रयत्न करेंगे, परन्तु आपको सफलता नहीं मिलेगी, क्योंकि मैं अभागी हूँ। आपके पिताजी कभी एक नगर-वधू को अपनी पुत्रवधू बनाना स्वीकार नहीं करेंगे। महाराज कभी आपको ऐसा करने की अनुमति नहीं देंगे।"

यह कठिनाई सोमेश्वर के मस्तिष्क में भी थी, परन्तु उसका युवा रक्त इसे असाध्य नहीं समझता था। उसने कहा, "विवाह मेरा होना है, पिता जी का अथवा महाराज का नहीं। अतएव इस सम्बन्ध में मेरी इच्छा ही निर्णायक होगी।"

"और यदि उन्होंने अनुमति न दी ?"

सोमेश्वर ने उत्तेजित होकर कहा, "तो मैं उनकी अनुमति के बिना, और उनकी इच्छा के विरुद्ध, तुम्हें अपनी वधू बनाऊँगा। यह संसार बहुत बड़ा है, रत्ना, और क्षत्रिय का धन उसकी खड्ग में निवास करता है। मैं जहाँ रहूँगा वहीं बाहुबल से अपने लिए उचित स्थान और तुम्हारे लिए उचित सम्मान अर्जित कर लूँगा।"

परन्तु रत्नमाला इस क्षत्रियोचित गर्वोक्ति से तनिक भी आश्वस्त नहीं हुई। उसने कहा, "यह असम्भव है। आप महामंत्री जी की शक्ति से भली प्रकार परिचित नहीं हैं, इसलिए ऐसा कह रहे हैं। परन्तु मैं उससे परिचित हूँ। मैं जानती हूँ कि उनकी इच्छा के विरुद्ध कुछ भी करना, खजुराहो से भाग कर कहीं चले जाना भी, असम्भव है। इसलिए कह रही हूँ कि दोष आपका नहीं, मेरे भाग्य का है। मैं ही अभागी हूँ। यह सत्य है कि मैं अब नगर-वधू नहीं रही, परन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि मैं कभी वधू नहीं बन सकूँगी।"

सोमेश्वर ने कहा, "क्षत्रिय के प्रण की मर्यादा तुम नहीं जानती हो, रत्ना। मैंने तुम्हारा हाथ हाथ में लेकर प्रण किया है; उसे पूरा करके भी दिखाऊँगा, तुम मेरे ऊपर विश्वास तो करो।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला उठकर खड़ी हो गयी और बुझे हुए स्वर में बोली, "करूँगी। आप कहते हैं तो करूँगी। विश्वास के लिए आशा का आधार नहीं है, फिर भी करूँगी। और कुछ ?"

सोमेश्वर भी खड़ा हो गया और बोला, "नहीं, इस समय और कुछ नहीं। अभी तुम बहुत उत्तेजित हो, रत्ना।"

रत्नमाला ने किंचित् तीखे स्वर में उत्तर दिया, "हाँ, मैं उत्तेचित हूँ, क्योंकि मैं मानवी हूँ और मेरे भीतर एक स्पन्दनशील हृदय है। और आप ?"

सोमेश्वर के शरीर में स्फूर्ति ने फिर अँगड़ाई ली। उसका रक्त-संचार फिर तीव्र होने लगा, उसका रोम-रोम फिर अग्निमय हो गया। उसका हाथ रत्नमाला की ओर उठा, उसके पैर यंत्र-चालित-से रत्ननाला की ओर बढ़े। उसने अपनी दोनों हथेलियों के बीच दबाकर रत्नमाला का मुख अपनी ओर किया और उसकी आँखों में आँखें डालकर उसे अपलक निहारने लगा, मानों नयनों की भाषा में कह रहा हो—मैं भी मात्र मानव हूँ, रत्ना। मेरे भीतर भी एक स्पन्दनशील हृदय है, और वह तुम्हारे लिए व्याकुल है, तुम्हें अपनी बना लेना चाहता है।

तभी रत्नमाला ने कहा, "अब चलें ? आपने अभी कलेवा नहीं किया होगा।"

सोमेश्वर ने, मानों सोते से जागा हो ऐसे स्वर में, कहा, "कलेवा ? हाँ, अभी तो नहीं किया है।"

"तो चलें ?" रत्नमाला ने कहा। परन्तु वह अपने स्थान से नहीं हिली, वहीं खड़ी-खड़ी उसकी ओर निहारती रही।

सोमेश्वर ने भी उसके प्रश्न का उत्तर तुरन्त नहीं दिया। वह कुछ क्षण मौन खड़ा रत्नमाला की आँखों में न जाने क्या-क्या पढ़ने का प्रयत्न करता रहा। अन्त में जब रत्नमाला ने ही अपनी आँखें धरती की ओर झुका लीं तब सोमेश्वर ने उसके भाल पर एक संक्षिप्त-सा चुम्बन अंकित करते हुए कहा, "चलो।" और यह कहकर वह स्वयं आगे-आगे द्वार की ओर चल पड़ा।

शयन-कक्ष से बाहर आकर दोनों ओर से वार्तालाप का स्रोत सूख गया। दोनों अपने-अपने विचारों में खोये हुए और मौन थे।

अन्त में जब कलेवा करने के पश्चात् वह चलने के लिए तत्पर हुआ तब रत्नमाला ने घोषणा-सी करते हुए कहा, "कल मैं महोत्सवनगर जा रही हूँ।"

"कल ?" सोमेश्वर ने साश्चर्य पूछा।

"हाँ, कल प्रातःकाल।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।"

"नहीं, आप मेरे साथ नहीं चलेंगे।"

"क्यों ?"

रत्नमाला ने कहा, "आपके साथ चलने से किसी का कोई लाभ नहीं होगा, इसलिए।"

"परन्तु मैं यहाँ अकेला क्या करूँगा ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अप क्षत्रिय हैं और समर्थ हैं, जो चाहें कर सकते हैं।" रत्नमाला के इस वाक्य में परिहास की अपेक्षा व्यंग्य की मात्रा अधिक थी।

और यह व्यंग्य सोमेश्वर को उस दिन, उसके अगले दिन, और उसके अगले कई दिनों तक शूल-सा चुभता रहा।

३०

उस दिन संध्या को सोमेश्वर क्रोधवश रत्नमाला के यहाँ नहीं गया, और अगले दिन प्रातःकाल वह सचमुच महोत्सवनगर चली गयी। वह किसी को यह बताकर भी नहीं गयी थी कि वह किस कार्य से जा रही है और कब तक लौटेगी।

यह समाचार पाकर सोमेश्वर का क्रोध स्वतः विलीन हो गया और उसका मन रत्नमाला के लिए व्याकुल होने लगा। ग्रीष्म के दिन वैसे ही बड़े होते हैं, उसे रातें भी बड़ी-बड़ी लगने लगीं। प्रत्येक दिन के साथ हठ करके रत्नमाला के साथ न जाने का उसका पश्चात्ताप बढ़ने लगा। उसका मन हर समय भाँति-भाँति की आशंकाओं से भरा रहता था, और रत्नमाला के लौटने की प्रतीक्षा उसे शीघ्र ही अनन्त प्रतीत होने लगी।

इस स्थिति में उसे सान्त्वना देने वाला केवल एक विचार था। उसके पिता शीघ्र ही खजुराहो आने वाले थे। उनका इस आशय का पत्र आया था। सोमेश्वर बड़ी व्यग्रता के साथ उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। वह मना रहा था कि वे रत्नमाला के लौटने से पहले ही आ जाएँ, क्योंकि उसने रत्नमाला के सम्बन्ध में उनसे स्पष्ट बात करने का निश्चय कर लिया था। वह जानता था कि कार्य बहुत कठिन है, परन्तु उसने भी अपने भीतर पर्याप्त साहस बटोर लिया था और उसे आशा थी कि उसके पिता सहमत न होते हुए भी उसके हठ को अस्वीकार नहीं कर सकेंगे और तब, रत्नमाला के लौटते ही, वह उसे अंक में भरकर कह सकेगा—देखा तुमने क्षत्रिय का प्रण? अब तुम भविष्य में आस्था रखकर वर्तमान को भोगो। मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

परन्तु इसी बीच उसे भी यात्रा पर जाना पड़ा। इसका निश्चय भी उसी प्रकार अचानक हुआ जैसे कुछ समय पूर्व कान्यकुब्ज जाने का हुआ था। उद्देश्य इस बार भी वही था, केवल गन्तव्य भिन्न था। महामंत्री ने उसे बुलाकर सम्पूर्ण स्थिति समझाने के पश्चात् कहा, "इस बार तुम्हें अधिक कठिनाई नहीं होगी। यादवों के साथ हमारे सम्बन्ध अधिक अच्छे हैं, और कान्यकुब्ज की अपेक्षा श्रीपुर उद्भाण्ड से अधिक निकट है।"

अचानक सोमेश्वर के मन में एक विचार आया और उसके मुख से निकल पड़ा, "यदि स्वामी शिवानंद उस ओर पहुँच चुके होंगे तो हमारा कार्य और भी सरल सिद्ध होगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"शिवानंद ?" महामंत्री ने कुछ सोचते हुए कहा, "हाँ, यह विचार बहुत अच्छा है। जहाँ तुम्हें भेजा जाए वहाँ शिवानन्द को कुछ पहले पहुँच जाना चाहिए। इससे कार्य बहुत सरल हो जाएगा।"

सोमेश्वर ने कहा, "परन्तु स्वामी जी आजकल न जाने कहाँ हों। उनका ठिकाना क्या ?"

"शिवानंद का ?" महामंत्री ने कहा। "उसका ठिकाना है। यहीं खजुराहो में है। तुम उसकी चिन्ता मत करो। श्रीपुर में ऐसी आवश्यकता भी नहीं है। आगे से जहाँ हमारा पत्र जाएगा वहाँ शिवानंद पहले ही पहुँच जाया करेगा।"

महामंत्री के कार्यालय से लौटते हुए मार्ग भर सोमेश्वर शिवानंद के सम्बन्ध में ही सोचता रहा। महामंत्री की बात से यह भलीभाँति स्पष्ट हो गया था कि शिवानंद एक छद्म व्यक्ति, अर्थात् महामंत्री की गुप्तचर-सेना का एक सैनिक था। महामंत्री ने इस बात को छिपाने का प्रयत्न नहीं किया था। वास्तव में, जान-बूझकर सोमेश्वर पर इस रहस्य को प्रकट करने के पीछे, उनका कोई उद्देश्य अवश्य होगा। सोमेश्वर सोचने लगा कि वह उद्देश्य क्या हो सकता है, परन्तु बहुत विचार करने के पश्चात् भी वह किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सका।

यही सब सोचता हुआ वह अपनी हवेली में पहुँच गया। वहाँ उसे अन्य कई बातों की व्यवस्था करनी थी। वह उनमें व्यस्त हो गया।

अगले दिन प्रातःकाल उसने श्रीपुर के लिए प्रस्थान कर दिया।

श्रीपुर वर्तमान मथुरा-भरतपुर क्षेत्र में स्थित ब्रज-राज्य की राजधानी थी। इस प्रदेश में उस समय यदुवंशियों का शासन था। राज्य अधिक बड़ा नहीं था, परन्तु उसकी सैनिक-शक्ति अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए पर्याप्त थी। यदुवंशी भी चन्देलों की भाँति पहले गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य के मांडलिक थे, और चन्देलों की ही भाँति कान्यकुब्ज की दुर्बलता से लाभ उठाकर उन्होंने भी अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी थी और धीरे-धीरे अपने राज्य का क्षेत्र-विस्तार कर लिया था। इस इतिहास-साम्य के कारण चन्देलों के साथ उनके सम्बन्ध बहुत अच्छे थे। समकालीन यादव शासक राजा जैतपाल महाराज धंगदेव का बड़ा आदर करते थे। राजा जैतपाल अभी युवक ही थे, अवस्था में युवराज गंडदेव से भी छोटे थे।

इसी स्थिति के आधार पर महामंत्री प्रभास ने सोमेश्वर से कहा था कि उसे श्रीपुर में कोई कठिनाई नहीं होगी, और ऐसा ही हुआ भी। श्रीपुर पहुँचने पर उसका समुचित स्वागत-सत्कार किया गया। राजा जैतपाल ने स्वयं उसे भोजन के लिए आमंत्रित किया।

राजनीतिक परामर्श मंत्रि-परिषद में हुआ, और उसमें अधिक समय नहीं लगा। जैतपाल ने महाराज धंगदेव द्वारा संचालित होने को ही यथेष्ट आधार मान कर तुरन्त योजना में सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया और आवश्यकता तथा सामर्थ्य के अनुरूप सैनिक सहायता देने का वचन दे दिया। वैसे उन्होंने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुष्पपुर तथा गजनी के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न भी पूछे जिनके सोमेश्वर ने समुचित उत्तर दिये। परन्तु ये प्रश्न योजना स्वीकार कर लेने के पश्चात् पूछे गये थे, उनका उद्देश्य केवल ज्ञान-वर्धन था।

इस प्रकार श्रीपुर में सोमेश्वर का कार्य एक दिन में ही पूरा हो गया था, यद्यपि आतिथ्य में उसे एक दिन और वहाँ रुकना पड़ा।

खजुराहो से श्रीपुर जाते समय उसे मार्ग में चार दिन लगे थे, परन्तु इस बार लौटने में तीन ही लगे।

खजुराहो लौटते ही उसे ज्ञात हुआ कि उसके पिता सामन्त विशालदेव उसके श्रीपुर जाने के एक दिन पश्चात् खजुराहो आये थे और तीन दिन वहाँ रहकर फिर रामनगर लौट गये थे। यह जानकर उसे बड़ी निराशा हुई। जिस अवसर की वह इतनी व्यग्रता से प्रतीक्षा करता रहा था वह आकर निकल भी गया था और उसने पिता से जो कुछ कहने को सोचा था वह सब का सब अनकहा रह गया था।

हवेली के अनुचरों से उसे यह भी ज्ञात हुआ कि मल्लिका तीन बार उसके सम्बन्ध में पूछने आ चुकी थी, जिसका अर्थ यह था कि रत्नमाला भी उसके जाने के पश्चात् शीघ्र ही महोत्सवनगर से लौटकर आ गयी थी। इस समाचार से उसे प्रसन्नता हुई। रत्नमाला के अकेले जाने के कारण जो अनेक आशंकायें उसके मन में उठने लगी थीं, अब वह उनसे मुक्त हो गया। चिन्ता के साथ-साथ उसका क्षोभ भी कम हो गया। क्षोभ का कारण वास्तव में वे बातें थीं जो रत्नमाला ने इस सम्बन्ध में उससे कही थीं। परन्तु मल्लिका का तीन बार उसके सम्बन्ध में पूछने आना इस बात का प्रमाण था कि रत्नमाला ने अपनी भूल अनुभव कर ली है। अतएव अब सोमेश्वर के पास दूर रहने का कोई कारण नहीं रह गया था। वैसे भी यदि मल्लिका पूछने न आयी होती तो भी, अब वह रत्नमाला से दूर नहीं रह सकता था, क्योंकि प्रेमियों का वियोग सदा उन्हें अतिशय क्षमाशील बना देता है। परन्तु अब तो कोई बात ही नहीं रह गयी थी। अतएव सोमेश्वर का मन रत्नमाला से मिलने के लिए व्यग्र हो उठा।

परन्तु एक कठिनाई अभी शेष थी। वह रत्नमाला से उसके पास जाकर कहेगा क्या? इस संदर्भ में पिता का उसकी अनुपस्थिति में आकर उसके लौटने से पूर्व ही चले जाना उसे बहुत अखर रहा था। यदि वे चार-पाँच दिन और रुक गये होते तो वह लौटते ही उनसे रत्नमाला के सम्बन्ध में बात कर लेता और इस समय अपने आप को इस कठिन स्थिति में न पाता। तब वह रत्नमाला से अभी, इसी समय जाकर कह सकता था—देखा रत्ना। जैसा मैंने कहा था वही हुआ कि नहीं? पिताजी सहमत हो गये हैं। अब तुम्हें कोई मुझसे विलग नहीं कर सकता।

सोचते-सोचते अचानक उसके मस्तिष्क में एक विचार आया, और वह तुरन्त लेखनी लेकर बैठ गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्र में उसने सविस्तार स्थिति का वर्णन किया। रत्नमाला के सम्बन्ध में भी सब-कुछ लिख दिया, कुछ नहीं छिपाया। अन्त में पत्र समाप्त करते हुए उसने लिखा—"यह सब आपको लिखने में मुझे बड़े संकोच का अनुभव हो रहा है। परन्तु कहने में और अधिक संकोच लगता, और सम्भवतः मैं अपनी पूरी बात ठीक से कह भी नहीं पाता। इसीलिए लेखनी का सहारा ले रहा हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं यह सब वासना अथवा क्षणिक मोह के वशीभूत होकर नहीं लिख रहा हूँ। मेरी भावना पवित्र है और मैं रत्नमाला को सर्वथा उस भावना के योग्य समझता हूँ। वह सुन्दरी है, सुसंस्कृत है, अनेक-गुण-सम्पन्न है। यह सत्य है कि वह कभी नगरवधू थी, परन्तु अब नहीं है यह भी मैं पूर्ण निश्चय के साथ कह रहा हूँ। उसकी प्रवृत्ति भी उस ओर नहीं है और यदि उसे अवसर मिल जाए तो वह एक आदर्श कुल-नारी बन सकती है। हमारे समाज में आदर्शच्युत पत्नी के लिए केवल तीन मास के बहिष्करण की व्यवस्था है। तुरुष्कों द्वारा अपहृत स्त्रियों की शुद्धि में इतना समय भी नहीं लगता है। फिर नगरवधू होने का ही दंड किसी को जन्म भर क्यों भोगना पड़े ? यह तर्कसंगत नहीं है, न्यायसंगत भी नहीं है। अतएव मैं आपसे विनम्र निवेदन करने का साहस कर रहा हूँ। मेरा अनुरोध है कि मेरा बाल-हठ मान कर आप इस सम्बन्ध को अपना आशीर्वाद प्रदान करें।"

पत्र पूरा करके सोमेश्वर ने संतोष की साँस ली। उसे लगा मानों एक भारी बोझ उसके सिर से उतर गया हो। फिर उसने अपने एक विश्वस्त अनुचर को बुलाया और उसे पत्र तथा आवश्यक निर्देश देकर सूर्योदय से पूर्व रामनगर के लिए प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

संध्या हो चली थी, परन्तु उसने निश्चय कर लिया था कि वह अगले दिन पत्र भेज लेने के पश्चात् ही रत्नमाला के पास जाएगा। तब वह कम-से-कम इतना तो कह सकेगा कि मैं पत्र भेज चुका हूँ और उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

३१

रत्नमाला ऐसे मिली मानों कभी कुछ हुआ ही न हो। देखते ही प्रसन्न होकर बोली, "कहाँ चले गये थे ? प्रतीक्षा करते-करते मेरी तो आँखें पथरा गयीं।"

सोमेश्वर ने ध्यान से उसकी ओर देखा। उसके मुख पर हलकी-सी पीतिमा थी, और आँखों के नीचे हलकी-सी कालिमा का आभास होता था। इन चिह्नों को उसकी इस समय की प्रसन्नता भी नहीं छिपा पा रही थी। सोमेश्वर का हृदय रत्नमाला के लिए भर आया, क्षण-भर के लिए उसकी वाणी अवरुद्ध हो गयी।

रत्नमाला ने अपना प्रश्न दुहराया, "बताइये न, कहाँ चले गये थे ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रश्न का उत्तर प्रश्न से देते हुए सोमेश्वर ने कहा, "तुम भी तो चली गयी थीं ?"

"परन्तु मैं आपको बताकर गयी थी। आपको ज्ञात था कि मैं कहाँ जा रही हूँ और क्यों जा रही हूँ। मैं आपकी भाँति बिना बताये नहीं चली जाती हूँ।"

"ऐसे तो मैं भी कह सकता हूँ कि मैं भेजा गया था, तुम्हारी भाँति रुष्ट होकर नहीं चला गया था।"

रत्नमाला ने कहा. "तो आप समझते हैं कि मैं रुष्ट होकर चली गयी थी ?"

"इसमें भी कोई संदेह है ?"

रत्नमाला ने अपना दाहिना हाथ मस्तक पर रख लिया, और धीमे स्वर में कहा, "क्या आप कभी मुझे समझने का प्रयत्न भी नहीं करेंगे ?"

"करता हूँ, रत्ना। बहुत प्रयत्न करता हूँ, फिर भी समझ नहीं पाता हूँ। तुम भले ही स्वीकार न करो, परन्तु सत्य यही है कि तुम मेरे लिए एक पहेली हो। क्या वास्तव में तुम रुष्ट होकर नहीं गयी थीं ?"

"हाँ," रत्नमाला ने कहा, "मैं वास्तव में रुष्ट होकर नहीं गयी थी। सौगंध खाकर कहूँ ?"

"नहीं। केवल इतना और बता दो कि फिर क्या कारण था।"

"यह मैं नहीं बता सकूँगी," रत्नमाला ने कहा।

"क्यों ?"

"यह भी नहीं बता सकूँगी। केवल इतना कह सकती हूँ कि रुष्ट होकर नहीं गयी थी, और आपसे विलग होकर इतने दिनों में मैंने बहुत-कुछ सहा है। यदि आपके लौटने में और विलम्ब होता तो मेरी न जाने क्या दशा हो जाती। मैं बहुत प्रयास करती हूँ परन्तु हृदय है कि मानता ही नहीं है। लगता है अपने ऊपर मेरा कोई अधिकार ही नहीं रह गया है। यदि यही दशा रही तो मुझे किसी दिन विक्षेप हो जाएगा।"

"नहीं रत्ना, ऐसा कभी नहीं होगा," सोमेश्वर ने स्नेहार्द्र स्वर में कहा।

"और जो हो चुका है वह ? वह क्यों हुआ है ?"

"तुम प्रेम करने लगी हो, इसलिए," सोमेश्वर ने कहा।

"प्रेम क्या आप भी नहीं करने लगे हैं ?"

"हाँ, मैं भी करने लगा हूँ।"

रत्नमाला ने कहा, "फिर आपको कभी ऐसा क्यों नहीं होता है ? मुझे ही क्यों होता है ?"

"मुझे भी होता है, रत्ना," सोमेश्वर ने उत्तर दिया। "कभी-कभी मुझे भी लगता है कि मैं विक्षिप्त हो जाऊँगा। कभी-कभी मुझे भी लगता है कि तुम्हारे बिना इस जीवन में कहीं कोई सार नहीं है।"

"परन्तु आप यह सब प्रकट तो नहीं होने देते ?"

"हाँ, रत्ना, मैं यह सब प्रकट नहीं होने देता हूँ। दबा लेता हूँ। कैसे और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्यों, यह मैं स्वयं नहीं जानता, परन्तु दबा लेता हूँ।"

"आप में बुद्धि मुझसे अधिक है," रत्नमाला ने कहा।

"यह सम्भव है सत्य हो, परन्तु निर्विवाद नहीं है। परन्तु यह निर्विवाद है कि मेरा हृदय तुम्हारे जितना बड़ा, तुम्हारे जैसा उदार नहीं है। मैं प्रेम करता हूँ, परन्तु कैसे करना चाहिए यह नहीं जानता। यह मुझे तुमसे सीखना होगा।"

कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात् रत्नमाला ने कहा, "क्या आपने कभी उपचार के सम्बन्ध में भी सोचा है? प्रेम यदि विक्षेप है तो उसका कोई न कोई उपचार भी अवश्य होगा।"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "हाँ, है। मैंने इस सम्बन्ध में बहुत विचार किया है। प्रेम में वियोग से दुःख, और संयोग में सुख मिलता है। अतएव प्रेम के रोग का एकमात्र उपचार संयोग है। परन्तु संयोग भी स्थायी होना चाहिए, अन्यथा उपचार स्थायी नहीं होगा। उसी की व्यवस्था कर रहा हूँ, रत्ना। मैंने आज ही पिताजी को पत्र भेजा है।"

"पिताजी को पत्र भेजा है?" रत्नमाला ने साश्चर्य दुहराया।

"हाँ, रत्ना," सोमेश्वर ने उत्साह के स्वर में उत्तर दिया। "पहले सोचा था कि उनके यहाँ आने पर प्रत्यक्ष बात करूँगा। परन्तु जब वे आये तब मैं खजुराहो में नहीं था, और जब मैं लौटकर आया तब वे रामनगर जा चुके थे। कल जब यह समाचार मिला तो मुझे बड़ी निराशा हुई। पहले यह विचार मन में आया कि मैं स्वयं तुरन्त रामनगर चला जाऊँ। परन्तु फिर मैंने विचार बदल दिया। मैंने सोचा कि पिताजी के सामने खुलकर बात कहने में कठिनाई होगी, परन्तु पत्र में जो चाहूँ वह लिख सकता हूँ। अतएव मैंने पत्र लिख दिया है।"

यह समाचार सुनकर रत्नमाला को उतनी प्रसन्नता नहीं हुई जितनी सोमेश्वर ने आशा की थी। वह उत्साह-हीन स्वर में बोली, "पत्र लिखकर भेज भी दिया है?"

"हाँ, भेजकर तब यहाँ आया हूँ," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"उसमें क्या लिखा है?"

"कुछ छिपाया नहीं है। छिपाने को है भी क्या? तीन दिन के भीतर उत्तर आ जाएगा।"

रत्नमाला ने पूर्ववत् उदासीन भाव से कहा, "जो होना है सो तो होगा ही। मैं प्रत्येक परिस्थिति के लिए तत्पर हूँ।"

"तुम अब भी प्रसन्न नहीं हो, रत्ना?" सोमेश्वर ने कहा।

"नहीं तो। मैं बहुत प्रसन्न हूँ। मुझे जो कुछ मिला है वह मेरे लिए बहुत है। मुझे उसी में संतोष है। आगे क्या होगा और क्या नहीं होगा, इसकी चिन्ता मैं नहीं करती।"

"क्या तुम समझती हो कि मैंने पत्र भेजकर ठीक नहीं किया है?"

रत्नमाला ने कहा, "नहीं, ऐसा भी मैं नहीं समझती। वास्तविकता यह है कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। आपने पत्र भेज दिया यह अच्छा किया, यदि न भेजते तो और अच्छा होता।"

"क्यों?" सोमेश्वर ने पूछा।

"कहा न, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।"

"तुम्हें मेरे ऊपर विश्वास नहीं है, रत्ना?"

"है। बहुत है। उसीके सहारे जी रही हूँ। परन्तु मुझे अपने ऊपर, और उससे भी अधिक अपने भाग्य पर, विश्वास नहीं है।"

सोमेश्वर ने कहा, "आज तुम्हें क्या हो गया है, रत्ना? तुम कैसी बातें कर रही हो?"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "यह मैं स्वयं नहीं समझ पा रही हूँ। मैंने आपसे कहने को न जाने क्या-क्या सोचा था, और अब न जाने क्या कह रही हूँ। सम्भवतः यह मेरे आगत का स्वर है, उस आगत का जो मेरे अतीत के साथ अटूट रूप से बँधा हुआ है। मैं उसे अनसुना करना चाहती हूँ परन्तु वह अनसुना नहीं रहना चाहता। मेरा जीवन वास्तव में अभिशप्त है। अतीत और अनागत ने मिलकर मेरे वर्तमान को भी विषमय बना दिया है। पीछे लौट कर मैं जा नहीं सकती, बीच में दीवार खड़ी है। आगे जाना सम्भव नहीं है, वहाँ भी दीवार खड़ी है। जहाँ हूँ वहीं मुझे रहना है, इन्हीं सीमाओं के बीच हँसते-रोते जीवन काट देना है। मैं......"

परन्तु सोमेश्वर ने उसे आगे नहीं बोलने दिया, एक हाथ उसके मुख पर रखकर दूसरे से उसे अपनी ओर खींच लिया। रत्नमाला निर्जीव-सी उसके अंक में आ गिरी, और सिसक-सिसक कर रोने लगी।

सोमेश्वर ने उसके सिर तथा मस्तक पर हाथ फेरते हुए कहा, "उद्विग्न मत हो, रत्ना। मेरे ऊपर विश्वास करो, मैं तुम्हें कभी विलग नहीं होने दूँगा।"

रत्नमाला ने सिसकियों के बीच अत्यन्त क्षीण स्वर में कहा, "ईश्वर करे ऐसा ही हो।" और वह फिर मौन हो गयी।

इसके उत्तर में सोमेश्वर ने कुछ कहने का प्रयास किया किन्तु रत्नमाला ने अपनी हथेली उसके मुख पर रखकर उसे विफल कर दिया, और दोनों विलम्ब तक इसी प्रकार मौन बैठे हुए एक-दूसरे को देखते और न जाने क्या-क्या सोचते रहे।

अन्त में रत्नमाला ने मौन भंग किया। वह बोली, "अपने देवता से एक वर माँगना चाहती हूँ। माँगूँ?"

"माँगो," सोमेश्वर ने कहा।

रत्नमाला बोली, "मुझे जो कुछ मिला है वह जीवन-पर्यन्त मेरे पास रहे। और कुछ मिले न मिले, परन्तु यह बना रहे।"

"यह तो तुम्हारा है ही, रत्ना," सोमेश्वर ने आश्वासन देते हुए कहा।

"ऐसे नहीं। प्रतिज्ञा कीजिये कि जब तक मैं जीवित हूँ तब तक आप इसी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकार मुझसे प्रेम करते रहेंगे, और कुछ हो न हो परन्तु आप इसी प्रकार थोड़े समय के लिए मेरे पास अवश्य आते रहेंगे। आप खजुराहो में न रहें तो और बात है, परन्तु यदि आप यहाँ हों और मैं भी यहीं हूँ, तो दर्शन अवश्य देते रहेंगे। प्रतिज्ञा कीजिये कि आप मुझे इस अल्प लाभ से वंचित नहीं करेंगे।"

सोमेश्वर क्षण भर कुछ सोचता रहा, फिर बोला, "तुम्हारे देवता की सामर्थ्य और इच्छा इससे अधिक है, रत्ना।"

"जानती हूँ। परन्तु जिसकी पूजा की है उसे बाँधना नहीं चाहती। फिर, दाता की सामर्थ्य और याचक की कामना में अन्तर रहना ही चाहिए? आप बस इतनी प्रतिज्ञा कर दीजिये, मैं संतुष्ट हो जाऊँगी।"

सोमेश्वर ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "मैं तुम्हारी सौगंध खाकर कहता हूँ कि जब तक मैं जीवित हूँ तुम्हें इसी प्रकार प्रेम करता रहूँगा और जैसा तुमने कहा है वैसा ही करूँगा। बस?"

रत्नमाला उठकर बैठ गयी और स्नेह-सिक्त, संतुष्ट स्वर में बोली, "बस, मेरे देवता। मेरे लिए इतना बहुत है। मैं संतुष्ट हूँ।"

३२

रामनगर से पत्र का उत्तर सोमेश्वर की आशा के अनुसार तीन दिन के भीतर नहीं आया। सोमेश्वर का जो अनुचर पत्र लेकर रामनगर गया था उसे सामन्त विशालदेव ने एक कार्य सौंपकर महोत्सवनगर भेज दिया था जहाँ से लौटने में उसे कई दिन लग गये। इस प्रकार जब वह रामनगर से पत्र का उत्तर लेकर खजुराहो लौटा तब सोमेश्वर को प्रतीक्षा करते-करते दस दिन हो चुके थे।

सोमेश्वर को यह प्रतीक्षा बड़ी असह्य लगी थी। रातों में उसे नींद नहीं आती थी, और दिन में किसी कार्य में मन नहीं लगता था। बिलम्ब के कारण को लेकर मस्तिष्क में भाँति-भाँति की आशंकायें उठती थीं और उसे उद्विग्न बना देती थीं। रत्नमाला के पास बैठकर भी वह इस चिन्ता को मन से नहीं निकाल पाता था। उसकी सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि वह अपनी इस चिन्ता के सम्बन्ध में किसी से बात भी नहीं कर सकता था। रत्नमाला कभी इस प्रसंग को उठाती ही नहीं थी। यदि वह एक बार भी केवल इतना पूछ लेती कि आपने जो पत्र भेजा था उसका क्या हुआ, तो सोमेश्वर अपनी सारी चिन्ता उसके सामने रखकर स्वयं कुछ हलका हो जाता। परन्तु रत्नमाला को मानों इस विषय में कुछ स्मरण ही नहीं था, मानों उस पत्र के साथ उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं था। और सोमेश्वर दस दिन तक अपने ही भीतर घुटता रहा था।

अतएव लौटते ही सबसे पहले अनुचर को उसके क्रोध का लक्ष्य बनना पड़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परन्तु उसका कोई दोष नहीं था। वह सरलतापूर्वक विलम्ब का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व सामन्त विशालदेव के कंधों पर डालकर अलग हो गया, और अपने निरुपाय क्रोध में उसे तुरन्त आँखों से ओट हो जाने का आदेश देकर सोमेश्वर ने पत्र खोला।

पत्र के विलम्ब से आने के कारण उसके मन में जो क्षोभ था वह उसे पढ़कर कई गुना और बढ़ गया। उसमें तत्परतापूर्वक तथा सफलता के साथ अपना कार्य करने के लिए सोमेश्वर की प्रशंसा की गयी थी। सामन्त विशालदेव ने लिखा था कि स्वयं महाराज तथा महामंत्री के मुख से उसकी प्रशंसा सुनकर उन्हें बड़े गर्व का अनुभव हुआ है। उन्हें उससे ऐसी ही आशा थी।

परन्तु पत्र के अन्त में उन्होंने लिखा था—"तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध में मेरी अनुमति का प्रश्न ही नहीं उठता। तुम्हें स्वयं यह भली प्रकार ज्ञात है कि तुम्हारा विवाह महाराज का उत्तरदायित्व है। अतएव इस सम्बन्ध में अनुमति वे ही दे सकते हैं। हाँ, यदि परामर्श चाहो तो मैं भी दे सकता हूँ, और मेरा परामर्श यह है कि इस सम्बन्ध में उतावली से कोई कार्य मत करना। महाराज को अभी इस सब का ज्ञान नहीं है। आगे भी न हो, यही तुम्हारे हित में अच्छा होगा। जहाँ तक रत्नमाला का सम्बन्ध है, मैं उसे नहीं जानता हूँ, परन्तु मुझे तुम्हारे ऊपर विश्वास है। वह निश्चय ही वैसी होगी जैसा तुमने लिखा है। परन्तु तुम स्वयं स्वीकार करते हो कि वह पहले नगरवधू थी। अतएव मेरा परामर्श यह है कि तुम अब भी उसे और कुछ मत समझो, उसके साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा एक नगरवधू के साथ करना चाहिए। अन्यथा तुम्हारा हित नहीं होगा।"

पत्र पढ़कर सोमेश्वर को खिन्न नहीं होना चाहिए था क्योंकि उसमें ऐसा कुछ नहीं था जो सर्वथा असम्भावित हो। अपने पिता की स्थिति में होता तो वह भी सम्भवत: यही सब लिखता और ऐसा ही परामर्श देता। परन्तु जहाँ प्रेम अधिक होता है वहाँ तर्क दुर्बल हो जाता है, और आशा व्यक्ति की अन्तर्दृष्टि को क्षीण बना देती है। अतएव पत्र पढ़कर सोमेश्वर को ऐसा लगा मानों किसी ने उसे खड़े से गिरा दिया हो। उसकी आँखों के सामने अन्धकार छा गया, इतना सघन अन्धकार कि उसमें कहीं प्रकाश की एक किरण भी नहीं थी। परन्तु यह स्थिति अधिक काल तक नहीं रही। शीघ्र ही उसे ऐसा प्रतीत होने लगा मानों अनेक लाल चिनगारियाँ उसकी पलकों में नर्तन कर रही हों। निराशा का स्थान क्रोध ने ले लिया, खिन्नता के स्थान पर विद्रोह की भावना बलवती हुई और उसका अंग-अंग आवेश के वेग में काँप उठा। फिर कुछ समय पश्चात् चिनगारियाँ बुझ गयीं और अन्धकार लौट आया, और फिर चिनगारियाँ जल उठीं, और फिर अन्धकार लौट आया...

इस प्रकार निराशा और विद्रोह के बीच झूलता हुआ वह बहुत काल तक वहीं बैठा रहा। परन्तु उसकी उद्विग्नता बढ़ती गयी, बढ़ती गयी, और अन्त में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बढ़कर इतनी अधिक हो गयी कि उसके लिए इस प्रकार बैठे रहना असम्भव हो गया। वह उठा और जैसे ग्रीष्म की दोपहरी में श्रान्त-क्लान्त पंथी छाया की ओर भागता है वैसे ही रत्नमाला की ओर दौड़ चला।

रत्नमाला ने धैर्यपूर्वक उसकी सारी बात सुनी। वह सुनाता रहा और रत्नमाला सुनती रही, परन्तु उसके मुख पर आश्चर्य अथवा निराशा का लेश-मात्र भी नहीं प्रकट हुआ। उसने गहरी सहानुभूति से परिपूर्ण अपनी दृष्टि सोमेश्वर पर स्थिर कर दी, उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया, और दूसरे हाथ से उसे धीरे-धीरे थपकियाँ-सी देना आरम्भ किया। इसके अतिरिक्त वह पूर्णतया मौन बैठी रही, एक शब्द भी नहीं बोली। केवल नयनों से सहानुभूति व्यक्त करती रही।

परन्तु नयनों की सहानुभूनि सोमेश्वर के लिए पर्याप्त नहीं सिद्ध हुई। उसके भीतर एक भयंकर झंझावात ताण्डव कर रहा था। अतएव रत्नमाला को ही अपने क्षोभ का लक्ष्य बनाते हुए उसने कहा, "तुम भी मौन बैठी हो, मानों मुख में वाणी ही न हो। मुझे कुछ परामर्श भी नहीं दे सकती हो?"

क्षोभ के उत्तर में एक हलकी, मधुर मुस्कान का प्रदर्शन करते हुए रत्नमाला ने कहा, "आपने पत्र भेजने से पूर्व मुझसे पूछा था?"

"अब तो पूछ रहा हूँ," सोमेश्वर ने कहा।

रत्नमाला ने स्वर को यथासम्भव स्निग्ध बनाते हुए उत्तर दिया, "हाँ, अब आप पूछ रहे हैं, और में परामर्श भी अवश्य दूँगी। आप घाटे में न रहें इसलिए कहिये तो दोनों बार का एक साथ दे दूँ?"

"तुम्हारा विनोद मुझे इस समय तनिक भी नहीं रुच रहा है," सोमेश्वर ने झुँझलाकर कहा।

"तो मैं अब विनोद नहीं करूँगी। बस? परन्तु यदि परामर्श भी न रुचा तो?"

"अब कुछ कहोगी भी?" सोमेश्वर ने कहा। उसकी खीझ में अब दीनता का स्वर उभर कर ऊपर आ गया था।

रत्नमाला कुछ गम्भीर होकर बोली, "लीजिये, कह रही हूँ। मैं समझती हूँ कि आपको वह पत्र लिखना ही नहीं चाहिए था, और यदि लिखना आवश्यक हो गया था तो लिखकर पिताजी के पास भेजना नहीं चाहिए था। मैंने पहले ही कहा था कि उसे न भेजा गया होता तो अधिक अच्छा होता। उसकी एक यही प्रतिक्रिया होनी थी, यह आपको स्वयं समझ लेना चाहिए था।"

सोमेश्वर ने कहा, "क्या चाहिए था और क्या नहीं चाहिए था, इसका अब कोई महत्व नहीं है। जो हो चुका है उसे किसी प्रकार मेटा नहीं जा सकता। वैसे मैं तुम्हारी इस बात से भी सहमत नहीं हूँ कि मुझे वह पत्र पिताजी के पास नहीं भेजना चाहिए था।"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "आप सहमत होंगे, यह मैंने आशा भी नहीं की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थी। आपने परामर्श माँगा, मैंने दे दिया। और माँगें तो और दे सकती हूँ। परन्तु होगा वह भी ऐसा ही। उससे भी आप सहमत नहीं होंगे। अतएव क्या मैं मौन रहूँ ?"

"विनोद फिर कर लेना, रत्ना," सोमेश्वर ने दयनीय होकर कहा।

"जैसी आज्ञा," रत्नमाला ने गम्भीरता का अभिनय करते हुए कहा, और पूछा, "इस समय क्या करूँ ?"

"मेरी सहायता। यह बताओ कि मुझे अब क्या करना चाहिए।"

"सत्य बोलूँ कि प्रिय बोलने का प्रयास करूँ ?"

"सत्य," सोमेश्वर ने कहा।

"सत्य तो यह है कि आपको पिताजी का परामर्श स्वीकार कर लेना चाहिए।"

रत्नमाला का यह परामर्श भी सोमेश्वर को नहीं रुचा। उसने विरोध के स्वर में कहा, "क्यों ?"

"इसलिए," रत्नमाला ने कहा, "कि आपके पास इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है, और यदि है तो वह आपके हित में नहीं होगा। मैं पहले भी अनेक बार आपको यह समझाने का प्रयास कर चुकी हूँ।"

सोमेश्वर ने कुछ उत्तेजित होकर कहा, "परन्तु मैं तुम्हारे समझाने अथवा हठ करने से कोई ऐसा कार्य नहीं करूँगा जो मेरी अपनी रुचि तथा औचित्य की धारणा के विरुद्ध हो।"

रत्नमाला ने फिर चिढ़ाने के स्वर में कहा, "और वर्तमान स्थिति में कुँवर-जी को क्या उचित प्रतीत हो रहा है ? क्या यह बताने की कृपा करेंगे ?"

परन्तु सोमेश्वर की उत्तेजना बढ़ती ही जा रही थी। उसने कहा, "हाँ, करूँगा। मैं तुम्हारे तथा पिता जी के परामर्श को सर्वथा अनुचित समझता हूँ और कभी स्वीकार नहीं करूँगा। मुझसे यह किसी दशा में सहन नहीं होगा कि कोई तुम्हें नगरवधू समझे अथवा मैं तुम्हारे साथ नगरवधू जैसा व्यवहार करूँ। पिताजी ने स्थिति को ठीक से नहीं समझा है। अतएव मैंने निश्चय किया है कि स्वयं रामनगर जाकर उन्हें समझाऊँगा। मुझे अब भी आशा है कि अन्तिम विजय हमारे प्रेम की ही होगी।"

"अवश्य होगी," रत्नमाला ने कहा, "अन्तिम विजय प्रेम की ही होगी। परन्तु आप पिताजी को समझा सकेंगे इसमें मुझे संदेह है।"

"क्यों ?" सोमेश्वर ने तीखे स्वर में पूछा।

रत्नमाला बोली, "मैं आपको समझाने का प्रत्येक प्रयत्न कर चुकी हूँ। परन्तु क्या समझा पायी हूँ ? फिर वे तो आपके पिताजी हैं, उन्हें समझाना और भी कठिन होगा।"

"जो भी हो," सोमेश्वर ने कहा, "मैं प्रयास अवश्य करूँगा। तुम्हें आशा नहीं है, परन्तु मुझे है। मैं कल ही रामनगर जाऊँगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"एक बार भूल कर चुके हैं, अब फिर करेंगे ?"

"हाँ, एक बार और प्रयास करके अवश्य देखूँगा, भले ही यह भी भूल सिद्ध हो। मुझे अभी आशा है।"

"मुझे नहीं है," रत्नमाला ने कहा। "पहले भी नहीं थी। मैं जानती हूँ कि आपके इस प्रयास का फल भी वैसा ही होगा जैसे पहले का हुआ है। पिताजी कभी नहीं मानेंगे।"

सोमेश्वर ने निश्चय के स्वर में कहा, "तब मुझे भी अगला पग उठाने की स्वतन्त्रता होगी, और उसके सम्बन्ध में मुझे अधिक विचार करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।"

"क्यों ?" रत्नमाला ने पूछा।

"इसलिए कि मैं अगले पग का निश्चय करके तब रामनगर जा रहा हूँ। यह निश्चय मैंने अभी-अभी यहीं किया है।"

रत्नमाला ने कुछ चिंतित होकर पूछा, "क्या मैं भी जान सकती हूँ आपने क्या निश्चय किया है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "यह मेरा रहस्य है।"

"मुझे नहीं बतायेंगे ?"

"नहीं, अभी तुम्हें भी नहीं बताऊँगा।"

"कब बतायेंगे ?"

"समय आने पर। अभी इतना समझ लो कि सब-कुछ मेरी इच्छा के विरुद्ध हो यह मैं कदापि सहन नहीं करूँगा।"

रत्नमाला खिसक कर सोमेश्वर के निकट आ गयी और अत्यधिक धीमे स्वर में बोली, "जो कुछ मिला है वह भी छिन जाए, यह क्या मुझे सहन हो सकेगा ? मैं जानती हूँ कि आपके रामनगर जाने से कोई लाभ नहीं होगा। आप वहाँ से और अधिक निराश तथा खिन्न होकर लौटेंगे। यह मैं भली प्रकार जानती हूँ। फिर भी मैं आपको रोक नहीं रही हूँ। मैं चाहती हूँ कि आप न जाएँ, परन्तु यदि आप जाना ही चाहते हैं तो मैं रोकूँगी नहीं। परन्तु वहाँ से लौटकर आप क्या करेंगे, यह बताये बिना आपको यहाँ से नहीं जाने दूँगी।"

सोमेश्वर ने कहा, "बता दूँगा। समय आने पर सब बता दूँगा। परन्तु अभी नहीं। मुझे आशा है कि अगला पग उठाने का समय ही नहीं आएगा।"

रत्नमाला ने कहा, "आप यदि अभी बताना नहीं चाहते हैं तो मैं भी हठ नहीं करूँगी। परन्तु आपको भी मेरी सौगंध है जो मुझे पहले बताये बिना कुछ भी करें।"

सोमेश्वर ने देखा उसकी आँखों में आँसू छलक आये थे। कोमलता से उन्हें पोंछते हुए उसने कहा, "नहीं रत्ना, तुमसे पूछे बिना कुछ नहीं करूँगा। इस बार मुझे रामनगर हो आने दो, फिर जैसा तुम कहोगी वैसा ही किया करूँगा।"

रत्नमाला का सिर सोमेश्वर के वक्ष पर झुक गया। वह कुछ नहीं बोली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३३

अगले दिन मध्याह्न के कुछ ही समय पश्चात् सोमेश्वर रामनगर जा पहुँचा। परन्तु पिता से उसकी तुरन्त भेंट नहीं हो सकी। वे उस समय सो रहे थे। दोपहर में भोजन के पश्चात् थोड़े समय सोने का उनका नियम था और इस समय उनकी निद्रा में विघ्न डालने का कोई साहस नहीं करता था। अतएव सोमेश्वर अन्त:पुर में अपनी माता के पास जा बैठा। उसके आगमन का समाचार पाकर उसकी भाभी भी वहीं आ गयीं। बाल्यावस्था समाप्त होने के पश्चात् से वह कभी अधिक समय तक रामनगर में नहीं रहा था। अतएव वहाँ उसके पारिवारिक सम्बन्ध अवश्य थे परन्तु इनमें वह घनिष्टता नहीं थी जो केवल दीर्घकालीन सम्पर्क से, साथ-साथ रहने, खाने-पीने, हँसने-रोने से ही स्थापित होती है। परिणामत: वार्तालाप के विषय शीघ्र ही समाप्त हो गये और उसे वहाँ बैठना कठिन प्रतीत होने लगा। इसके अतिरिक्त उसकी अपनी मन:स्थिति भी उस समय सामाजिकता, अथवा पारिवारिकता, के लिए विशेष उपयुक्त नहीं थी। अतएव वह स्वयं विश्राम की इच्छा प्रकट करके वहाँ से उठा तथा शयन-कक्ष के एकान्त में चला गया।

परन्तु शयन-कक्ष में जाकर भी उसे नींद नहीं आयी। वह पड़ा-पड़ा यही सोचता रहा कि पिता के सम्मुख जाकर वह क्या कहेगा और कैसे कहेगा। उसकी माता अथवा भाभी ने रत्नमाला के नाम का उल्लेख भी नहीं किया था, जिससे यह स्पष्ट था कि उन्हें उसके पत्र के विषय में कुछ नहीं बताया गया है। इसका अर्थ यह था कि सामन्त ने उसके पत्र अथवा अपने उत्तर को अधिक महत्व नहीं दिया है और इस स्थिति में सोमेश्वर उनके हृदय-परिवर्तन की आशा भी कर सकता है। जब व्यक्ति किसी बात को महत्व देता है तो अपने निकट के वृत्त में उसकी चर्चा भी अवश्य करता है और इस प्रकार एक ऐसी स्थिति ग्रहण कर लेता है जिससे हटना फिर उसके लिए आत्म-सम्मान का प्रश्न बन जाता है। ऐसी दशा में हृदय-परिवर्तन स्वभावत: बहुत कठिन हो जाता है। परन्तु यहाँ स्थिति ऐसी नहीं थी। सोमेश्वर के मन में आशा का संचार होने लगा।

तभी एक दासी ने आकर सूचना दी कि सामन्त जग गये हैं और उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। सोमेश्वर तुरन्त उठकर पिता के पास चल दिया।

३४

सोमेश्वर के पिता सामन्त विशालदेव एक वयोवृद्ध पुरुष थे। परन्तु उनका शरीर अभी पूर्णतया झुका अथवा टूटा नहीं था और उन्हें देखकर आज भी उनकी युवावस्था का अनुमान लगाया जा सकता था। अपने यौवनकाल में वे एक उद्भट

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योद्धा थे। महाराज धंगदेव के साथ कई अभियानों में सम्मिलित होकर उन्होंने जिस शौर्य का प्रदर्शन किया था उसके कारण उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गयी थी। एक बार स्वयं महाराज की रक्षा करते हुए उन्होंने अपने प्राणों का दाँव लगा दिया था जिसके परिणामस्वरूप महाराज आज भी उनका बड़ा आदर करते थे और महमंत्री के कार्यालय में उनका अच्छा प्रभाव था। अब वृद्धावस्था के कारण वे युद्धों में भाग नहीं लेते थे परन्तु अश्वारोहण तथा अन्य वीरोचित कार्य-कलापों में उनकी रुचि कम नहीं हुई थी।

उनका हँसमुख स्वभाव इस बात का सूचक था कि वे जीवन से पूर्णतया संतुष्ट हैं। वास्तव में उनकी प्रकृति ही विनोदी थी। परिहास उनके वार्तालाप का एक आवश्यक अंग था, और वे सामान्य प्रजा-जनों तथा भृत्यों तक से हँसकर ही बोलते थे। क्रोध उन्हें बड़ी कठिनाई से आता था, परन्तु जब आता था तब कम से कम कुछ काल के लिए सारे बाँध तोड़ देता था। हठ भी वे बहुत कम करते थे, परन्तु जब करते थे तब कोई अन्य व्यक्ति उन्हें झुका नहीं सकता था।

सोमेश्वर ने जिस समय उनके कक्ष में प्रवेश किया वे अपने पर्यंक पर बैठे हुए थे। उनके शरीर पर अधोवस्त्र के अतिरिक्त अन्य कोई वस्त्र नहीं था। वे अभी सोकर जगे थे और बहुत प्रसन्न थे। पर्यंक के एक ओर खड़ी एक दासी विजन डुला रही थी। सोमेश्वर के कक्ष में प्रवेश करते ही वह सामन्त का संकेत पाकर बाहर चली गयी।

सोमेश्वर ने पिता के चरण स्पर्श किये और आशीर्वाद प्राप्त कर पर्यंक पर ही एक ओर आसन ग्रहण किया।

सामन्त विशालदेव ने मुस्कराकर कहा, "मैं जानता था कि तुम आओगे। परन्तु इतने शीघ्र आ जाओगे यह नहीं सोचा था।"

सोमेश्वर ने कहा, "आने का विचार तो वैसे भी बहुत दिनों से कर रहा था, परन्तु आ नहीं पाता था। इधर दो बार यात्रा पर जाना पड़ गया। इस बार सोचा कि चरण-स्पर्श तो कर ही आऊँ।"

विशालदेव ठहाका मार कर हँसे। उनकी हँसी इतनी स्वच्छ, ऐसी उन्मुक्त होती थी कि उनके चारों ओर का वातावरण सहज ही हलका हो जाता था। हँसते ही हँसते उन्होंने कहा, "हाँ भाई, अब तुम राज-पुरुष हो गये हो। व्यस्त तो रहते ही होगे।"

सोमेश्वर ने अपने पिता के इस विनोद का कोई उत्तर नहीं दिया। उसका मस्तिष्क अपने विचारों में उलझा हुआ था। वह सोच रहा था कि अपनी बात कैसे आरम्भ करें।

तभी विशालदेव ने फिर कहा, "मेरा पत्र मिल गया था?"

सोमेश्वर को यह प्रश्न सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई। यह प्रसंग उठाकर विशालदेव ने ही उसकी समस्या हल कर दी थी। वह बोला, "हाँ मिल गया था। उसी के कारण तो मैं तुरन्त भागा आया हूँ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"क्या मैंने उसमें ऐसा कुछ लिख दिया था ?" विशालदेव ने फिर विनोद किया।

उत्तर में एक फीकी-सी हँसी हँसते हुए सोमेश्वर ने कहा, "नहीं, आपने ऐसा कुछ नहीं लिखा था। बात यह है कि मैं अपने पत्र में अपनी पूरी बात आपको ठीक से नहीं समझा पया था। वास्तव में संकोच के कारण मैं कुछ बातें लिख ही नहीं पाया था। इसी कारण आप मेरी बात को ठीक से नहीं समझ सके।"

विशालदेव ने मुस्कराकर कहा, "इसमें तुम्हारा तनिक भी दोष नहीं है। शेष शरीर की भाँति मेरा मस्तिष्क भी अब पहले जैसा नहीं रह गया है। वह भी बूढ़ा हो गया है, वस्तुओं को तत्परतापूर्वक ग्रहण करने की उसकी क्षमता क्षीण हो गयी है। परन्तु कई बार समझाने से अब भी समझ लेता है। अतएव प्रयत्न करो, अपनी बात ठीक से और बार-बार कहो।"

"जी, ऐसी बात नहीं है," सोमेश्वर ने किंचित हतप्रभ होकर कहा।

"सो क्या मैं जानता नहीं हूँ ? हाँ, तुम अपनी बात कहो।"

सोमेश्वर ने बात आरम्भ तो कर दीं थी परन्तु उसे आगे कैसे बढ़ाया जाए यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था। एक ओर यदि उसके पिता स्वयं उसे प्रोत्साहित कर रहे थे, तो दूसरी ओर उसका अपना संकोच बाधक सिद्ध हो रहा था। इसके अतिरिक्त, जितनी बातें वह कहने के लिए सोच कर आया था वे सारी की सारी इस समय उसके मस्तिष्क से उड़कर न जाने कहाँ चली गयी थीं। अतएव वह बहुत प्रयत्न करके भी केवल इतना ही कह सका—"रत्नमाला बहुत अच्छी स्त्री है।"

विशालदेव ने कहा, 'अवश्य होगी। यौवन में सभी स्त्रियाँ बहुत अच्छी होती हैं।"

सोमेश्वर ने फिर साहस करके कहा, "वह मुझे बहुत अच्छी लगती है।"

"अवश्य लगती होगी। यह स्वस्थ पुरुष का लक्षण है। और ?"

सोमेश्वर ने कहा, "वह बड़ी गुणवती है।"

"गुणवती भी अवश्य होगी। व्यवसाय के लिए गुणवती होना आवश्यक होता है।"

सोमेश्वर ने फिर कहा, "वह अत्यन्त सुन्दरी है।"

विशालदेव ने उसी प्रकार मुस्कराते हुए उत्तर दिया, "सो भी अवश्य होगी। परन्तु इसमें नयी बात क्या हुई जिसके कारण तुम इतने उत्तेजित हो रहे हो ? मेरे समय में भी नगरवधुएं होती थीं, और सभी अच्छी, गुणवती तथा सुन्दरी हुआ करती थीं। उन्हें ऐसी होना ही चाहिए। अब कुछ नयी बात कहो। यह सब तो तुम पत्र में भी लिख चुके हो।"

"वह मुझसे प्रेम करती है," सोमेश्वर ने कहा। कहना वह बहुत-कुछ चाहता था परन्तु एक वाक्य पूरा होते ही उसकी वाणी बार-बार अवरुद्ध हो जाती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विशालदेव ने फिर अट्टहास करके कहा, "हाँ, यह कुछ नयी बात हुई। परन्तु इसमें कठिनाई क्या है ? यदि वह तुमसे प्रेम करती है तो तुम भी उससे प्रेम करो। तुम्हें रोकता कौन है ?"

सोमेश्वर ने बहुत धीमे स्वर में कहा, "परन्तु मैं उसके साथ विवाह करना चाहता हूँ।"

विशालदेव का विनोद सहसा विलीन हो गया। उन्होंने गम्भीर होते हुए कहा, "विवाह करना चाहते हो ? अर्थात् प्रेम का अन्त कर देना चाहते हो ? देखो वत्स, तुम मुझसे अधिक पढ़े-लिखे अवश्य हो, परन्तु मेरा अनुभव तुमसे बहुत अधिक है, और इस अधिक अनुभव के आधार पर मैं तुम्हें परामर्श दे रहा हूँ कि यदि वह वास्तव में तुमसे प्रेम करती है और तुम भी वास्तव में उससे प्रेम करते हो तो विवाह का विचार मत करो। विवाह एक कठोर यथार्थ है। इससे टकराकर प्रेम का मधुर स्वप्न चूर-चूर हो जाएगा। इस स्वप्न को जब तक चले चलने दो। यथार्थ की शिला पर पटककर इसे तोड़ देने के लिए इतने उतावले क्यों हो रहे हो ?"

विशालदेव के साँस लेने के लिए रुकते ही सोमेश्वर ने कहना आरम्भ किया, "मेरा तात्पर्य यह है, पिताजी......"

परन्तु विशालदेव ने उसे आगे नहीं बोलने दिया, हाथ उठाकर उसका वर्जन करते हुए स्वयं फिर कहना आरम्भ किया, "नहीं, पहले मुझे कह लेने दो। हाँ, तो मैं कह रहा था कि प्रेम और विवाह दो अलग-अलग वस्तुएँ हैं। प्रेम का अपना स्थान है और विवाह का अपना। प्रेम का सम्बन्ध सदा व्यक्तिगत तथा व्यक्ति-परक होता है। वहाँ हम जो चाहें कर सकते हैं, चाहें अंधे भी हो सकते हैं। इसके विपरीत, विवाह एक सामाजिक संस्था है, अथवा यो कहें कि विवाह एक ऐसी संस्था है जिसका सामाजिक पक्ष अधिक महत्वपूर्ण होता है। इस पक्ष की उपेक्षा नहीं की जा सकती। तुम एक बुद्धिमान व्यक्ति हो। तुम्हें यह सब समझना चाहिए, और इस दिशा में कुछ भी बहुत सोच-विचार कर ही करना चाहिए।"

विशालदेव रुककर सोमेश्वर की ओर देखने लगे। तभी सोमेश्वर के मुख से अचानक, न जाने कैसे, निकल गया, "मैं वचन दे चुका हूँ और अब उसके साथ विवाह अवश्य करूँगा।"

विशालदेव की भृकुटी थोड़ी तन गयी, उनका स्वर और अधिक गम्भीर हो गया। उन्होंने कहा, "तुमने मेरा हठ पाया है, सोमेश्वर। परन्तु मेरे साथ वह नहीं चलेगा। इसे औरों के लिए रखो। यह न भूलो कि मैं तुम्हारा पिता हूँ और तुम मेरे पुत्र हो।"

"मैं हठ नहीं कर रहा हूँ," सोमेश्वर ने कहा।

परन्तु विशालदेव का क्रोध बढ़ता ही जा रहा था। उन्होंने कहा, "तुम हठ कर रहे हो अथवा नहीं यह मुझे तुमसे नहीं पूछना है। मुझे स्वयं पहचान है। तुम अपना निश्चय बता चुके हो, अब मेरा निर्णय भी सुन लो। मैंने अपने पत्र में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो कुछ लिखा था तुम्हें अक्षरशः वही सब करना होगा। वही मेरा अन्तिम निर्णय है। वैसे यदि तुम इस स्त्री से इतना अधिक प्रेम करते हो तो मैं तुम्हें विलग भी नहीं करना चाहता।"

"अर्थात् आप मुझे विवाह की अनुमति दे रहे हैं?" सोमेश्वर ने आशान्वित होकर पूछा।

"नहीं," विशालदेव ने कहा, "विवाह की अनुमति देना मेरे हाथ में नहीं है, और जिसके हाथ में है वह कभी नहीं देगा। यदि मुझे तुम्हारा विवाह करना होता तो तुम इस आयु तक अविवाहित नहीं बैठे रहते।"

"अनुमति देना यदि आपके हाथ में नहीं है तो न दीजिये। परन्तु सहायता तो कर सकते हैं?"

सामन्त विशालदेव का मुख रक्तवर्ण हो गया। उन्होंने गरज कर कहा, "कैसी सहायता? क्या तू समझता है कि मैं तेरे इस अनुचित प्रस्ताव को लेकर महाराज के पास जाऊँगा?"

जब विशालदेव हँसकर विनोद कर रहे थे तब सोमेश्वर संकोच से दबा जा रहा था, परन्तु अब पिता के क्रोध के साथ-साथ उसका साहस भी बढ़ने लगा था। उसने कहा, "यदि सहायता भी नहीं कर सकते हैं तो आशीर्वाद ही दे दीजिये।"

विशालदेव का क्रोध अपने चरम-बिन्दु पर जा पहुँचा। उन्होंने गरजकर कहा, "अर्थात् तू महाराज की और मेरी इच्छा के विरुद्ध इस स्त्री के साथ विवाह अवश्य करेगा? तेरा इतना साहस? तू इतना अंधा हो गया है? जा, मेरी आँखों के सामने से हट जा। मैं तेरा मुख भी देखना नहीं चाहता। मुझसे आशीर्वाद माँगने आया है। जा, जो कुछ तेरे मन में आये, कर, मैं भी देखूँगा कि तू उसमें कैसे सफल होता है। जा।"

परन्तु सोमेश्वर अपने स्थान से नहीं हटा। मुख उसका भी रक्तवर्ण हो गया था, तथापि उसने अपने स्वर को यथासम्भव संयत रखते हुए कहा, "जाकर फिर मैं कभी रामनगर नहीं आऊँगा, यह भली प्रकार समझ लीजिये।"

विशालदेव पर्यंक से उतर कर खड़े हो गये और क्रोध से काँपते हुए बोले, "जा, समझ लिया, भली प्रकार समझ लिया। और तू भी भली प्रकार समझ ले कि जब तक तू स्वयं अपनी इच्छा से रामनगर नहीं आएगा तब तक मैं तेरा मुख नहीं देखूँगा। और एक बार फिर सुन ले। मैं तेरा यह विवाह नहीं होने दूँगा, कभी नहीं होने दूँगा, किसी दशा में नहीं होने दूँगा।"

विशालदेव का अन्तिम वाक्य पूरा होने से पहले ही सोमेश्वर उठकर द्वार की ओर चल दिया था। परन्तु कुछ पग चलकर वह अचानक रुक गया। एक बार उसने पीछे घूमकर देखा, फिर क्षणभर अनिश्चित-सा खड़ा रहा, और उसके पश्चात् शीघ्रता के साथ चलकर पर्यंक के निकट आया जहाँ विशालदेव खड़े थे। उनके निकट पहुँचकर वह झुका और शीघ्रता से उनके चरण स्पर्श करके फिर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वार की ओर चल दिया। इस बार वह नहीं रुका, सीधा द्वार से बाहर निकल गया। विशालदेव भी कुछ नहीं बोले, मौन खड़े-खड़े उसे जाते हुए देखते रहे।

इसके पश्चात् सोमेश्वर माता के चरण स्पर्श करने के लिए अन्तःपुर में भी नहीं गया। संध्या होने में अभी कुछ समय था। पूर्व के आकाश में काले बादल उठ रहे थे। परन्तु सोमेश्वर तुरन्त अश्वारुढ़ होकर गढ़ी से बाहर निकल आया।

उसके जाने के पश्चात् सामन्त विशालदेव विलम्ब तक कक्ष में ही उद्विग्न इधर से उधर टहलते रहे। फिर उन्होंने दासी से मँगाकर शीतल जल पिया और लेखनी लेकर पत्र लिखने बैठ गये। पत्र महामंत्री प्रभास के नाम था।

३५

सोमेश्वर अपने आवेश में रामनगर से चल तो दिया था, परन्तु खजुराहो वह अगले दिन ही पहुँच सका। महाराजपुर तक आते-आते रात्रि हो गयी थी और पूर्व से उठे काले बादलों ने फैलकर सम्पूर्ण आकाश को छा लिया था। अन्धकार इतना घना हो गया था कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था। ऐसी दशा में यात्रा करना असम्भव था। अतएव सोमेश्वर ने रात्रि महाराजपुर में ही व्यतीत की। व्यतीत क्या की किसी प्रकार काटी, क्योंकि भोजन उसने किया नहीं था और सोने का प्रश्न नहीं था। उसके मस्तिष्क में एक भयानक झंझावात मचल रहा था जिसके परिणामस्वरूप कभी-कभी तो उसके लिए बैठे रहना भी असम्भव हो जाता था और वह उठकर टहलने लगता था। इस प्रकार सारी रात कट गयी और निद्रा उसकी पलकों के निकट भी नहीं आयी।

भोर की पहली किरण फूटते ही वह पुनः अश्वारूढ़ होकर चल दिया। रात्रि में थोड़ा-सा बरस कर इस समय बादल छँट चुके थे। प्रभात के शीतल पवन की बाँहों में बाँहें डाले धरती की सोंधी गंध दिशाओं में उन्मुक्त डोल रही थी। परन्तु सोमेश्वर प्रकृति के इस सहज मनोरम स्वरूप से सर्वथा अप्रभावित खजुराहो की ओर बढ़ता चला जा रहा था। उसकी सारी इन्द्रियाँ मानों सो गयी थीं, केवल मस्तिष्क जग रहा था और वह भी ज्वराक्रान्त-सा, अर्ध-सुषुप्त-सा, करवटें बदल-बदल कर विश्राम खोजने का प्रयास कर रहा था।

खजुराहो पहुँचकर वह सीधा रत्नमाला के यहाँ गया। परन्तु इस बार रत्नमाला भी उसे प्रतीक्षा करती हुई नहीं मिली। मल्लिका से ज्ञात हुआ कि वह अकेली देवी-पूजन के लिए गयी है। अतएव सोमेश्वर अतिथि-कक्ष में बैठकर उसके लौटने की प्रतीक्षा करने लगा। उसे आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि रत्नमाला इस प्रकार देवी-पूजन के लिए जाती है ऐसा उसने पहले कभी नहीं देखा-सुना था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर यात्रा तथा रात्रि जागरण के कारण इतना श्रान्त और भीषण मानसिक संघर्ष के परिणामस्वरूप इतना उद्भ्रान्त था कि शीघ्र ही उसकी आँख अपने आप लग गयी। वह स्वयं नहीं जान पाया कि उसे नींद कब और कैसे आयी। परन्तु वह सो गया, और जब जागा तब रत्नमाला उसके निकट बैठी उसके सिर और मस्तष्क पर हाथ फेर रही थी।

सोमेश्वर शीघ्रतापूर्वक उठकर बैठ गया और बोला, "अरे! तुम कब आ गयीं ?"

रत्नमाला ने कहा, "आ ही रही हूँ। अभी भीतर नहीं गयी हूँ।"

तभी सोमेश्वर की दृष्टि पास रखी पूजा की थाली पर पड़ी। उसने पूछा, "तुम देवी-पूजन करने गयी थीं ?"

"हाँ," रत्नमाला ने उत्तर दिया।

"पहले तो नहीं जाती थीं ?"

"नहीं, पहले नहीं जाती थी। कल से जाने लगी हूँ। मनुष्य विपत्ति में ही देवी-देवताओं का स्मरण करता है। आप तो लगता है सीधे रामनगर से चले आ रहे हैं ?"

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, सीधा ही आ रहा हूँ। परन्तु इस बीच तुम पर अचानक ऐसी कौन-सी विपत्ति आ पड़ी है कि देवी-देवताओं का स्मरण करने लगी हो ?"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "आयी नहीं, केवल सम्भावना उत्पन्न हो गयी थी। अब वह भी नहीं रही। परन्तु अब आप उठकर भीतर तो चलिये।"

सोमेश्वर यंत्रवत् उठकर खड़ा हो गया और बोला, "चलो।"

रत्नमाला ने ध्यान से उसकी ओर देखते हुए कहा, "लगता है आप रात्रि में सोये नहीं हैं ?"

"यह सत्य है," सोमेश्वर ने स्वीकार किया।

"तो आप पहले चलकर स्नान कर लें।"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं रत्ना, मैं अभी स्नान नहीं करूँगा। मुझे तुमसे एक बात कहनी है, पहले उसे कहूँगा। भीतर चलो।"

भीतर जाकर आसन ग्रहण करते हुए उसने बिना किसी भूमिका के घोषणा की।

"मैं सफल नहीं हो सका हूँ, रत्ना।"

रत्नमाला ने कहा, "पिताजी से भेंट हुई थी ?"

"हुई थी।"

"फिर क्या हुआ ? मुझे सविस्तार बताइये।"

सोमेश्वर ने पिता के साथ हुए अपने वार्तालाप का विवरण देने के पश्चात् कहा "अब मुझे उस ओर से कोई आशा नहीं रह गयी है।"

रत्नमाला ने कहा, "मुझे पहले भी नहीं थी। आपने पिताजी से कुछ अनु-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित तो नहीं कहा ?"

"नहीं। चलते समय केवल इतना अवश्य कहा कि मैं फिर कभी रामनगर नहीं आऊँगा। बस, और कुछ नहीं कहा।"

"क्या वास्तव में अब आप कभी रामनगर नहीं जाएंगे ?"

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, यह निश्चित है। अब मैं जीवन-पर्यन्त कभी वहाँ नहीं जाऊँगा।"

"फिर? अब क्या विचार है ?"

"अब मैं अगला पग उठाने के लिए अपने आपको स्वतन्त्र समझता हूँ।"

रत्नमाला ने अपनी जिज्ञासापूर्ण दृष्टि उसकी ओर उठाते हुए कहा, "क्या अपना वह रहस्य अब भी मुझे नहीं बताएँगे ?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "वही बताने के लिए इस समय यहाँ आया हूँ। वास्तव में अब मेरे सामने अन्य कोई मार्ग ही नहीं रह गया है। मैं विषाद के ऐसे अतल गर्त में आ गिरा हूँ जहाँ अन्धकार ही अन्धकार है, और कुछ नहीं है। केवल तुम्हीं मुझे इससे बाहर निकाल सकती हो। यदि तुम मेरी सहायता नहीं करोगी तो कोई शक्ति अब मुझे इस संसार में जीवित नहीं रख सकेगी। मैं मर जाऊँगा, रत्ना, मैं मर जाऊँगा।"

रत्नमाला ने अपना वर्जनशील हाथ उसके मुख पर रखते हुए कहा, "घोर विपत्ति में भी अशुभ वचन नहीं बोलना चाहिए। यदि आप समझते हैं कि मैं आपकी प्रत्येक सम्भव सहायता नहीं करूँगी तो यह आपका मेरे प्रति अन्याय है। मैं आपके सुख और कल्याण के लिए अपने जीवन का बलिदान करने में भी संकोच नहीं करूँगी।"

सोमेश्वर ने प्रसन्न होकर कहा, "मुझे तुमसे ऐसी ही आशा है, रत्ना, और इसी आशा के बल पर मैंने यह निश्चय किया है कि अब खजुराहो में नहीं रहूँगा।"

रत्नमाला ने अविश्वास के स्वर में कहा, "खजुराहो में नहीं रहेंगे। क्या यही आपका रहस्य है ?"

"हाँ, रत्ना। खजुराहो में मेरा है ही क्या जो यहाँ रहूँ ? माता-पिता और परिवार से अब मेरा कोई नाता नहीं है। जो मेरे सुख की अपेक्षा अपनी मर्यादा को अधिक महत्व देते हैं उनके साथ नाता न रखना ही अधिक अच्छा है। नहीं रत्ना, मैं अब खजुराहो में नहीं रहूँगा। यहाँ मेरा कुछ नहीं है, कोई नहीं है।"

"मैं आपकी कोई नहीं हूँ ?" रत्नमाला ने आहत स्वर में कहा।

"तुम मेरी सर्वस्व हो, रत्ना। परन्तु तुम खजुराहो में नहीं रहोगी। तुम मेरे साथ चलोगी।"

रत्नमाला ने स्थिर दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए पूछा, "कहाँ ?"

सोमेश्वर ने कहा, "यह मैंने अभी निश्चय नहीं किया है। तुमसे परामर्श किये बिना कर भी कैसे सकता था ? मेरे सम्पर्क अनेक राज्यों में हैं, जहाँ तुम कहोगी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसी ओर चल देंगे। वैसे मुझे दक्षिण अधिक अच्छा लगता है। मैं कभी उधर गया नहीं हूँ और वहाँ मेरे सम्पर्क भी कम हैं। परन्तु इससे कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। वास्तव में, कहाँ चलना होगा, इसका इतना महत्व नहीं है। अधिक महत्व इस बात का है कि हम यहाँ से, खजुराहो से कहीं दूर निकल चलें और यहाँ जो सम्भव नहीं है वह करके दिखा दें। हम चाहे जहाँ चलकर रहें, हमारा अपना, छोटा-सा संसार अलग होगा, और हमें मृत्यु ही विलग कर सकेगी।"

बोलते-बोलते सोमेश्वर अचानक रुक गया और स्थिर दृष्टि से रत्नमाला के मुख की ओर देखने लगा। वह दृष्टि नीचे किये कुछ सोच रही थी। उसके मुख पर अनेक भाव, बरसात की धूप-छाँह से, आ-जा रहे थे। कुछ क्षण तक वह इसी प्रकार नीचे देखती हुई मौन बैठी रही, और सोमेश्वर उसका मुख निहारता रहा। फिर उसके अधर हिले। धरती पर दृष्टि गड़ाये हुए अत्यन्त धीमे स्वर में उसने कहा, "मैं कहीं नहीं जा सकूँगी।"

सोमेश्वर को सहसा अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। उसने विस्मय के स्वर में कहा, "कहीं नहीं जा सकोगी?"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "हाँ, मैं खजुराहो छोड़कर कहीं नहीं जा सकूंगी··· और···और आपको भी नहीं जाने दूंगी।"

"क्यों?" सोमेश्वर ने पूछा।

'मैं नहीं चाहती, मैं उचित नहीं समझती। क्या इतना पर्याप्त नहीं है?"

"नहीं," सोमेश्वर ने कहा, "इतना पर्याप्त नहीं है। प्रश्न केवल तुम्हारी इच्छा अथवा धारणा का नहीं है। उसका सम्बन्ध मेरे सुख और जीवन से भी है। क्या तुम नहीं चाहतीं कि मैं जीवित रहूँ और सुखी रहूँ? क्या तुम नहीं समझतीं कि तुम्हारे बिना मेरा जीवन सूना हो जाएगा? प्रश्न मेरे जीवन-मरण का है, रत्ना। क्या तुम नहीं चाहती हो कि मैं जीवित रहूँ? क्या यह मेरा भ्रम था कि तुम मुझसे प्रेम करती हो?"

रत्नमाला ने कहा, "नहीं, यह आपका भ्रम नहीं था।"

"फिर? फिर तुम मेरे साथ क्यों नहीं चलोगी?"

"मैं आपको सुखी देखना चाहती हूँ, इसलिए नहीं चलूंगी, आपसे प्रेम करती हूँ, इसलिए नहीं चलूंगी।"

सोमेश्वर ने क्षुब्ध स्वर में कहा, "इसी को तुम प्रेम कहती हो?"

"और क्या कहूँ?"

"और जो चाहो कहो। तुम्हारा प्रेम शब्दों तक सीमित है। तुम प्रेम का सुख चाहती हो, परन्तु उसकी असुविधाओं से दूर रहना चाहती हो। तुम प्रेम के अधिकार को जानती हो परन्तु उसके कर्तव्यों से अपरिचित हो।"

रत्नमाला कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात् बोली, "आप भी तो मुझसे प्रेम करते हैं? कि नहीं करते?"

"करता हूँ। परन्तु मेरा प्रेम तुम्हारे जैसा नहीं है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने फिर पूछा, "आपका प्रेम मेरे लिए क्या कर सकता है ?"

"कुछ भी कर सकता है, प्राण भी दे सकता है।"

"आप मेरे सुख के लिए कुछ भी कर सकते हैं ?"

"हाँ, कुछ भी कर सकता हूँ।"

रत्नमाला ने स्थिर दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए फिर पूछा, "क्या आप मेरे तात्कालिक सुख के लिए कोई ऐसा कार्य भी कर सकते हैं जो अन्ततोगत्वा मेरे लिए अहितकर हो ?"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं, ऐसा कोई कार्य मुझसे नहीं होगा।"

रत्नमाला ने कातर होकर कहा, "फिर आप मुझसे कैसे आशा करते हैं, कि मैं ऐसा कोई कार्य कर सकूँगी ? आपके प्रस्ताव मैं वरदान मानकर तुरन्त स्वीकार कर लेती। परन्तु मैं भली प्रकार जानती हूँ कि यह अन्त में आपके लिए अहितकर सिद्ध होगा।"

रत्नमाला की कातरता के समक्ष सोमेश्वर का क्रोध क्षण भर में विलीन हो गया। उसकी दृष्टि में कोमलता आ गयी, उसका स्वर द्रवित हो गया। उसने आश्वासन देते हुए कहा, "यह तुम्हारे मन का भ्रम है, रत्ना। निश्चिन्त रहो, इसमें मेरा कोई अहित नहीं होगा।"

रत्नमाला ने सिर हिलाते हुए कहा, "इस सम्बन्ध में मेरा निश्चिन्त होना असम्भव है। मैं निश्चित रूप से जानती हूँ कि इसमें आपका और मेरा, दोनों का अहित होगा। मैं पहले भी कह चुकी हूँ कि आप अभी महामंत्री जी की शक्ति से भली प्रकार परिचित नहीं हैं। मैं उन्हें जानती हूँ। क्या आपने कभी यह नहीं सोचा कि मेरे अपहरण का प्रयास क्यों किया गया था ? अथवा आपसे राजशेखर को मेरे यहाँ लाने को क्यों कहाँ गया था ? मैं महामंत्री जी की शासन-व्यवस्था से सम्बन्धित हूँ और मुझे कई ऐसे रहस्यों का ज्ञान है जिनका उद्घाटन राज्य के लिए अहितकर सिद्ध हो सकता है। अतएव अधिक सम्भावना इस बात की है कि मैं जीवित राज्य से बाहर नहीं जा सकूँगी। क्या यह आपके हित में होगा ?"

सोमेश्वर इस प्रश्न का कोई उत्तर न देकर मौन कुछ सोचने लगा।

रत्नमाला ने फिर कहा, "और यदि किसी प्रकार यह सम्भव भी हो जाए और मैं सकुशल यहाँ से निकल जाऊँ, तो भी हम अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रह सकेंगे। महामन्त्री जी के गुप्तचर निश्चय ही हमें खोज निकालेंगे, और तब मेरा क्या अन्त होगा इसकी कल्पना आप भी कर सकते हैं।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं महामन्त्री की शक्ति को भले न जानता हूँ, परन्तु अपनी सामर्थ्य से अपरिचित नहीं हूँ। मुझे अपनी शक्ति पर विश्वास है। तुम भी उस पर विश्वास करो, रत्ना। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा, मेरे साथ रहते तुम्हें किसी प्रकार का भय नहीं होगा।"

रत्नमाला की दृष्टि फिर धरती पर जा टिकी। वह धीमे स्वर में, मुखर चिन्तन-सा करती हुई बोली, "वास्तव में मैं महामन्त्री जी की शक्ति से उतनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भयभीत नहीं हूँ जितनी स्वयं अपने आप से हूँ, और मेरे इस भय को आप भी दूर नहीं कर सकते। यदि सब कुछ वैसा ही हो जाए जैसा आप सोच रहे हैं तो भी मेरा वह भ्रम दूर नहीं होगा। आप भले ही कभी यह न सोचें, परन्तु आपके साथ यहाँ से जाने के पश्चात् मैं क्षण भर को भी यह नहीं भुला सकूँगी कि मैंने अपने स्वार्थ के लिए आपकी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध कर दिया है। मैं अपने आपको कभी क्षमा नहीं कर सकूँगी, सदा पश्चात्ताप की अग्नि में जला करूँगी। मेरी कोमलता, मेरा प्रेम, सब उस अग्नि में जलकर भस्म हो जाएगा। बचेगी केवल कुंठा, जो सदैव शूल-सी मेरे अन्तर में चुभा करेगी। वास्तविक कारण यह है। इसलिए कहती हूँ कि मैं कहीं नहीं जाऊँगी, और आपको भी नहीं जाने दूंगी। आप यहीं रहें और फलें-फूलें, उन्नति करें। मुझे इसी में सुख है। मैंने बहुत कुछ पा लिया है। शेष भी मिल जाता तो और अच्छा था। परन्तु उसके लिए मैं इतना बड़ा मूल्य नहीं चुका सकूँगी। जो कुछ मिला है मैं उतने में ही सन्तुष्ट रह लूँगी। यह मुझे स्वीकार है।"

सोमेश्वर ने तीखे स्वर में कहा, "ऐसी दशा में तुम्हें यहीं रहना चाहिए। बुद्धिमत्ता इसी में है कि जहाँ सन्तोष मिले वहीं रहे और जिसमें सन्तोष मिले वही करे। परन्तु मुझे खजुराहो में सन्तोष नहीं मिलेगा, अतएव मैं यहाँ नहीं रहूँगा। तुम साथ नहीं चल सकतीं तो न चलो। तुम्हारे ऊपर मेरा अधिकार ही क्या है? परन्तु इस कारण मैं यहाँ रुक नहीं जाऊँगा। मैं अकेला भी जा सकता हूँ। जैसे देश और परिवार को छोड़ रहा हूँ उसी प्रकार तुम्हें भी छोड़ दूंगा।" परन्तु यह कहने के तुरन्त पश्चात् सोमेश्वर ने स्वयं अनुभव किया कि उसके स्वर में अब पहले जैसी दृढ़ता नहीं रह गयी थी। वास्तविकता यह थी कि वह झुकना चाह रहा था परन्तु झुक नहीं पा रहा था।

परन्तु रत्नमाला के स्वर में पर्याप्त दृढ़ता थी उसने कहा, "मैं कहीं नहीं जाऊँगी, और आप भी इस प्रकार रुष्ट होकर कहीं नहीं जा सकेंगे।"

"क्यों?"

"मैं आपको नहीं जाने दूंगी।"

"तुम मुझे रोक लोगी?"

रत्नमाला ने कहा, "हाँ, रोक लूँगी। आप केवल अपनी शक्ति पहचानते हैं, परन्तु मेरी भी कुछ शक्ति है यह नहीं जानते। मैं आपको अपने प्रेम की शक्ति से नहीं जाने दूंगी। बोलिये, आप जाएँगे? मेरी ओर देखकर कहिये।"

परन्तु सोमेश्वर ने उसकी ओर नहीं देखा, मौन धरती पर दृष्टि गड़ाये रहा।

रत्नमाला ने फिर कहा, "बोलिये न? जाएँगे? जा सकेंगे? आपको मेरे सिर की......"

परन्तु वह अपना वाक्य पूरा नहीं कर सकी। निर्मूल हुए वृक्ष की भाँति सोमेश्वर उसके अंक में गिर पड़ा और सिसक-सिसक कर रोने लगा। उसका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्पूर्ण असन्तोष, उसका सारा क्षोभ आँसुओं में पिघल-पिघल कर बहने लगा। वह क्षत्रिय वीर, वह सुशिक्षित युवक, एक स्त्री के अंक में पड़ा शिशु-वत् रो रहा था। प्रेम व्यक्ति को यदि कभी गौरव के शिखर पर ले जाता है तो कभी-कभी इसी प्रकार दयनीय भी बना देता है।

रत्नमाला भी कुछ नहीं बोली, केवल स्नेह बरसाती दृष्टि से उसे देखती रही, और देखते-देखते उसकी आँखों में भी आँसू आ गये। उसने तुरन्त शीघ्रता-पूर्वक अपने उत्तरीय के छोर से उन्हें पोंछ डाला, और फिर सोमेश्वर के आँसू पोंछना आरम्भ किया। यह सब कर चुकने के पश्चात् अपने स्वर को यथासम्भव संयत करते हुए वह बोली, "विपत्ति के समय व्यक्ति का अपना धैर्य्य ही उसका सबसे बड़ा मित्र और सहायक होता है।"

सोमेश्वर ने सिसकते हुए कहा, "मैं क्या करूँ, रत्ना? मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है। मैं क्या करूँ?"

रत्नमाला ने कहा, "जो करने से अन्तरात्मा को सन्तोष मिले, करना सदा वही चाहिए। आप धैर्य्यपूर्वक विचार करें, मार्ग अवश्य निकलेगा।"

"मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है," सोमेश्वर ने कहा।

"तो मैं मार्ग निकालूँगी," रत्नमाला ने उत्तर दिया। "आपको स्मरण है रामनगर जाने से पूर्व आपने मुझे क्या वचन दिया था?"

"मुझे इस समय वह भी स्मरण नहीं आ रहा है।"

रत्नमाला बोली, "आपने कहा था कि रामनगर से लौटकर आप वही किया करेंगे जैसा मैं कहूँगी। कहा था? स्मरण आ रहा है?"

"हाँ, यह मैंने कहा था," सोमेश्वर ने स्वीकार किया।

"तो अब क्या विचार है? वचन का पालन करेंगे?"

सोमेश्वर ने पराजित से स्वर में कहा, "करूँगा।"

रत्नमाला बोली, "तो मेरा परामर्श यह है कि अभी आप कुछ न करें। रामनगर यदि नहीं जाना चाहते हैं तो न जाएँ, परन्तु और कहीं जाने का विचार भी अपने मन से निकाल दें। पिताजी के प्रति शील का, तथा राज्य के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करते रहें, और मुझे विचार करने के लिए कुछ समय प्रदान करें। बोलिये, स्वीकार है?"

"वचनबद्ध हूँ," सोमेश्वर ने ऐसे स्वर में कहा मानों यदि वह वचनबद्ध न होता तो इस स्थिति को कभी स्वीकार नहीं करता। इसके साथ ही वह उठकर बैठ गया और फिर बोला, "परन्तु मैं अनन्त काल तक प्रतीक्षा नहीं करूँगा।"

"अधिक समय तक प्रतीक्षा नहीं करनी होगी, मैं भी वचन देती हूँ," रत्नमाला ने आश्वासन दिया।

सोमेश्वर उठकर खड़ा हो चुका था। इसके पश्चात् रत्नमाला के बहुत आग्रह करने पर भी वह वहाँ नहीं रुका।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३६

उस दिन सन्ध्या को सोमेश्वर फिर रत्नमाला के पास नहीं गया। वह रुष्ट था, अपने पिता से, रत्नमाला से, और अपने आप से भी। सबसे अधिक रोष उसे रत्नमाला पर था। उसके पिता ने जो कुछ किया था उसके पीछे एक तर्क था, एक उद्देश्य था। उसकी बात अच्छी भले न लगे, परन्तु समझी जा सकती थी। इसके विपरीत, रत्नमाला की बात के पीछे कोई तर्क नहीं था। वह वास्तव में इतनी दुरूह थी कि किसी ओर से पकड़ में ही नहीं आती थी। फिर भी उसमें न जाने ऐसा क्या था कि जब जो चाहती थी स्वीकार करा लेती थी। वह न जाने क्यों उसके सामने अपने आप को सर्वथा अशक्त पाता था। अपनी यह विवशता उसे बार-बार चुभती थी, पीड़ा देती थी, परन्तु वह प्रयत्न करके भी उससे मुक्त नहीं हो पाता था। वह आज तक इतना भी नहीं समझ पाया था कि रत्नमाला वास्तव में चाहती क्या है। यदि उसे ही चाहती होती तो उसका प्रस्ताव क्यों अस्वीकार कर देती ? तो क्या वह उसे नहीं चाहती है ? फिर चाहती क्या है ? उसके चित्र की पूजा क्यों करती है ? फिर उसने त्याग का यह जीवन किस उद्देश्य से स्वीकार किया है ? सोमेश्वर के मस्तिष्क में इसी प्रकार के अनेक प्रश्न उठ रहे थे और वह उनमें उलझता चला जा रहा था।

यही सब सोचता-सोचता वह न जाने कब सो गया। उस दिन उसने न स्नान किया था न भोजन। परन्तु शरीर और मन दोनों से अत्यधिक थका होने के कारण नींद अच्छी आयी और जब वह प्रातःकाल सोकर जगा तो उसने अपने आपको अपेक्षाकृत बहुत स्वस्थ पाया। कल के विचार अभी मस्तिष्क से नहीं गये थे, परन्तु अब वह बड़े पुराने और महत्त्वहीन, विचार नहीं विचारों की छाया मात्र लग रहे थे। उसने निवृत्त होकर स्नान किया, एक स्वस्थ व्यक्ति के समान कलेवा किया, और आखेट के लिए सज्जित होने लगा।

परन्तु वह सज्जित हो ही रहा था कि महामंत्री का आदेश लेकर उनका एक धावक आ पहुँचा। उन्होंने उसे तुरन्त स्मरण किया था। सोमेश्वर को इससे क्षोभ नहीं हुआ। आखेट भी तो एक बहाना ही था। उसका उद्देश्य कुछ समय के लिए अपने-आपको रत्नमाला से दूर रखना ही था, जिसकी पूर्ति महामंत्री के कार्यालय में बैठकर भी हो सकती थी। अतएव वह तुरन्त उस ओर चल पड़ा।

महामंत्री ने उसे देखते ही पूछा, "तुम रामनगर गये थे ?"

"हाँ, आर्य," सोमेश्वर ने अपने विस्मय को दबाकर उत्तर दिया।

"फिर कब जाओगे ?" महामंत्री ने पूछा।

"अभी तो कोई विचार नहीं है।" यह कहकर सोमेश्वर सोचने लगा कि इन प्रश्नों के पीछे महामंत्री का क्या उद्देश्य हो सकता है।

महामंत्री ने कहा, "पश्चिमोत्तर सीमा की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। हमें अपनी योजनाओं को तुरन्त कार्यान्वित करना होगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर के मस्तिष्क को इस विषयान्तर का अनुसरण करने में कुछ समय लगा। अतएव वह तुरन्त कुछ नहीं बोला। महामंत्री ने ही अपने कथन की व्याख्या करते हुए कहा, "हमें सूचना मिली है कि जयपाल की सेना प्रस्थान कर चुकी है। सम्भवतः इस समय तक युद्ध का निर्णय भी हो चुका होगा। मैं उसके परिणाम की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। क्या करना है इसका निर्णय तो युद्ध का परिणाम ज्ञात हाने पर ही किया जा सकेगा, परन्तु हमें अपने आपको प्रत्येक स्थिति के लिए तत्पर रखना है।"

इस बीच सोमेश्वर का मस्तिष्क भी अपनी दिशा प्राप्त कर चुका था। उसने कहा, "हाँ, आर्य, ऐसा ही होना चाहिए।"

महामंत्री ने कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात् सहसा कहा, "तुम्हें तुरन्त उज्जयिनी जाना होगा।"

सोमेश्वर को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। उसने पूछा, "तुरन्त उज्जयिनी जाना होगा?"

"हाँ, कब प्रस्थान कर सकोगे?"

सहसा सोमेश्वर के मस्तिष्क में एक विचार कौंध गया। रत्नमाला ने कहा था कि वह उसे कहीं जाने नहीं देगी। अब वह भी देखेगा कि वह उसे कैसे रोकती है। उसने उत्तर दिया, "जब आप आज्ञा दें। कल?"

महामंत्री ने कहा, "कल ? हाँ, कल प्रातःकाल ठीक रहेगा। वैसे तो मेरा विचार वर्षा ऋतु के पश्चात् तुम्हें उज्जयिनी भेजने का था। परन्तु अब स्थिति ऐसी आ गयी है कि विलम्ब करना उचित नहीं होगा।"

सोमेश्वर ने साहस करके पूछा, "पहले तो आप मालवपति को संघ में सम्मिलित करने का विचार ही नहीं कर रहे थे?"

महामंत्री ने कहा, "अब भी नहीं हैं। वास्तव मे मालवपति संघ में सम्मिलित हो ही नहीं सकते हैं। उन्हें इस समय तैलप से अवकाश नहीं है। लगता है जब तक इन दोनों में से एक की मृत्यु नहीं होगी तब तक इनके युद्धों का भी अन्त नहीं होगा। एक प्रकार से यह अपनी योजना के लिए इस कारण अच्छा भी है कि हमें उस ओर से अधिक आशंका नहीं रहेगी। परन्तु यह जान लेना फिर भी आवश्यक है कि वाक्‌पति मुंज का मस्तिष्क किस प्रकार कार्य कर रहा है। इसी उद्देश्य से मैं तुम्हें वहाँ भेज रहा हूँ। मुंज के नाम महाराज का कोई पत्र नहीं ले जाना है। वार्तालाप में तुम्हें पूरी स्वतंत्रता होगी। परन्तु मुझे यह निश्चित रूप से ज्ञात हो जाना चाहिए कि वाक्‌पति मुंज की स्थिति क्या है।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं यह अनुमान लगाने का पूरा प्रयास करूँगा।"

"हाँ, अपनी धारणा मुझे लिख भेजना और तुम वहीं उज्जयिनी में मेरे निर्देश की प्रतीक्षा करना। संवाद अपने विश्वस्त चर के हाथों ही भेजना। तुम्हारा रक्षक-दल कल प्रातःकाल तुम्हारे आवास पर पहुँच जाएगा। जाओ, भगवान विश्वनाथ तुम्हारी यात्रा सफल करें।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर चल दिया। परन्तु द्वार पर से फिर बुलाकर महामंत्री ने पूछा, "रत्नमाला से कभी भेंट होती है ?"

प्रश्न इतना अप्रत्याशित था कि उसे सुनकर क्षण भर के लिए सोमेश्वर स्तम्भित रह गया। उसे लगा कि उसके शरीर का रक्त संचार सहसा रुक गया है और उसके कंठ में कुछ अटक गया है। अतएव वह तत्काल कुछ उत्तर नहीं दे सका। उसे मौन देखकर महामंत्री ने ही फिर पूछा, "रत्नमाला को जानते हो न? वही जिसके पास तुम राजशेखर को लेकर गये थे।"

अपने विचारों को व्यवस्थित करने का प्रयत्न करते हुए सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "जानता हूँ।"

महामंत्री ने कहा, "वह तुम्हारी बहुत सहायता कर सकती है। उज्जयिनी में उसके कुछ सूत्र हैं जिनका तुम प्रयोग कर सकते हो। उसी से पूछ लेना। जाओ।"

सोमेश्वर ने आश्वस्त होकर साँस ली और फिर प्रणाम करके कार्यालय से बाहर निकल आया।

बाहर आकर उसे बड़ी प्रसन्नता का अनुभव हुआ। यह प्रसन्नता अपनी अनायास मिली विजय की थी, इस बात की थी कि रत्नमाला का बन्धन तोड़कर वह खजुराहो से बाहर जा रहा है।

इस विजय के उल्लास में उसके पग अपने आप रत्नमाला के आवास की ओर बढ़ गये।

३७

रत्नमाला के यहाँ पहुँचते ही उसने अविलम्ब घोषणा कर दी, "मैं कल जा रहा हूँ।"

"कहाँ ?" रत्नमाला ने पूछा।

"उज्जयिनी," उसने विजय के स्वर में उत्तर दिया।

"उज्जयिनी ?" रत्नमाला ने दुहराया।

"हाँ, मैं उज्जयिनी जा रहा हूँ। तुम मुझे नहीं रोक सकोगी।"

"क्यों ?"

"मैं महामंत्री के आदेश पर राजकार्य से जा रहा हूँ।"

"वर्षा-ऋतु में ?"

"हाँ। पहले वर्षा के पश्चात् भेजने का विचार था। परन्तु अब महामंत्री ने कारणवश अभी भेजने का निश्चय किया है।"

रत्नमाला का मुख उतर गया। उसने पूछा, "लौटना कब तक होगा ?"

सोमेश्वर ने कहा, "निश्चित नहीं है। सम्भव है कभी न लौटूं।"

"क्या महामंत्री जी ने ऐसा आदेश दिया है ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं, यह मेरी अपनी इच्छा पर निर्भर होगा। मैं समझता हूँ मेरा न लौटना ही अधिक अच्छा होगा। खजुराहो में जब किसी को मेरी चिन्ता ही नहीं है तो जैसे लौटा वैसे न लौटा। अन्तर क्या पड़ेगा?"

रत्नमाला ने कहा, "यह आपने कैसे जाना कि खजुराहो में किसी को आपकी चिन्ता नहीं है?"

"व्यक्ति का अनुभव ही उसका सब से बड़ा शिक्षक होता है," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"अनुभव मुझे भी पर्याप्त हुआ है," रत्नमाला ने कहा, "परन्तु मैंने कभी इस प्रकार व्यंग-वाणों की वर्षा नहीं की है।"

"इसमें मेरा क्या दोष? तुम्हें इतनी निराशा ही नहीं हुई होगी।"

रत्नमाला बोली, "यह सत्य है। मुझे कभी इतनी निराशा नहीं हुई, क्योंकि मैंने सदा वस्तुओं को यथार्थ के दृष्टिकोण से देखने का प्रयत्न किया है।"

सोमेश्वर ने विग्रह के स्वर में कहा, "और मैं? मैं यथार्थ के दृष्टिकोण से नहीं देखता हूँ क्या?"

रत्नमाला ने कहा, "नहीं। आपकी दृष्टि यथार्थ की ओर नहीं जाती, अन्यथा आप इस समय मुझ पर विष-बुझे वाणों की वर्षा न कर रहे होते। क्या आपने कभी मेरे भीतर झाँक कर यह जानने का प्रयास किया है कि मैं क्या चाहती हूँ? आप उस शिशु के समान हैं जो अग्नि की ओर बढ़ने से रोका जाने पर हठ करता है, रोता है और पाँव पटकता है, परन्तु यह नहीं सोच पाता कि उसे क्यों रोका गया है। परन्तु···परन्तु मैं और अधिक नहीं कहूँगी। कह सकती हूँ, परन्तु कहूँगी नहीं। आप निश्चिन्त होकर अपने वाण चलाइये, मैं उत्तर भी नहीं दूंगी। यदि आपको इसी में संतोष मिलता है तो जो चाहिये और कह लीजिये।" यह कह कर वह मान की मुद्रा में मुख फेर कर बैठ गयी।

सोमेश्वर ने कहा, "मैं शिशु हूँ? पाँव पटक रहा हूँ?"

परन्तु रत्नमाला ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"बोलती क्यों नहीं?" सोमेश्वर ने स्वर को ऊँचा उठाकर कहा।

परन्तु रत्नमाला फिर भी नहीं बोली, मौन बैठी रही।

सोमेश्वर विग्रह के लिए तत्पर था। रत्नमाला कुछ कहती तो वह उत्तर दे सकता था, रत्नमाला उत्तर देती तो वह प्रत्युत्तर दे सकता था। परन्तु रत्नमाला के मौन ने उसके समक्ष एक ऐसी अकल्पित स्थिति उत्पन्न कर दी थी जिसका उसके पास कोई उत्तर नहीं था। अतएव वह भी मौन हो गया। रत्नमाला दूसरी ओर देख रही थी, वह रत्नमाला की ओर देखने लगा। इस प्रकार देखते-देखते कुछ समय पश्चात् यह मौन उसे बहुत अखरने लगा, चुभने-सा लगा। उसे लगा उसके भीतर कुछ द्रवित हुआ जा रहा है, और कोई उसे धिक्कार-धिक्कार कर कह रहा है—यही तुम्हारा पौरुष है?

अपने भीतर के इस स्वर से व्यथित होकर उसने कहा, "तुम क्यों मेरे साथ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं चल सकती हो, रत्ना ?"

रत्नमाला ने सोमेश्वर की ओर मुख फेरा। उसके नयन गीले थे और आँसू बहकर कपोलों तक आ गये थे। वह बोली, "आप क्यों मुझ पर विश्वास नहीं कर सकते हैं ? जिसके लिए मैंने सब कुछ छोड़ दिया है उसे प्राप्त करने का यह अवसर क्या मेरे लिए कुछ नहीं है ? क्या मैं उसे ऐसे ही, अकारण चला जाने दे रही हूँ ?"

सोमेश्वर ने कहा, "तुम्हारा तर्क अब भी मेरी बुद्धि में नहीं आ रहा है।"

"आज जो कुछ हुआ है उसके पश्चात् भी नहीं ?"

"आज क्या हुआ है ?"

"महामंत्री जी के कार्यक्रम में परिवर्तन," रत्नमाला ने कहा। "क्या आप अब भी अनुमान नहीं लगा सकते कि वर्षा-ऋतु में आपको सुदूर यात्रा पर क्यों भेजा जा रहा है ?"

"महामंत्री कह रहे थे कि पश्चिमोत्तर से प्राप्त सूचना के कारण ऐसा किया जा रहा है।"

"और क्या वे यह कहते कि मुझसे विलग करने के लिए आपको इतनी दूर भेज रहे हैं ? उन्हें सब ज्ञात हो चुका है।"

सोमेश्वर ने कुछ सोचते हुए कहा, "यह सम्भव है। उन्हें इतना तो ज्ञात है ही कि मैं अभी रामनगर गया था। उन्होंने मुझसे पूछा था।"

"और आप फिर भी अनुमान नहीं लगा सके ?"

"उन्होंने यह भी कहा था कि उज्जयिनी में तुम्हारे कुछ सूत्र हैं जो मेरे लिए सहायक सिद्ध हो सकते हैं।"

"महामंत्री जी ने मेरा भी उल्लेख किया था ?"

"हाँ, तुमसे पूछने को कहा था।"

रत्नमाला किसी गम्भीर विचार में डूब गयी थी। उत्तर में "अच्छा बता दूंगी," कहकर वह फिर विचारमग्न हो गयी।

रत्नमाला की स्थिति का तर्क स्पष्ट होते ही सोमेश्वर का सारा क्षोभ विलीन हो गया था। उसका स्थान अब पश्चात्ताप ने ले लिया था। वह बोला, "मुझे क्षमा कर दो, रत्ना। मैंने अकारण ही तुम पर संदेह किया, अपनी मूर्खता से तुमको इतना दुखी किया।"

रत्नमाला कुछ नहीं बोली, वह अब भी विचारमग्न थी।

सोमेश्वर ने फिर कहा, "मुझे क्षमा नहीं करोगी, रत्ना ? मैं वचन देता हूँ कि भविष्य में जो तुम कहोगी वही किया करूँगा।"

रत्नमाला ने एक स्निग्ध दृष्टि उसकी ओर डाली, परन्तु कहा कुछ नहीं। सोमेश्वर ने ही फिर कहा, "बोलो रत्ना, अब हमें क्या करना चाहिए ?"

"यही मैं भी सोच रही हूँ," रत्नमाला ने मुखर चिन्तन के स्वर में उत्तर दिया। "मैं जानती हूँ कि महामंत्री जी की शक्ति का पार नहीं है। परन्तु जो कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेरा है वह मेरा ही रहेगा। वहाँ मैं उन्हें भी हस्तक्षेप नहीं करने दूंगी। परन्तु कैसे ? यही सोच रही हूँ। मेरी कोई शक्ति नहीं है। फिर भी मैं अपने अधिकार की रक्षा अवश्य करूँगी।"

"परन्तु अभी, इस समय, हमें क्या करना चाहिए ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"अभी ? अभी तो आपको उज्जयिनी जाना होगा। कब प्रस्थान होगा ?"

"कल प्रातःकाल।"

"तो यात्रा का सारा प्रबन्ध अभी जाकर कर लीजिए। और संध्या को हवेली में ही रहियेगा। यात्रा की पूर्व-संध्या को इधर-उधर घूमना नहीं चाहिए।"

सोमेश्वर ने कहा, "ऐसा ही करूँगा। परन्तु संध्या को कुछ समय के लिए यहाँ अवश्य आऊँगा। तुमसे मिले बिना जाना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा।"

रत्नमाला के मुख का घिरा आकाश सहसा स्वच्छ हो गया और मुस्कान की चन्द्रिका में नहाकर निखर उठा। वह बोली, "यहाँ रहने और हवेली में रहने में कोई अन्तर नहीं है। परन्तु यात्रा का सारा प्रबन्ध करके ही आइयेगा। रात्रि का भोजन आपको यहीं करना होगा।"

"ऐसा ही करूँगा," सोमेश्वर ने कहा।

उसे उठते देखकर रत्नमाला बोली, "जाने से पूर्व एक बार अपना वचन दुहराते जाइये।"

"अर्थात् ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"आपने कहा था न कि भविष्य में जा मैं कहूँगी आप वही किया करेंगे ?"

"हाँ कहा था," सोमेश्वर ने स्वीकार किया।

"एक बार और कह दीजिये।"

"क्यों ?"

"सुनकर अच्छा लगता है, सुख मिलता है।"

सोमेश्वर ने कहा, "लो, तुम्हारे सुख के लिए मैं फिर कह रहा हूं कि भविष्य में जो तुम कहोगी वही करूँगा।"

"भूलेंगे तो नहीं ?"

"नहीं, कभी नहीं।"

३८

यात्रा के प्रबन्ध में सोमेश्वर को विलम्ब हो गया, और जब वह रत्नमाला के यहाँ पहुँचा तब संध्या आकर चली जा चुकी थी। परन्तु अन्धकार उस समय भी नहीं था। वृष्टि होकर निकल चुकी थी। आकाश उस समय पूर्णतया निरभ्र था और श्रावण का धुली, स्वच्छ चन्द्रिका में सामान्य से अधिक नीला लग रहा था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर ने पहुँचते ही विलम्ब के लिए क्षमा-याचना की। परन्तु रत्नमाला उत्तर में मुस्करा दी और बोली, "मुझे इतनी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी कि आप क्षमा-याचना करें। वास्तव में, यदि पहले आ जाते तो आपको ही प्रतीक्षा करनी होती।"

सोमेश्वर ने पूछा, "क्या कोई आ गया था ?"

"नहीं आने वाला और कौन बैठा है ? मैं ही चली गयी थी।"

"कहाँ ?" सोमेश्वर ने फिर पूछा।

"देवी के मन्दिर तक गयी थी। अपनी दौड़ वहीं तक है।"

"परन्तु इस समय ?"

"पूजा करने नहीं, केवल माता का आशीर्वाद लेने गयी थी।"

"कुछ विशेष बात है क्या ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"माता का आशीर्वाद लेने क्या वैसे नहीं जाया जा सकता ?" यह कहती हुई रत्नमाला उठकर खड़ी हो गयी।

सोमेश्वर ने पूछा, "अब कहाँ जा रही हो ?"

रत्नमाला फिर बैठ गयी और बोली, "कहीं नहीं। अब नहीं जाऊँगी।"

"परन्तु जा कहाँ रही थीं ?"

रत्नमाला ने कहा, "पहले सोचा था कि आज आपके समक्ष नृत्य करूँगी। परन्तु अब विचार बदल दिया है।"

"क्यों ?"

"समय बहुत थोड़ा है। सोचती हूँ आपके पास बैठकर कुछ अपनी कह लूँ, कुछ आपकी सुन लूँ।"

सोमेश्वर ने कहा, "तो क्या मैं लौटकर आऊँगा ही नहीं ?"

रत्नमाला के मुख पर एक हल्की-सी छाया आयी और चली गयी। उसने कहा, "आएँगे। अवश्य आएँगे. और यदि मेरा प्रेम सच्चा है तो सकुशल आएँगे। परन्तु कब आएँगे, और मुझे कब मिलेंगे, यह मैं नहीं जानती।"

सोमेश्वर ने आश्वासन के स्वर में कहा, "मैं शीघ्र लौटूँगा, रत्ना। तुम्हें अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।"

"इसकी चिन्ता आप न करें। शीघ्र लौटें अथवा विलम्ब से, मैं प्रतीक्षा कर लूँगी। यदि आवश्यक हुआ तो अन्तिम साँस तक भी करती रहूँगी।"

सोमेश्वर ने कुछ गम्भीर होकर कहा, "इस बार का जाना अच्छा मुझे भी नहीं लग रहा है, रत्ना। यात्रा पर पहले भी जा चुका हूँ परन्तु ऐसा कभी नहीं लगा था।"

"कैसा ? इस बार कैसा लग रहा है ?"

"अच्छा नहीं लग रहा है, केवल इतना कह सकता हूँ। क्यों अच्छा नहीं लग रहा है, यह मैं स्वयं नहीं जान पा रहा हूँ।"

"अब पहले की अपेक्षा अधिक प्रेम करने लगे हैं क्या ?" रत्नमाला ने कटाक्ष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करते हुए कहा।

सोमेश्वर ने पूर्ववत् गम्भीरता के साथ उत्तर दिया, "प्रेम मैं पहले भी इतना ही करता था। परन्तु पहले समझ नहीं पाता था, अब समझने लगा हूँ।"

"यह मेरा सौभाग्य है," रत्नमाला ने कहा।

"अपनी तुम जानों। मेरा है, यह मैं जानता हूँ। परन्तु अब मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि इतने दिन तुमसे दूर कैसे रह सकूँगा।"

रत्नमाला फिर उठकर खड़ी हो गयी, परन्तु सोमेश्वर ने उसे तुरन्त हाथ पकड़कर अपने निकट बैठा लिया और फिर कहा, "कहाँ जा रही हो, रत्ना ? कुछ क्षण तो मेरे पास बैठ लो। बताओ, तुमसे दूर मैं कैसे रहूँगा ?"

रत्नमाला ने अपना सिर उसकी भुजा पर टिकाते हुए धीमे स्वर में उत्तर दिया, "जैसे मैं रहूँगी।"

"और तुम कैसे रहोगी ?"

"सुधियों और सपनों के सहारे," रत्नमाला ने उत्तर दिया।

"तुम समर्थ हो, रत्ना। तुम्हारे प्रेम ने तुम्हें कवि बना दिया है। परन्तु मेरी कल्पना इतनी प्रखर नहीं है।"

"हो जाएगी," रत्नमाला ने कहा।

"कैसे ?"

"प्रेम आपको भी कवि बना देगा।"

उपर्युक्त वाक्य रत्नमाला ने इस प्रकार कहा था कि सोमेश्वर को हँसी आ गयी, जिसमें रत्नमाला ने भी योग दिया। सोमेश्वर ने हँसते ही हँसते कहा, "परन्तु मैं कवि नहीं बनना चाहता। सम्भवतः बन भी नहीं सकता हूँ। कवि का प्रेम निरपेक्ष तथा देश-काल के बन्धनों से मुक्त होता है। यह मुझे स्वीकार्य नहीं है।"

रत्नमाला ने कहा, "जो ऐसा कहते हैं वे कोरे वाग्विलासवादी होते है। प्रेम द्वारा अभिषिक्त कवि कभी ऐसा नहीं कहेगा।"

"तुम क्या कहती हो ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"मैं ? मैं कहती हूँ कि निरपेक्ष प्रेम एक विडम्बना मात्र है। वसन्त-सा मादक और सागर की लहरों-सा उद्दाम प्रेम एक मधुर स्वप्न अवश्य है, परन्तु कल्पना का यह कुसुम यथार्थ की डार पर ही खिल सकता है। यथार्थ वह आधार है जिसके बिना प्रेम का प्रासाद खड़ा ही नहीं रह सकता। इसी कारण मैं आपसे सदा वर्तमान में जीने का आग्रह करती रही हूँ। वर्तमान की उपेक्षा करके भविष्य का निर्माण असम्भव है।"

सोमेश्वर ने कहा, "तुम्हारे तर्क से मैं पूर्णतया सहमत हू। परन्तु भविष्य को अपने मस्तिष्क से नहीं निकाल पाता हूँ। यह मेरे स्वभाव की विवशता है। मैं तुम्हें पूर्णतया अपनी बना लेना चाहता हूँ, सदा-सदा के लिए बांध लेना चाहता हूँ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने मुस्कराकर कहा, "क्या मैं इस समय भी पूर्णतया आपकी नहीं हूं ? सदा-सदा के लिए आपके साथ बँधी नहीं हूँ ?"

"मैं ऐसा बन्धन चाहता हूँ, रत्ना, जिसे समाज भी स्वीकार करे। यदि मेरी यह इच्छा पूर्ण न हुई तो मैं कभी विवाह नहीं करूँगा।"

रत्नमाला ने कहा, "अभी मैं इस सम्बन्ध में आग्रह भी कहाँ कर रही हूँ!"

"और कभी रामनगर भी नहीं जाऊँगा," सोमेश्वर ने कहा।

"यदि आपको इस में ही संतोष हो तो मत जाइये। वैसे रामनगर ने आपका कुछ नहीं बिगाड़ा है।"

"तुम विनोद कर रही हो, रत्ना ?" सोमेश्वर ने आहत स्वर में कहा।

रत्नमाला ने अपना दाहिना हाथ उसकी ओर बढ़ा दिया। जब सोमेश्वर ने उसे अपनी दोनों हथेलियों के बीच दबा लिया तब वह बोली, "नहीं, मैं विनोद नहीं कर रही हूँ। मैंने जो कुछ कहा पूर्ण गम्भीरता के साथ कहा है। परन्तु मुझे यह आश्चर्य अवश्य है कि जो व्यक्ति इतना बुद्धिमान है कि महामंत्री जी का दौत्य सफलतापूर्वक कर सकता है, वह एक अत्यधिक सामान्य और स्वाभाविक बात को इतना महत्त्व दे रहा है।"

सोमेश्वर ने अनुनय करते हुए कहा, "आज इस प्रकार की बातें न करो, रत्ना। मुझ पर इतनी दया करो।"

"नहीं करूंगी," रत्नमाला ने अत्यन्त कोमल स्वर में कहा, "अब ऐसी बातें कभी नहीं करूँगी।"

सोमेश्वर ने कहा, "तुम कितनी अच्छी हो, रत्ना ?"

"सच ?" और यह कहती हुई रत्नमाला फिर उठकर खड़ी हो गयी।

"कहाँ जा रही हो ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"जाना अब कहीं नहीं है। मैंने अपना गन्तव्य पा लिया है।"

"फिर उठकर क्यों खड़ी हो गयीं ?"

"भीतर चल रही हूँ। आप भी उठिये। पूर्वज कह गये हैं कि केवल बातों से पेट नहीं भरता है।" और यह कहकर उसने हाथ पकड़ कर सोमेश्वर को भी उठा लिया।

भीतर जाकर उसने अपने हाथ से भोजन परोसा और थाल सोमेश्वर के सामने रखकर स्वयं भी पास ही बैठ गयी।

सोमेश्वर ने कहा, "और तुम ?"

"मैं भी करूँगी। आपके सामने ही करूँगी। परन्तु आपके साथ कैसे कर सकती हूँ ?" यह कहकर रत्नमाला मुस्करा दी।

सोमेश्वर ने भोजन आरम्भ किया। रत्नमाला तत्परतापूर्वक और आग्रह कर-कर के परोसती रही, वह धीरे-धीरे भोजन करता रहा। दोनों अपने-अपने विचारों में खोये थे, अतएव वार्तालाप का टूटा हुआ क्रम फिर आरम्भ नहीं हुआ परन्तु जब सोमेश्वर भोजन लगभग समाप्त कर चुका था तब रत्नमाला ने सहसा,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिना किसी संदर्भ के पूछा, "आपने कालिदास का अभिज्ञान-शाकुन्तल पढ़ा है ?"

क्षण-भर रुककर अपने विचारों को बटोरते हुए सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "पढ़ा तो नहीं है, परन्तु अभिनय देखा है।"

"मैंने अभिनय किया है," रत्नमाला ने कहा।

"शकुन्तला का ?"

"हाँ, शकुन्तला का। वह आपको कैसी लगती है ?"

"बहुत अच्छी। शिशु-सी सरल और कुसुम-सी कोमल शकुन्तला वास्तव में पूर्ण नारी है।"

रत्नमाला ने कहा, "परन्तु उसकी यह सरलता ही क्या उसके आजीवन दुःख का कारण नहीं बनी ? उसने केवल एक भूल की और उसका दंड जीवन भर भोगती रही।"

"यहाँ मैं तुमसे सहमत नहीं हूँ, रत्ना," सोमेश्वर ने उत्तर दिया। "जिसे तुम उसकी भूल कह रही हो वह वास्तव में शकुन्तला की महानता थी। यदि वह दुष्यन्त का गुप्त वरण न करती तो उसका नारीत्व कैसे निखरता ? उसी एक कृत्य के कारण तो वह अपने प्रणय और अपने मातृत्व, दोनों में महान है।"

"किस तर्क से ?" रत्नमाला ने पूछा।

"प्रेम की परिणति समर्पण में ही होती है, इसलिए। इस दृष्टिकोण से शकुंतला का प्रेम आदर्श है।"

"और दुष्यन्त का ? मैं उसके आचरण को सर्वथा अक्षम्य समझती हूँ। उसने एक सरला, समर्पणशील नारी के प्रति विश्वासघात किया।"

"परन्तु उसका आचरण उसका अपना कब था ? वह तो ऋषि के शाप का परिणाम था।"

रत्नमाला ने कहा, "यह कवि की कल्पना मात्र है जिसका प्रयोग उसने अपने नायक के चरित्र की रक्षा के लिए किया है। अन्यथा दुष्यन्त का आचरण जघन्य समझा जाता।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं सहमत हूँ। यदि शाप की कथा निकाल दी जाए तो दुष्यन्त का अपराध सर्वथा अक्षम्य है।"

सोमेश्वर भोजन समाप्त कर चुका था। रत्नमाला ने उसे अपने हाथ से ताम्बूल खिलाया और फिर वहीं अपने सामने बैठाकर स्वयं भी भोजन किया। सोमेश्वर फिर अपने विचारों में डूब गया था। परन्तु जब कुछ ही क्षणों में भोजन समाप्त करने के पश्चात् रत्नमाला उठने लगी तो उसका ध्यान टूट गया और उससे लक्षित किया कि रत्नमाला ने उसके छोड़े हुए थाल में ही भोजन किया था। उसके मुख से अचानक निकला, "रत्ना !"

"हाँ," रत्नमाला ने सहज भाव से कहा।

कुछ संभलकर, अपने आश्चर्य को दबाते हुए सोमेश्वर ने कहा, "तुमने तो कुछ भी नहीं खाया है, रत्ना ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "इस समय अधिक इच्छा नहीं हो रही है।"

"क्यों ? अभी तो मैं यहीं हूँ, गया नहीं हूँ।"

"परन्तु कब तक ? कल इस समय कहाँ होंगे ?"

सोमेश्वर ने कहा, "तुम्हें भी भविष्य की चिन्ता सताने लगी ?"

रत्नमाला हँस दी और बोली, "सत्संग का प्रभाव है।"

"मुझ पर कब होगा ?" सोमेश्वर ने हँसी में योग देते हुए कहा।

"अब अधिक समय नहीं लगेगा।" यह कहती हुई रत्नमाला खड़ी हो गयी और आगे बोली, "चलिये, अब कक्ष में बैठेंगे।"

सोमेश्वर ने कहा, "मुझे अब विदा दो, रत्ना। जाकर विश्राम करूँगा। प्रातःकाल प्रस्थान करना है।"

रत्नमाला ने कहा, "यह मुझे भी ज्ञात है। यह भी जानती हूँ कि मैं आपको रोककर नहीं रख सकती। आप जाएँगे अवश्य। परन्तु अभी नहीं। जब मैं कहूँगी तभी जा सकेंगे। वचन दिया है कि नहीं ?"

फिर अतिथि-कक्ष में लाकर उसने सोमेश्वर को आसन पर बैठाया और स्वयं लौटकर भीतर चली गयी। सोमेश्वर वहीं अकेला बैठा रहा। रात्रि घनी हो चुकी थी और उसकी आँखें नींद के कारण भारी हो रही थीं। परन्तु उसके मन में एक अपरिचित-सा कुतूहल था जिसके कारण वह सोना नहीं चाहता था। उसने निकट रखी रत्नमाला की वीणा उठा ली और अपनी अनभ्यस्त उँगलियाँ उसके तारों पर फेरने लगा।

बहुत विलम्ब के पश्चात रत्नमाला विलम्ब के कारण की प्रत्यक्ष घोषणा-सी करती हुई फिर कक्ष में आयी। उसके वस्त्र बदले हुए थे, वेणी सँवारी हुई थी और कुंद तथा मंदार के पुष्पों से सुसज्जित थी। उसका सम्पूर्ण शृंगार फूलों का था—कर्णफूल, भुजबंध, कटिसूत्र, कंकण, सभी उजले फूलों के थे। केवल कंठ सूना था।

सोमेश्वर ने जो उसका यह रूप देखा तो उसकी पलकें गिरना भूल गयीं। उसके मुख से अनायास निकल गया, "आज किसी विश्वामित्र की तपस्या भंग होगी क्या ?"

रत्नमाला ने सस्मित कहा, "मैं मेनका नहीं, रत्नमाला हूँ। मैं तपस्या भंग करने नहीं, साधना को सिद्धि देने आयी हूँ।"

इसी समय मल्लिका भीतर से आकर अपनी स्वामिनी के पीछे खड़ी हो गयी। उसके हाथों में रक्तवर्ण पुष्पों का एक हार था। रत्नमाला ने पुष्प हार उससे ले लिया और मल्लिका फिर बाहर चली गयी।

तब रत्नमाला ने कहा, "अभी तक अपने देवता के चरणों में पुष्प चढ़ाती रही हूँ। यदि आज्ञा और अधिकार दें तो आज यह माला कंठ में डाल दूं ?"

क्षण भर की अस्थिरता के पश्चात् सोमेश्वर उठकर खड़ा हो गया। उसका सिर थोड़ा झुका, रत्नमाला की बांहें थोड़ी उठीं, और माला उसके कंठ में डालती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुई वह बोली, "अब मैं आपकी स्वयंवरा हूँ, और जीवन भर आपकी ही रहूँगी। अब महामंत्री जी भी आपको मुझसे दूर रख सकते हैं परन्तु विलग नहीं कर सकेंगे।"

सोमेश्वर का मस्तक भीग गया था। उसने बिना एक शब्द बोले, स्वप्नवत् माला अपने कंठ से उतार कर उसके कंठ में डाल दी और उसे अपनी बलिष्ट बाहों में भर लिया।

बाहर मनुष्य के मस्तिष्क-सा अस्थिर और भाग्य-सा परिवर्तनशील वर्षा का आकाश नया स्वरूप धारण कर चुका था। घने, काले बादल क्षितिज से क्षितिज तक छा गये थे और धीमी-धीमी वर्षा आरम्भ हो गयी थी। चन्द्रमा पर अन्धकार का इतना घना आवरण पड़ गया था कि आकाश में उसका कहीं आभास भी नहीं मिल पा रहा था। घन और पर्वत, नदी और सरोवर, मन्दिर और प्रासाद, सब अंधकार में खो गये थे। सम्पूर्ण दृश्य जगत में केवल एक सत्ता रह गयी थी—बादल, बादल, बादल। बादल बरस रहे थे, बादल गरजते थे, और बादल कभी-कभी परस्पर टकरा कर एक विद्युत्-धारा प्रवाहित कर देते थे जो क्षण भर के लिए चतुर्दिक फैले अन्धकार को प्रवाहित कर फिर उसी में विलीन हो जाती थी। केवल पवन पर किसी का नियंत्रण नहीं था। वह बादलों के व्यूह को तोड़ता, त्रस्त खड़े वृक्षों को झकझोरता, प्रबल, अदम्य वेग से इधर-उधर घूम रहा था।

अनायास ही उसका एक प्रबल झोंका रत्नमाला के अतिथि-कक्ष में अनिमंत्रित घुस आया और क्षण भर में दीपाधार पर जल रहे दीपक को बुझाकर, परन्तु सोमेश्वर और रत्नमाला को उसी प्रकार आलिंगनबद्ध छोड़कर, फिर अंतर्धान हो गया।

३९

उज्जयिनी जाते हुए मार्ग में सोमेश्वर ने अनुभव किया कि उसके प्रेम ने वास्तव में उसे कवि बना दिया है। उसकी सम्पूर्ण चेतना एक ऐसी नयी, मादक अनुभूति से आप्लावित हो गयी थी जिसमें सुख और दुःख दोनों छाया-प्रकाश से घुले-मिले थे और जिसे वह सोते जागते कभी अपने मस्तिष्क से दूर नहीं कर पाता था। दिन में यात्रा तथा रात्रि में विश्राम करते हुए उसकी कल्पना कुछ मधुर सुधियों के चारों ओर अनेक मधुरतर स्वप्नों का ताना-बाना बुना करती थी, और उसका मन कभी मधुर-सा नर्तन कर उठता था तो कभी कल के खिले फूल-सा म्लान हो जाता था।

परन्तु यह दशा केवल मार्ग भर रही। उज्जयिनी पहुँचते ही वह अपने कर्तव्य-पालन में इतना अधिक व्यस्त हो गया कि स्वप्नों के लिए अवकाश ही नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रह गया और सुधियाँ भी रात्रि के अँधेरे में छिपकर केवल उस समय आती थीं जब वह सोने के लिए लेटता था।

उज्जयिनी में उसने तुरन्त मालवपति से भेंट नहीं की। वाक्पति मुंज उस समय राजधानी में ही थे, उनके समक्ष उपस्थित होने से पूर्व वह वर्तमान स्थिति से भली भाँति अवगत हो लेना चाहता था। अतएव सबसे पहले उसने रत्नमाला द्वारा बताये गये सूत्रों के साथ सम्पर्क स्थापित किया। वे आशा के अनुरूप बहुत लाभदायक सिद्ध हुए। तत्पश्चात् वह राज्य के सम्बद्ध अधिकारियों से मिला जिनमें उसका एक पुराना सहपाठी भी था। इन भेंटों के परिणामस्वरूप उसे इस निष्कर्ष पर पहुँचने में अधिक समय नहीं लगा कि मालवपति के दर्शन करना एक आवश्यक औपचारिकता मात्र थी क्योंकि वे संघ की योजना से सहमत होने के पश्चात् भी उसमें सम्मिलित होने की स्थिति में नहीं थे।

वास्तव में यह जानने के लिए सूत्रों अथवा अधिकारियों से मिलना भी आवश्यक नहीं था। मालव राज्य की राजधानी में उन दिनों चारों ओर युद्ध का वातावरण था। राजमार्ग पर किसी भी समय झुंड के झुंड सैनिक घूमते हुए देखे जा सकते थे, और सामान्य नागरिक भी यह जानते थे कि वे तैलप के विरुद्ध युद्ध के लिए एकत्र किये जा रहे हैं। हाट-वाट में सब ओर चर्चा का यही विषय था।

कुंतल देश के चालुक्य अधिपति तैलप के साथ मालवराज की पुरानी शत्रुता थी। तैलप आरम्भ में मान्यखेट के राष्ट्रकूटों का मांडलिक था परन्तु धीरे-धीरे शक्ति बढ़ाकर उसने अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर ली थी, और फिर जर्जर-प्राय राष्ट्रकूट साम्राज्य को पददलित कर स्वयं दक्षिण में उसका स्थान ले लिया था। राष्ट्रकूटों पर अपनी विजय के प्रमाणस्वरूप उसने अपनी नयी राजधानी मान्यखेट में स्थापित की थी। वह एक क्रूर, कुशल एवं महत्वाकांक्षी सेनानायक था। इसी महत्वाकांक्षा के वशीभूत दक्षिण तथा पश्चिम में अपनी विजय-पताका फहराकर जब वह उत्तर की ओर बढ़ा तो वाक्पति मुंज की मालव सेना ने उसका मार्ग-अवरोध किया। एक के पश्चात् एक, वह चार अभियान कर चुका था, और प्रत्येक बार उसे मालव वीरों के समक्ष पराजय का मुख देखकर पीछे लौटना पड़ा था। इस समय वह फिर, पाँचवीं बार आक्रमण करने आ रहा था, और मालव-पति मुंज फिर उससे लोहा लेने के लिए कटिबद्ध हो रहे थे।

सोमेश्वर सोचने लगा—क्या यह सम्भव है कि जो बात उज्जयिनी का प्रत्येक नागरिक जानता है उसका ज्ञान खजुराहो के महामन्त्री को न हो? और यदि उन्हें यहाँ की स्थिति का ज्ञान था तो फिर इस वर्षा-ऋतु में मुझे यहाँ क्यों भेजा गया है? निश्चय ही इसके पीछे महामन्त्री का कोई अन्य उद्देश्य होगा। रत्न-माला का अनुमान सम्भवतः सत्य था। यह मुझे उससे दूर करने की योजना प्रतीत होती है।

और जब महामन्त्री का एक धावक उनका पत्र लेकर उसके उज्जयिनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पहुँचने के तीसरे ही दिन वहाँ आ पहुँचा तो सोमेश्वर का सन्देह पुष्ट हो गया। महामन्त्री ने लिखा था—"तुम्हारे जाने के पश्चात् मिली सूचना के आधार पर मेरी धारणा यह है कि उज्जयिनी में तुम्हें सफलता नहीं मिलेगी। तथापि मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे वहाँ की स्थिति के सम्बन्ध में अपनी धारणा सविस्तार लिख भेजो। यह कार्य यथासम्भव शीघ्रता के साथ पूरा करके तुरन्त अनहिल-पट्टन के लिए प्रस्थान करो। क्या करना है, यह तुम्हें ज्ञात है। वहाँ तुम सफलता की आशा भी कर सकते हो। अनहिलपट्टन में तुम्हें मेरे और निर्देश प्राप्त होंगे।"

पत्र पढ़कर एक बार तो सोमेश्वर के मन में आया कि वह उसे फाड़कर फेंक दे और कुछ न करे—न पत्र का उत्तर दे, न अनहिलपट्टन जाए, न कभी लौट-कर खजुराहो ही जाए। परन्तु जब उसे यह ध्यान आया कि रत्नमाला खजुराहो में ही है और उसका जीवन महामन्त्री की प्रसन्नता पर निर्भर है तो उसने तुरन्त यह विचार मस्तिष्क से निकाल दिया और मालवपति से मिलकर तथा महामंत्री को विवरण भेजकर अविलम्ब उज्जयिनी से चल देने का निश्चय किया। उसे रत्नमाला के एक वाक्य का स्मरण हो आया। महामन्त्री उन्हें दूर रख सकते थे परन्तु विलग नहीं कर सकते थे। सोमेश्वर ने सोचा, मैं भी देखूँगा कब तक हमें दूर रख सकते हैं।

राज्य के सम्बन्धित अधिकारियों से वह पहले ही परिचय प्राप्त कर चुका था। अतएव मालवपति से भेंट की व्यवस्था करने में विशेष कठिनाई नहीं हुई।

मालवराज वाक्पति मुंज ने अपनी रंगशाला में सोमेश्वर से भेंट की। उस समय वहाँ अन्य कई व्यक्ति भी उपस्थित थे जिनमें से सोमेश्वर केवल एक दो को ही पहचानता था। उसे ज्ञात था कि मुंजदेव स्वयं सरस्वती के वरद पुत्र हैं और सदा विद्वानों, कवियों तथा गुणीजनों से घिरे रहते हैं। परन्तु इस समय वहाँ उपस्थित व्यक्तियों में सब इस कोटि के नहीं थे। कुछ वेष-भूषा से सैनिक प्रतीत हो रहे थे, कुछ राज्याधिकारी भी थे।

मुंजदेव ने सोमेश्वर का अभिवादन स्वीकार करते हुए कहा, "आओ, दूत। हमें ज्ञात हुआ है कि चन्देल-कुल-भूषण महाराज धंगदेव तुरुष्कों के विरुद्ध संयुक्त अभियान की कोई योजना कार्यान्वित कर रहे हैं। क्या यह सत्य है?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "सत्य है, महाराज। उसी योजना का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने के लिए हमारे महामन्त्री प्रभास ने इस सेवक को महाराज की सेवा में भेजा है।"

"हमें खेद है, दूत, कि हम इच्छा रखते हुए भी इस समय योजना में सम्मि-लित नहीं हो सकेंगे।" स्पष्ट था कि मुंजदेव इस समय बहुत व्यस्त थे और सोमेश्वर को अधिक समय नहीं देना चाहते थे।

परन्तु सोमेश्वर ने बिना हतोत्साहित हुए कहा, "हमारे महामन्त्री जी को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस स्थिति का ज्ञान है, महाराज। सेवक को केवल आपका सत्परामर्श प्राप्त करने के उद्देश्य से भेजा गया है। मनीषियों का कथन है कि मंत्रणा एवं विचार-विमर्श में ही सफलता का मूल निहित होता है।"

वाक्पति मुंज ने सिर हिलाकर इस कथन का अनुमोदन करते हुए कहा, "हाँ, महाभारत में भी ऐसा ही कहा गया है। मनुष्य को विचारणीय विषयों पर कभी अकेले विचार नहीं करना चाहिए। हम इस समय अधिक कुछ नहीं कर सकते, परन्तु विचार-विमर्श के लिए सहर्ष प्रस्तुत हैं। संक्षेप में योजना का विवरण प्रस्तुत करो, हम उत्सुक हैं।"

सोमेश्वर ने योजना का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करने के पश्चात् अन्त में कहा, "हमारे महामन्त्री जी की यह दृढ़ धारणा है, महाराज, कि इस योजना की सफलता अथवा असफलता पर ही देश का भविष्य निर्भर होगा।"

मुंजदेव ने कहा, "हम सहमत हैं। योजना वास्तव में दूरदर्शितापूर्ण तथा स्तुत्य है। इसमें सबको सहयोग करना चाहिए। क्यों धनंजय?" यह कहकर उन्होंने अपने दक्षिण पार्श्व में बैठे हुए एक व्यक्ति की ओर देखा। सोमेश्वर की दृष्टि भी उस ओर उठ गयी। वह 'दशरूपक' के रचयिता सुकवि धनंजय की कीर्ति से परिचित था।

धनंजय ने कहा, "सत्य वचन है, महाराज। आदि-कवि ने भी कहा है कि कल्याण की इच्छा करने वाले बुद्धिमान मनुष्य को आने वाली विपत्तियों की शंका करते हुए आने से पूर्व ही उनका प्रतिकार करना चाहिए।"

मुंजदेव ने कहा, "हाँ, बुद्धिमत्ता इसी में है। परन्तु दुर्भाग्यवश देश में इस समय कुछ शक्तिशाली व्यक्ति इतने दूरदर्शी नहीं हैं। वे अधिकार-लिप्सा में रत अथवा मदान्ध होकर परस्पर विग्रह में संलग्न हैं और इस कारण न तो स्वयं प्रस्तुत योजना में सम्मिलित होंगे और न दूसरों को होने देंगे। हमें खेद है, दूत, कि इसी कारण हम भी अपना कर्तव्य पालन नहीं कर सकेंगे, अन्यथा मालव वीरों ने जिस प्रकार चन्द्रगुप्त के साथ हूणों का प्रतिरोध करते हुए अपना रक्त बहाया था वैसा ही वे इस बार भी करते। तुम्हें ज्ञात ही होगा कि हम कल तैलप के विरुद्ध प्रस्थान कर रहे हैं।"

सोमेश्वर ने कहा, "ज्ञात है, महाराज। हमें स्वयं खेद है कि इस योजना के ही कारण हम आपके इस अभियान में सम्मिलित नहीं हो पा रहे हैं।"

मुंजदेव ने हँसकर कहा, "हम तुम्हारे वाक्-चातुर्य से प्रसन्न हैं, दूत। तुम उन्नति करोगे। परन्तु तैलप के विरुद्ध हमें किसी सहायता की आवश्यकता नहीं है। मालव सेना चार बार उसे परास्त कर चुकी है। इस बार हम उसे समाप्त करके ही रहेंगे।"

"हमारे महामन्त्री जी भी यही कह रहे थे, महाराज," सोमेश्वर ने कहा।

मुंजदेव फिर हँसे और बोले, "हम महामन्त्री प्रभास के प्रशंसक हैं, दूत। उन्हें यह अवश्य बताना और हमारी ओर से आश्वासन देना कि यद्यपि हम संघ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में सम्मिलित होने की स्थिति में नहीं हैं, तथापि योजना का समर्थन करते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से उसमें सहायक भी सिद्ध होंगे। उनसे कहना कि जब तक एक भी मालव वीर जीवित है तब तक दक्षिण से कोई शत्रु चन्देल राज्य की सीमा के निकट भी नहीं पहुँच सकेगा।''

सोमेश्वर ने कहा, "हमारे महाराज तथा महामन्त्री दोनों को यह सुनकर विशेष प्रसन्नता होगी, देव।''

"अच्छा, अब यदि और कुछ विशेष न कहना हो तो तुम जाओ। हमें अभी अपने इन अधिकारियों से परामर्श करना है।'' और यह कहकर मुंजदेव अधिकारियों की ओर घूम गये।

अपने डेरे पर लौटकर सोमेश्वर ने महामन्त्री के लिए उपर्युक्त वार्तालाप तथा उज्जयिनी की स्थिति के सम्बन्ध में अपनी धारणाओं का विस्तृत वर्णन लिपिबद्ध किया और अपने एक विश्वस्त अनुचर को उसे लेकर तुरन्त खजुराहो जाने का आदेश दिया।

उसी अनुचर के द्वारा उसने रत्नमाला के लिए भी एक विस्तृत पत्र भेजा जिसके अन्त में उसने लिखा था—

"रत्ना, तुम्हारी धारणा सत्य थी। मुझे तुमसे बिलग करने के लिए ही इस यात्रा पर भेजा गया है। कल मैं यहाँ से अनहिलपट्टन के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ। तुम्हारा उत्तर मुझे वहीं प्राप्त होगा। वहाँ से और कहीं, और फिर सम्भवत: और कहीं, जाना होगा, जिसकी सूचना मैं तुम्हें नियमित रूप से इसी प्रकार देता रहूँगा। परन्तु कभी न कभी तो इस यात्रा का अन्त होगा ही। जब जीवन की यात्रा का हो जाता है तो इसका क्यों नहीं होगा? कभी न कभी मैं खजुराहो लौटकर तुम्हारे पास अवश्य आऊँगा और इस प्रकार हम सिद्ध कर देंगे कि हमें विलग करना असम्भव है। मुझे तुम्हारी बहुत सुधि आती है। यही इस यात्रा में मेरा सम्बल है। वास्तव में तुम्हारा एक कथन और भी सत्य प्रमाणित हुआ है। तुमने चलते समय कहा था न, कि प्रेम मुझे भी कवि बना देगा। वैसा ही हुआ है। मैं भी कवि बन गया हूँ, और मुझे कवि प्रेम ने बनाया है।''

ये दोनों पत्र भेजकर अगले दिन सोमेश्वर ने भी प्रस्थान कर दिया। वाक्पति मुंज अपनी सेना के साथ पहले ही जा चुके थे। उज्जयिनी के राजमार्ग सैनिकों के चले जाने के कारण सूने-सूने लग रहे थे।

४०

अनहिलपट्टन लाट देश की राजधानी थी। यह राज्य वर्तमान सौराष्ट्र-प्रदेश में स्थित था तथा उस समय सोलंकी शासक मूलराज के अधीन था।

कान्यकुब्ज के गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य के उत्कर्ष-काल में चन्देल तथा मालव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राज्यों की ही भाँति लाट भी उसके संरक्षण में था। परन्तु प्रतिहार शक्ति के ह्रास के साथ अन्य अनेक राज्यों की भाँति वह भी स्वतंत्र हो गया था और सोलंकियों ने वहाँ अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी। ये सोलंकी दक्षिण के चालुक्यों की ही एक शाखा थे।

मूलराज इस सोलंकी राजवंश का संस्थापक था और पहला शासक होने के कारण दीर्घ-काल तक राज्य विस्तार के संघर्षों में उलझा रहा था। उसने अपने राज्य की स्थापना अपने पापोटक-वंशी मामा की छल से हत्या करके की थी। इस प्रकार एक छोटा-सा राज्य अपने अधीन करके वह उसके विस्तार में संलग्न हुआ। सबसे पहले उसने अपने परवर्ती सारस्वत-मंडल पर आक्रमण करके उसपर अपना आधिपत्य स्थापित किया। फिर और शक्ति अर्जित करके उसने वामनस्थली पर चढ़ाई की और वहाँ के राजा लक्षराज को पराजित करके उस प्रदेश को भी सोलंकी राज्य में मिला लिया। इस प्रकार धीरे-धीरे वह सम्पूर्ण गुर्जर-राष्ट्र भू-भाग का सर्वाधिक शक्तिशाली शासक बन गया था और शाकम्भरी तथा अन्य दूरस्थ प्रदेशों तक अभियान करने लगा था।

मूलराज सोलंकी शिव का अनन्य उपासक था। उसने अपने राज्य में कई कलापूर्ण शिवालयों का निर्माण कराया था। भगवान सोमनाथ के मंदिर की सम्पन्नता और ख्याति का सबसे अधिक उत्कर्ष मूलराज के शासनकाल में ही हुआ था, और इस सीमा तक हुआ था कि उसकी चर्चा गजनी में भी होती थी।

परन्तु इस समय तक वह आयु से वृद्ध, तथा पचास वर्ष से भी अधिक के निरन्तर संघर्षों के परिणामस्वरूप स्वभाव से अप्रियभाषी हो गया था। इसका परिचय सोमेश्वर को प्रथम भेंट के प्रारम्भिक क्षणों में ही मिल गया।

पहले तो उसे भेंट करने का अवसर ही बड़ी कठिनाई से प्राप्त हुआ। वह कई दिन तक नित्य प्रयत्न करता रहा, परन्तु सदा यही उत्तर मिला कि महाराज अभी बहुत व्यस्त हैं। वास्तव में, यदि एक स्थानीय राजकर्मचारी सहायता न करता तो उसे सम्भवतः कभी सफलता ही नहीं मिलती। परन्तु कई दिन तक नियमित रूप से कार्यालय जाते-जाते इस राजकर्मचारी के साथ सोमेश्वर की हलकी-सी मित्रता हो गयी थी। उसने सोमेश्वर का उद्देश्य जानकर सहायता की, और इस प्रकार सोमेश्वर अनहिलपुट्टन पहुँचने के पूरे एक सप्ताह पश्चात् एक दिन सन्ध्या समय पहली बार मूलराज के समक्ष उपस्थित हो सका।

वह अभिवादन करने के पश्चात संभल भी नहीं पाया था कि मूलराज ने बड़े रुखे स्वर में वार्तालाप आरम्भ करते हुए कहा, "तुम दूत हो? खजुराहो से आये हो?"

"हाँ, महाराज," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"हमें बताया गया है कि तुम हमारे लिए अपने महाराज का कोई संदेश लाये हो। क्या यह सत्य है?"

"सत्य है, महाराज।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूलराज ने कहा, "तो लाओ, पत्र हमें दे दो और तुम जाओ। हम पत्र पढ़कर उस पर विचार करेंगे और सुविधा के अनुसार उत्तर भेज देंगे।"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं पत्र नहीं लाया हूँ, महाराज। संदेश मौखिक है। यदि महाराज आज्ञा दें तो निवेदन करूँ।"

"संदेश है ?" मूलराज ने ऐसे स्वर में कहा मानो संदेश का मौखिक होना एक सर्वथा अनुचित, अभूतपूर्व घटना हो।

सोमेश्वर ने कहा, "हाँ, महाराज। आज्ञा हो तो निवेदन करूँ।"

"तो निवेदन क्यों नहीं करते हो ?" मूलराज ने कहा। "चलो, आरम्भ करो। परन्तु संक्षेप में ही कहना। हमारे पास अधिक समय नहीं है।"

यह व्यवहार सोमेश्वर के उत्साह को क्षीण करने के लिए पर्याप्त था। अतएव उसने यथा सम्भव संक्षिप्त विवरण देकर योजना में सम्मिलित होने का निमंत्रण प्रस्तुत किया।

विवरण सुनकर टिप्पणी करते हुए मूलराज ने कहा, "यह योजना तुम्हारे महामंत्री की होगी। है न ?"

"हाँ, महाराज।"

मूलराज ने फिर कहा, "महामंत्री प्रभास एक योग्य व्यक्ति समझे जाते हैं। परन्तु मुझे उनकी यह ख्याति सारहीन प्रतीत होती है। लगता है दार्शनिक चिन्तन करते-करते वे पूर्णतया आदर्शवादी हो गये हैं। उनकी यह योजना जितनी अव्यावहारिक है उतनी ही अनावश्यक भी है। हम सुदूर देशों के पारस्परिक विग्रह में हस्तक्षेप करने के पक्ष में नहीं हैं। यह अच्छी राजनीति नहीं है।"

सोमेश्वर ने स्वर को यथासम्भव विनम्र रखने का प्रयास करते हुए कहा, "परन्तु महाराज, दूरदर्शिता राजनीति में भी वांछनीय होती है।"

मूलराज ने कहा, "अवश्य होती है। परन्तु हम प्रस्तुत योजना में दूरदर्शिता की कहीं गंध भी नहीं पा रहे हैं। अकारण दूसरों के विग्रह में पड़ना वास्तव में शक्ति का अपव्यय है, घोर अदूरदर्शिता का कार्य है। जिसके चारों ओर अपने ही अनेक शत्रु हों उसे उनकी संख्या में अनावश्यक वृद्धि का सक्रिय प्रयास नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, तुम्हारी योजना पूर्णतया अव्यावहारिक है। भिन्न-भिन्न राज्यों से एकत्र किये गये सैनिक अपने सेनापतियों के बिना लड़ ही नहीं सकेंगे, उनमें एकता की भावना नहीं होगी।"

"इतिहास में इसके विरुद्ध प्रमाण हैं, महाराज।"

"परन्तु इतिहास की उन भूलों के परिणाम क्या हुए ? महाभारत के युद्ध में दोनों ओर से सम्मिलित सेनाओं ने भाग लिया। परन्तु उसका परिणाम क्या हुआ ? विनाश, भयंकर विनाश। हूणों के विरुद्ध चन्द्रगुप्त ने सम्मिलित सेना खड़ी की और परिणामस्वरूप स्वयं एकछत्र सम्राट् बन गया। हमें इतिहास से शिक्षा लेनी चाहिए, दूत।"

सोमेश्वर ने कहा, "महाराज का कथन सर्वथा सत्य है। परन्तु वर्तमान स्थिति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भिन्न है। इस समय तुरुष्कों का यदि सीमा पर ही अवरोध न किया गया तो शीघ्र ही देश का कोई राज्य सुरक्षित नहीं रहेगा।"

"क्यों ?" मूलराज ने पूछा।

"तुरुष्क दस्यु हैं, महाराज।"

मूलराज ने कहा, "यदि तुरुष्क दस्यु हैं तो जयपाल को उनसे आशंका होनी चाहिए, वह लड़े। तुम्हें हो सकती है, प्रतिहारों को हो सकती है, चाहमानों को हो सकती है। तुम लोग उनका अवरोध करो। हमें तुरुष्कों से कोई आशंका नहीं है। समुद्र हमारा रक्षक है, मरुस्थल हमारा रक्षक है। इन्हें पार करके हमारे राज्य तक पहुँचना दस्युओं के लिए असम्भव है। अतएव हम उनसे लड़ने क्यों जाएँ ? गत तीन सौ वर्षों से हमारे परवर्ती सिन्ध-प्रदेश में म्लेच्छों के राज्य हैं, परन्तु हमारी ओर देखने का उन्होंने कभी साहस नहीं किया है।"

सोमेश्वर के लिए अब अपनी वाणी पर नियन्त्रण रखना कठिन हो गया। उसने कहा, "महाराज यदि योजना से सहमत नहीं हैं तो उसमें सम्मिलित न हों। विवशता किसी प्रकार की नहीं है। परन्तु योजना के पीछे जिन आक्षेपपूर्ण उद्देश्यों की कल्पना की गयी है उनका मैं अपने महाराज तथा महामंत्री की ओर से दृढ़तापूर्वक खंडन करता हूँ।"

मूलराज की भृकुटी तन गयी। उसने कहा, "अपना आशय स्पष्ट करो।"

दृढ़तापूर्वक उत्तर देते हुए सोमेश्वर ने कहा "मेरा आशय स्पष्ट है। यदि महाराज हमारी योजना के उद्देश्य से सहमत नहीं हैं और उसमें सहयोग करना अपने लिए लाभकर नहीं समझते हैं, तो यह महाराज का अधिकार है। मुझे इस सम्बन्ध में केवल इतना कहना है कि योजना फिर भी कार्यान्वित होगी। मैं महाराज का सेवक हूँ। किन्तु उससे पूर्व, और उससे अधिक, मैं अपने महाराजाधिराज धंगदेव का सेवक हूँ। उनके विरुद्ध लगाये गये आक्षेपों को सुनकर संयत रहना मेरे लिए असम्भव है। अतएव अब महाराज मुझे आज्ञा दें, अन्यथा मुझसे कोई ऐसी अशिष्टता हो जाएगी जिससे महाराज को क्रोध और मुझे पश्चाताप होगा।"

मूलराज ने कहा, "नहीं, दूत। तुम अपनी पूरी बात कहो। हम रुष्ट नहीं होंगे। हाँ, बताओ, इस संघ की हमारे लिए क्या उपादेयता है ?"

सोमेश्वर ने अनुभव किया कि मूलराज के स्वर और उनकी कथन-शैली में अब पहले जैसी कर्कशता नहीं रह गयी है। इससे प्रोत्साहित होकर उसने कहा, "सर्वप्रथम मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ, महाराज, कि तत्कालीन हित के अतिरिक्त और उससे बड़ा एक दीर्घकालीन हित भी होता है जो भविष्य के गर्भ में छिपा रहने के कारण सदा स्पष्ट होकर दृष्टि में नहीं आता। मैं उस दीर्घकालीन हित की दुहाई देकर महाराज से इस प्रश्न पर पुनर्विचार करने की प्रार्थना करता हूँ।"

मूलराज ने कहा, "और स्पष्ट करो। इस योजना में हमारा कौन-सा दीर्घ-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालीन हित निहित है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "इस योजना में सम्पूर्ण भारतवर्ष का हित निहित है, महाराज। इससे आपका भी उतना ही हित-साधन होगा जितना प्रतिहारों, चाहमानों अथवा चंदेलों का। शत्रु को देश से बाहर कुचल दिया जाए तो सब सुरक्षित रहेंगे। यदि वह एक बार देश के भीतर घुस आया तो कोई सुरक्षित नहीं रहेगा।"

"परन्तु तुरुष्क हमारे शत्रु कहाँ हैं ?"

सोमेश्वर ने कहा, "महाराज का कथन सत्य है। इस समय वे आपके शत्रु नहीं हैं। हमारे भी नहीं हैं। परन्तु क्या वह कभी आपके अथवा हमारे मित्र हो सकते हैं ? नहीं, महाराज़, तुरुष्क कभी हमारे मित्र नहीं हो सकते। वे धर्मान्ध, क्रूर तथा दस्यु-वृत्ति वाले हैं। सिन्धु-प्रदेश में उन्होंने जिस प्रकार ब्राह्मणों का उन्मूलन किया वह महाराज को भी विदित होगा। मैंने अपनी आँखों से उनके अत्याचार देखे हैं। मुल्तान में जिस समय भगवान आदित्य का मंदिर लूटा तथा नष्ट किया जा रहा था तब मैं वहीं था। मेरी यह दृढ़ धारणा है, महाराज, कि ये दुष्ट यदि एक बार देश में घुस आये तो सब ओर वैसा ही होगा—कान्यकुब्ज में भी, खजुराहो में भी, और अनहिलपट्टन में भी।"

मूलराज ने उत्तेजित होकर कहा, "उस समय हमारे खड्ग क्या कुण्ठित हो जाएँगे ? हमारे वीर क्या चूड़ियां पहन लेंगे ?"

"नहीं, महाराज, यह असम्भव है। हमारे खड्ग कभी कुंठित नहीं होंगे, और न हमारे वीर कभी चूड़ियाँ पहन कर बैठेंगे। परन्तु इस कारण शत्रु को घर के भीतर घुस आने देना भी उचित नहीं है। देश की सीमा पर ही उसे अपनी वीरता का परिचय दे देना अधिक नीतिसंगत होगा। प्रस्तुत योजना का निर्माण इसी नीति के आधार पर हुआ है।"

कुछ क्षण विचार करने के पश्चात् मूलराज ने कहा, "तुम्हारे तर्क तो युक्ति-संगत प्रतीत होते हैं, दूत, परन्तु हम तत्काल अपना निर्णय देने की स्थिति में नहीं हैं। हमें प्रस्ताव पर कई दृष्टियों से विचार करना होगा।"

सोमेश्वर ने इस परिवर्तन से प्रोत्साहित होकर कहा, "महाराज अपनी सुविधा के अनुसार विचार करके ही निर्णय करें। सेवक प्रतीक्षा करेगा।"

मूलराज ने कहा, "हाँ, यह ठीक है। तुम प्रतीक्षा करो। हम इस बीच अपने सेनापति तथा मंत्रियों के साथ परामर्श करेंगे। फिर जैसा निर्णय होगा हम तुम्हें सूचित करेंगे।"

सोमेश्वर अपने डेरे पर लौट आया। प्रतीक्षा उसे वैसे भी करनी ही थी, क्योंकि खजुराहो से उसका विश्वस्त अनुचर अभी पत्रों के उत्तर लेकर नहीं लौटा था। उसे आगे क्या करना है, इस सम्बन्ध में महामंत्री के निर्देश अभी प्राप्त होने थे। उनसे भी अधिक उत्सुकता सोमेश्वर को रत्नमाला के पत्र की थी।

प्रतीक्षा का काल स्वभावतः अवकाश का समय होता है, और अवकाश के समय मनुष्य स्वभावतः अन्तर्मखी हो जाता है। सुधियाँ उसे अधिक सताने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लगती हैं, और अभाव अधिक पीड़ा देने लगते हैं। सोमेश्वर जो अन्तर्मुखी हुआ तो रत्नमाला में खो गया, क्योंकि उसकी सारी सुधियाँ रत्नमाला की थीं और उसका एकमात्र अभाव रत्नमाला का पास न होना था। रत्नमाला उसे अपने आप से बहुत दूर प्रतीत होती थी, लगता था उसे देखे न जाने कितने युग बीत चुके हैं। अभी तक उसका एक पत्र भी नहीं आया था। सोमेश्वर ने सोचा पत्र तो आएगा ही। आज नहीं तो कल अवश्य आएगा। परन्तु क्या पत्र से मन को संतोष मिलेगा? क्या पत्र कभी व्यक्ति का स्थान ले सकता है ?

४१

परन्तु सोमेश्वर को अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। मूलराज से भेंट करने के पश्चात् तीसरे ही दिन उसका अनुचर खजुराहो से पत्र लेकर आ गया। सोमेश्वर ने महामंत्री का मुद्रांकित पत्र एक ओर रखकर पहले रत्नमाला का पत्र खोला और पढ़ना आरम्भ किया। पत्र इस प्रकार था—

"मेरे आराध्य,

"आप का पत्र जिस समय मुझे प्राप्त हुआ मैं वीणा बजा रही थी। आजकल जब भी मैं अधिक उदास होती हूँ तो वीणा बजाने लगती हूँ। उसके स्वर में न जाने कौन-सा ऐसा टोना है कि बजाते-बजाते मैं सब कुछ भूल जाती हूँ। कल भी मैं बैठी वीणा बजा रही थी तभी मल्लिका ने आपका पत्र लाकर मुझे दिया। उसे पाकर मैं वीणा को भी भूल गयी। कल से आज तक उसे कितनी बार पढ़ चुकी हूँ इसकी गणना नहीं है। जब उसे पढ़ने लगती हूँ तो काल और स्थान के सारे व्यवधान अचानक अपने आप मिट जाते हैं और लगता है आप मुझसे दूर नहीं हैं, यहीं मेरे पास बैठे हैं। परन्तु कभी-कभी पत्र के अत्यधिक संक्षिप्त होने के कारण खीझ भी लगती है और मैं सोचने लगती हूँ कि पत्र इतना बड़ा क्यों नहीं है कि मैं उसे पढ़ती रहती, पढ़ती रहती, और वह कभी समाप्त न होता।

"खजुराहो में सब वैसा ही है जैसा आपके जाने के समय था, परन्तु मुझे सभी कुछ बदला-बदला लगता है। शरद ऋतु आ गयी है, और आकाश में चन्द्रमा अब भी उसी प्रकार चमकता है, परन्तु उसकी चन्द्रिका में अमृत का अंश नहीं रह गया है। पवन अब भी बहता है और शीतल भी होता है परन्तु उसमें अब मन के दाह को शान्त करने की क्षमता नहीं रह गयी है। फूल अब भी खिलते हैं, परन्तु उतने सुन्दर नहीं लगते। न जाने वसन्त में भी सुन्दर लगेंगे कि नहीं। परन्तु यह सब पढ़कर आप विचलित न हों। अपना कार्य मनोयोग के साथ करते रहें, क्योंकि राज्य का हित सदा व्यक्ति के हित से ऊपर होना चाहिए। मेरी ओर से निश्चिन्त रहें, मैं यहाँ प्रतीक्षा कर लूंगी। मैंने आपसे पहले ही कहा था कि मुझे प्रतीक्षा करना आता है। कभी-कभी ऐसा अवश्य लगने लगता है कि मेरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जीवन प्रतीक्षा करने के लिए ही बना है और इस प्रतीक्षा का अन्त मेरी मृत्यु के साथ होगा। परन्तु मन की ऐसी स्थिति कभी ही कभी होती है। जब होती है तब मैं अवश्य बहुत उदास हो जाती हूँ, अन्यथा धैर्यपूर्वक और विश्वास के साथ आपकी प्रतीक्षा कर रही हूँ, और करती रहूँगी। मेरे इस विश्वास को अब एक सुदृढ़ आधार भी मिल गया है। यह आधार मुझे ज्योतिष से प्राप्त हुआ है। अपने उस ज्योतिष से नहीं जिससे आप भी परिचित हैं। नहीं, इस बार मैंने एक सच्चे, अच्छे ज्योतिषी से गणना करायी है। और उसका फल जानते हैं क्या निकला है? ज्योतिषी जी ने कहा है कि नक्षत्र अच्छे हैं, हमारा मिलन अवश्य होगा। उसमें विलम्ब हो सकता है, परन्तु कोई उसे रोक नहीं सकता। इससे मेरे विश्वास को बड़ा बल मिला है, और मैं अब आशावादी बन गयी हूँ। इसीलिए कहती हूँ कि आपकी अथवा मेरी ओर से कर्तव्य-पालन में कहीं कोई चूक नहीं होनी चाहिए, फिर देवता स्वयं हमारी सहायता करेंगे।

"मुझे आपके चित्र से भी बड़ा बल मिलता है। मैं नित्य उसकी पूजा करती हूँ, और जब कभी मन बहुत उद्विग्न होता है तो उसी के समक्ष बैठ कर अपने भाव व्यक्त कर लेती हूँ। माता जगदम्बा के मन्दिर में भी नियमपूर्वक जाती हूँ और प्रार्थना करती हूँ। परन्तु महोत्सवनगर नहीं जा रही हूँ। अभी जाने का विचार भी नहीं है। चन्द्रिका माता से मैंने यह टेक पकड़ ली है कि अकेले उनके दर्शन करने नहीं जाऊँगी। यदि जाऊँगी तो आपके साथ, जब आप मुझे ले जाएँगे। यदि माता अपनी दासी की टेक रखेंगी तो मैं भी दर्शन करने जाऊँगी। अन्यथा कभी नहीं जाऊँगी, कभी नहीं जाऊँगी, कभी नहीं जाऊँगी, माता रुष्ट भले ही हो जाएं।

"अपने देवता से मेरी एक ही प्रार्थना है। मुझे ज्ञात है कि लौटना आपके वश की बात नहीं है, अतएव इस सम्बन्ध में मुझे कुछ नहीं कहना है। जब मेरे भाग्य में लिखा होगा तब फिर आपके दर्शन प्राप्त होंगे। प्रार्थना केवल इतनी है कि इस बीच मुझे बिसरा न दें। आप के मन में रहूँ तो मैं अनन्त काल तक प्रतीक्षा कर सकती हूँ। परन्तु शकुन्तला बनकर जीवित रहना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा। आप चाहें जहाँ रहें, चाहें जब लौटें, परन्तु यह कभी न भूलें कि मैं आपकी हूँ और आपके लिए जी रही हूँ। यही मेरी प्रार्थना है।

एक समाचार और है। परन्तु उसके लिए आपको प्रतीक्षा करनी होगी। बताने को तो अभी, इस पत्र में भी बता सकती हूँ। परन्तु बताऊँगी नहीं। मेरा भी तो कोई रहस्य रहे। जब लौटकर आएँगे तभी बताऊँगी। और आपको भी तो ज्योतिष आता है। जान सकें तो स्वयं जान लीजिये। परन्तु यदि न जान सकें तो भी पत्र का उत्तर अवश्य दें, और मेरा यह पत्र पाते ही, तुरन्त दें। उत्तर की प्रतीक्षा मैं अनन्त काल तक नहीं कर सकूँगी। और जैसे मैंने पत्र लिखा है वैसे ही आप भी विस्तार के साथ उत्तर लिखें।"

सोमेश्वर ने इस पत्र को तीन बार पढ़ा, और पढ़ते-पढ़ते उसका मन उड़कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खजुराहो जा पहुँचा। पत्र के छोटे-छोटे, मोती जैसे अक्षरों के नीचे से उभर कर रत्नमाला सहसा उसके सामने आ खड़ी हुई। उसने अपनी आंखे भींच लीं और सुधियों के सागर में डूबने-उतराने लगा। परन्तु उसे इस प्रकार बैठे अधिक समय नहीं हुआ था कि उसके एक अनुचर ने आकर उसे इस मधुर स्वप्न से जगा दिया। वह समाचार लाया था कि एक राजकर्मचारी बाहर खड़ा है और उससे मिलना चाहता है। सोमेश्वर ने झुँझलाकर उसे भीतर लाने की आज्ञा दी। राजकर्मचारी यह सूचना लेकर आया था कि महाराज मूलराज ने खजुराहो के राजदूत को तुरन्त स्मरण किया है।

जब वह यह सूचना देकर चला गया तब सोमेश्वर ने महामंत्री का पत्र खोला। यह अपेक्षाकृत बहुत संक्षिप्त था। महामंत्री ने लिखा था—"उज्जयिनी के तुम्हारे अनुभव से मैं असंतुष्ट नहीं हूँ। वास्तव में इससे अधिक मुझे आशा भी नहीं थी। अब अनहिलपट्टन के समाचार तुरन्त मुझे भेजकर तुम शाकम्भरी के लिए प्रस्थान करो। यदि अनहिलपट्टन का कार्य पूरा न हुआ हो तो भी उसे अधूरा छोड़कर तुरन्त प्रस्थान कर दो, क्योंकि हमारे पास अब अधिक समय नहीं रह गया है। शाकम्भरी में तुम्हारा एक परिचित व्यक्ति प्रतीक्षा कर रहा है। उससे तुम्हें स्थिति का विस्तृत विवरण प्राप्त होगा। वही तुम्हें चाहमान दुर्लभ-राज के लिए पत्र और तुम्हारे आगे के आर्यक्रम के सम्बन्ध में मेरे निर्देश भी देगा। यदि और कुछ विशेष हुआ तो मैं फिर पत्र द्वारा सूचित करूँगा।"

पत्र पढ़कर सोमेश्वर कुछ क्षण वहीं बैठा कुछ सोचता रहा। परन्तु इसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ। सोचते-सोचते उसके विचार कुछ उलझ-से गये और उसका मस्तिष्क दिग्भ्रान्त होने लगा। तब उसने सिर झटक कर उन्हें व्यवस्थित करने का प्रयास किया, और फिर उठकर सोलंकी-नरेश से भेंट करने के लिए चल दिया।

४२

सोमेश्वर ने इस बार मूलराज को पहले की अपेक्षा अधिक प्रसन्न पाया। इससे प्रोत्साहित होकर उसने यथोचित अभिवादन करते हुए कहा, "महाराज ने स्मरण किया था, सेवक उपस्थित है।"

मूलराज ने कहा, "तुम्हारा नाम क्या है, दूत?"

"सेवक को सोमेश्वर कह कर पुकारा जाता है, महाराज।"

मूलराज ने कहा, "सोमेश्वर! अच्छा नाम है। भगवान सोमनाथ हमारे इष्टदेव हैं। क्या तुम्हारे पिता शैव हैं?"

"हाँ, महाराज। परन्तु मेरा नामकरण स्वयं महाराजाधिराज धंगदेव ने किया था। वे भी आपकी ही भाँति परम शैव हैं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हाँ, ऐसा मैंने भी सुना है। क्या तुम्हारे महाराज भी भगवान सोमनाथ को आराध्य-देव मानते हैं ?"

सोमेश्वर ने कहा, "हमारे महाराज भगवान शिव को आराध्य देव मानते हैं। कालंजर में होते हैं तो नीलकंठेश्वर भगवान को विल्वपत्र अर्पित करते हैं, खजुराहो में रहते हैं तो बाबा विश्वनाथ की आराधना करते हैं, और यदि यहाँ आ जाएँ तो भगवान सोमनाथ की पूजा करेंगे।"

मूलराज ने कहा, "उनकी यह उदारता अनुकरणीय है। परन्तु खजुराहो में रहकर वे बाबा विश्वनाथ की आराधना कैसे करते हैं ? भगवान विश्वनाथ की स्थापना तो काशी में है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "हमारे महाराज ने खजुराहो में भी विश्वनाथ बाबा की स्थापना करायी है, देव। खजुराहो का शिवालय भी वैसा ही भव्य है जैसा काशी का, और हमारे महाराज उसी में आराधना करते हैं।"

मूलराज ने कहा, "हमने सुना है खजुराहो में अन्य अनेक देवालयों का भी निर्माण हुआ है ?"

"यह सत्य है, महाराज। खजुराहो में पचास से भी अधिक देवालय हैं, और सभी एक से एक बढ़कर सुन्दर हैं।"

"सभी भगवान शंकर के हैं ?" मूलराज ने पूछा।

"नहीं, महाराज, सब शिवालय नहीं हैं। खजुराहो में सब सम्प्रदायों के देवालय हैं। शैव भी हैं, वैष्णव भी हैं, शाक्त भी हैं। हमारे यहाँ पंचायतन पूजा का अधिक प्रचार है। जैन-मन्दिर भी हैं।"

"बौद्धों का कोई विहार भी है ?"

"हाँ, महाराज, है। परन्तु उसकी दशा अच्छी नहीं है। बौद्धों से घृणा करना हमारे यहाँ आवश्यक नहीं समझा जाता। उनके धर्म में, और उससे भी अधिक उनके धार्मिक संगठन में ही उनके पतन के कारण निहित हैं। अतएव राज्य की ओर से उन्हें पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। परन्तु प्रजा उनका समर्थन नहीं करती, इसलिए उनकी दशा अच्छा नहीं है।"

सोमेश्वर मूलराज के प्रश्नों के उत्तर देता जा रहा था, परन्तु उसके अपने मस्तिष्क में एक प्रश्न था जिसका उत्तर वह नहीं खोज पा रहा था, और वह प्रश्न यह था कि मूलराज ने क्या यही सब पूछने के लिए उसे इस समय बुलाया है ?

सहसा उसे इस प्रश्न का उत्तर स्वयं मूलराज की ओर से मिला। सोलंकी-नरेश ने कहा, "हमने तुम्हारे प्रस्ताव पर विचार कर लिया है।"

सोमेश्वर कुछ क्षण इस आशा में मौन बैठा रहा कि अभी कुछ और सुनने को मिलेगा, परन्तु अन्त में मूलराज को भी मौन बैठे देखकर उसने पूछा, "क्या निर्णय किया है, महाराज ?"

मूलराज ने कहा, "निर्णय ? निर्णय अभी कुछ नहीं किया है। निर्णय तो पूर्णतया आश्वस्त होकर ही किया जा सकेगा। उसमें समय लगेगा। परन्तु योजना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अच्छी है। हम उसका समर्थन करते हैं।"

सोमेश्वर ने उत्साहहीन स्वर में कहा, "तब तो योजना की सफलता भी सुनिश्चित है, महाराज।"

"हाँ, योजना को सफल होना ही चाहिए! हम भी समझते हैं कि उसकी सफलता सुनिश्चित है। परन्तु हम अपना सेना भेज सकेंगे अथवा नहीं, यह अभी सुनिश्चित नहीं है। इस सम्बन्ध में कोई निर्णय करने से पूर्व हम जानना चाहेंगे कि चन्देल सेना के अतिरिक्त किन-किन राज्यों के सैनिक इस अभियान में सम्मिलित होंगे। बता सकोगे ? कौन-कौन राज्य वचन दे चुके हैं ?"

सोमेश्वर ने कहा, "यह अभी पूर्णतया निश्चित नहीं है, महाराज। परन्तु प्रतिहार सेना निश्चित रूप से होगी। सरयूपार की भी होगी, और श्रीपुर की यादव सेना भी अवश्य होगी। सम्भवतः शाकम्भरी की चाहमान सेना भी होगी।"

"तुम शाकम्भरी हो आये हो क्या ?" मूलराज ने पूछा।

"अभी तो नहीं गया हूँ, महाराज," सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "परन्तु शाकम्भरी के साथ हमारा पूर्व-सम्पर्क है। महाराज दुर्लभराज अवश्य सहायक होंगे, इसका हमें विश्वास है।"

"और परमार ? मुंज की क्या स्थिति है ?"

सोमेश्वर ने कहा, "मैं उज्जयिनी होकर यहाँ आया हूँ, महाराज। वाक्पति मुंज योजना के उद्देश्यों से पूर्णतया सहमत हैं। परन्तु वे इस समय सेना भेजने की स्थिति में नहीं हैं। मैं जब उज्जयिनी से चला था तब वह ससैन्य कुँतल-नरेश तैलप के विरुद्ध प्रस्थान कर चुके थे। परन्तु उन्होंने हमें आश्वासन दिया है कि तैलप को परास्त करने के पश्चात्, यदि आवश्यकता हुई तो, मालव सेना हमारे अभियान में सम्मिलित होगी।"

मूलराज ने कहा, "तुम्हें इस आश्वासन पर विश्वास है ?"

"हाँ, महाराज।"

"परन्तु हमें नहीं है। हमें मुंज के विश्वासघात का अनुभव है। वह आश्वासन दे देगा, परन्तु सेना कभी नहीं भेजेगा। और यदि वह नहीं भेजेगा तो हम भी नहीं भेज सकेंगे, क्योंकि हमें उसकी ओर से आशंका है। उसकी सेना एक बार अनहिलपट्टन को त्रस्त कर चुकी है, हम उसे फिर ऐसा करने का अवसर कदापि नहीं देंगे। यही हमारा निर्णय समझ लो। हम योजना का समर्थन करते हैं। परन्तु उसकी सफलता के लिए हम अपनी सुरक्षा के प्रति असावधान नहीं हो सकते। यदि उज्जयिनी की सेना अभियान में सम्मिलित हो तो हमें सूचित करना, उतनी ही हमारी सेना भी तुरन्त प्रस्थान कर देगी। अन्यथा वह अनहिलपट्टन की सुरक्षा के लिए यहीं रहेगी। यह सूचना तुम अपने महाराज को भेज सकते हो।"

सोमेश्वर ने कहा, "महाराज यदि उचित समझें तो एक पत्र···"

"मिल जाएगा। संध्या तक पत्र भी मिल जाएगा। और कुछ ? तुम्हें हमारी राजधानी में कोई कष्ट तो नहीं है ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"नहीं, महाराज, मुझे कोई कष्ट नहीं है।"

"तो अब तुम जा सकते हो।"

सोमेश्वर लौटकर अपने डेरे पर आया। उस समय वह बहुत प्रसन्न था। वास्तव में उसने अनहिलपट्टन में आकर कभी इतनी आशा भी नहीं की थी। मूलराज के साथ पहली भेंट के पश्चात् उसका सारा उत्साह समाप्त हो गया था। परन्तु आज की भेंट के परिणामस्वरूप उसकी निराशा कम हो गयी थी।

डेरे पर आकर उसने सबसे पहले महामंत्री के लिए दोनों भेंट वार्ताओं का विवरण लिखा। उसके अन्त में, अपनी धारणा व्यक्त करते हुए उसने लिखा—"मैं जहाँ भी गया हूँ वहाँ सभी को योजना के उद्देश्यों से पूर्णतया सहमत पाया है। परन्तु सक्रिय सहायता का प्रश्न आते ही लोग चुप हो जाते हैं, अथवा उलटे-सीधे तर्क खोजने लगते हैं। इसका कारण पारस्परिक विद्वेष और विग्रह है। सब एक दूसरे पर संदेह करते हैं, सब एक-दूसरे से भयभीत हैं। यह भय ही हमारी सफलता के मार्ग में सबसे बड़ा अवरोध है।"

यह विवरण समाप्त करके उसने रत्नमाला का पत्र निकाला और उसे एक बार फिर पढ़ा। तत्पश्चात् उसने उत्तर लिखना आरम्भ किया। इस बार उसने अपना उत्तर रत्नमाला की ही शैली में, सविस्तार लिखा। जब उत्तर रत्नमाला के पत्र से अधिक विस्तृत हो गया तब उसे समाप्त करते हुए उसने लिखा—

"मेरी दशा का अनुमान सम्भवतः तुम भी नहीं लगा सकोगी। तुम्हें यह सान्त्वना तो है कि तुम अपने कारण मुझसे दूर नहीं हो। परन्तु मुझे इतना संतोष भी नहीं है, क्योंकि मैं स्वयं तुमसे दूर होने का कारण हूँ। मैं अपने से विवश, पवन-सा एकाकी दिशाओं में भटकता फिर रहा हूँ। मैं एक भरा बादल हूँ जो आकाश में अकेला, भ्रमित-सा डोलता फिरता है परन्तु कभी, कहीं बरस कर हलका नहीं हो पाता। तुम्हारे पास चित्र तो है जिससे तुम क्षण भर के लिए संतोष प्राप्त कर लेती होगी। परन्तु मेरे पास अभी तक ऐसा कुछ भी नहीं था। अब तुम्हारा यह पत्र अवश्य हो गया है। इसीको हृदय से लगाकर सान्त्वना प्राप्त करने का प्रयास किया करूँगा। और हाँ, तुमने भुला देने की बात क्यों लिखी? क्या तुम समझती हो कि तुम्हें भुला देना अब मेरे वश की बात है? मैं सोते-जागते प्रति क्षण तुम्हारे सपने देखा करता हूँ और तुम्हारी सुधियों में खोया रहता हूँ, और तब तक इसी प्रकार खोया रहूँगा जब तक तुम्हारे ज्योतिषी की गणना सत्य नहीं सिद्ध हो जाती। वह सत्य अवश्य सिद्ध होगी, मेरा मन भी ऐसा ही कहता है।"

अगले दिन प्रातःकाल अपने विश्वस्त अनुचर को आवश्यक निर्देश देकर तथा खजुराहो भेजकर सोमेश्वर ने भी शाकम्भरी के लिए प्रस्थान किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शाकम्भरी पहुँचकर सोमेश्वर ने सबसे पहले अपने ठहरने की व्यवस्था की। परन्तु इसके पश्चात् उसके पास कुछ करने को ही नहीं रह गया। जिस 'परिचित व्यक्ति' के सम्बन्ध में महामंत्री ने लिखा था वह अभी नहीं मिला था। सोमेश्वर यह भी नहीं जानता था कि वह व्यक्ति कौन है और उससे कब, कहाँ और कैसे भेंट होगी। महामंत्री के पत्र में स्पष्ट लिखा था कि सोमेश्वर को उस व्यक्ति से ही महाराज दुर्लभराज के लिए पत्र भी प्राप्त होगा, जिसका अर्थ यह था कि उससे मिले बिना महाराज के दर्शन का प्रश्न ही नहीं उठता था। अतएव अपनी वर्तमान स्थिति में सोमेश्वर के पास विश्राम और प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं था।

परन्तु युवावस्था में विश्राम की भी कोई सीमा होती है, और प्रतीक्षा करते-करते मन ऊब जाता है। शाकम्भरी पहुँचने के दूसरे दिन संध्या समय अपने आप को इसी स्थिति में पाकर सोमेश्वर निरुद्देश्य नगर-भ्रमण के लिए निकल पड़ा और नगर के मुख्य मार्ग पर चलता हुआ हाट में आ पहुँचा। वहाँ उस समय बड़ी चहल-पहल थी। घूमते-घूमते सहसा सोमेश्वर के मस्तिष्क में एक विचार आया, जिसे कार्यान्वित करते हुए उसने बड़ी रुचि से छाँटकर एक रत्नजटित कंठहार क्रय किया।

कंठहार लेकर वह अपने डेरे की ओर लौट चला। परन्तु मार्ग में एक स्थान पर एक छोटी-सी भीड़ देखकर कौतूहलवश वह भी वहाँ खड़ा हो गया। भीड़ में पन्द्रह-वीस से अधिक व्यक्ति नहीं थे, और सब के सब पुरुष थे। वे एक संन्यासी को घेर कर खड़े थे जो उन्हें सम्बोधित कर रहा था। सोमेश्वर ने उसे तुरन्त पहचान लिया। वह शिवानंद था। सोमेश्वर ने तुरन्त यह भी समझ लिया कि महामंत्री का 'परिचित व्यक्ति' वही होगा।

शिवानंद कह रहा था, "राज्य अनेक हैं, परन्तु देश तो एक ही है। हाँ, सुवास्तु से लौहित्य तक फैला भारत देश एक ही है। उत्तर में कश्मीर से दक्षिण में कन्याकुमारी तक पाणिनी की अष्टाध्यायी तथा पतंजलि के महाभाष्य का साम्राज्य है और कालिदास की कृतियों तथा पंचतंत्र की कथाओं का समान आदर होता है। आज भी काशी तथा तक्षशिला, कांची तथा उज्जयिनी में चारों दिशाओं से आकर विद्या-व्यसनी एकत्र होने हैं। इसी देश की धरती ने हमें जन्म दिया है, यही हमारा पोषण करती है। यह हमारी माता है। हम सब इसकी संतान हैं, और इस कारण भाई-भाई हैं। हमाये नाम भिन्न हैं, हमारी जातियाँ भिन्न हैं, हमारी रीतियाँ भी भिन्न हो सकती हैं, परन्तु हमारा राष्ट्र एक है और हमारा राष्ट्रीय इतिहास एक है। हम परस्पर विग्रह करते हैं, फिर भी हम भाई-भाई हैं और हमारा विग्रह भाइयों का विग्रह है। विदेशियों और विधर्मियों के विरुद्ध हम सब एक हैं और अपनी धरती पर, जो हमारी माता है, कोई काली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छाया नहीं पड़ने देंगे। मैं देश भर में यही संदेश प्रसारित करता घूम रहा हूँ। आज पश्चिमोत्तर में तुरुष्कों ने हमारे देश पर कुदृष्टि डाली है। अतएव हमारा कर्तव्य है कि हम सब परस्पर के विग्रह को बिसरा कर शत्रु को बतादें कि हम सब एक हैं और दुष्ट को उसकी दुष्टता के लिए दण्डित करना जानते हैं।"

सहसा उसकी दृष्टि भीड़ में खड़े हुए सोमेश्वर पर पड़ी। क्षण भर के लिए उसकी आँखों में एक चमक आयी जिसका अर्थ यह था कि उसने भी सोमेश्वर को पहचान लिया है।

वह कहता गया, "मैं भविष्य को देख रहा हूँ। तुम लोग नहीं देख सकते, परन्तु में स्पष्ट देख रहा हूँ। तुरुष्क अपने उद्देश्य में कभी सफल नहीं हो सकेंगे। हमारी सम्मिलित शक्ति उन्हें देश के भीतर नहीं घुसने देगी। हम स्वतंत्र हैं और भविष्य में भी स्वतंत्र रहेंगे। सर्वजन ध्यान से सुनें। मैं त्रिकालदर्शी हूँ। काल के गर्भ में छिपे रहस्य भी मेरे लिए रहस्य नहीं हैं। और मैं तुमसे कह रहा हूँ कि तुरुष्क पराजित होंगे।"

फिर सोमेश्वर को सम्बोधित करते हुए उसने कहा, "वत्स, मैं तुम्हारे मुख पर अविश्वास की छाया देख रहा हूं। यह पाप है, इसे दूर करो। तुम शाकम्भरी के नागरिक नहीं हो न ? मैं स्पष्ट देख रहा हूं। तुम परदेशी हो और शाकम्भरी में नये आये हो। बोलो, क्या यह सत्य नहीं है ?"

संकेत समझकर सोमेश्वर ने कहा, "यह सत्य है, महाराज।"

शिवानंद ने फिर कहा, "और बताऊँ ? तुम खजुराहो के निवासी हो। हो कि नहीं ?"

"हाँ, महाराज।"

"परन्तु इस समय तुम अनहिलपट्टन से आ रहे हो। सत्य है न ?"

"सत्य है, महाराज।"

"और बताऊं ? तुम्हारा नाम सोमेश्वर है ?"

"हाँ, महाराज।"

शिवानंद ने कहा, "तुम्हारे पिता का नाम बताऊं ?"

सोमेश्वर ने हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कहा, "अब मुझे संदेह नहीं रह गया, महाराज। आप जो कहते हैं सब सत्य होगा।"

शिवानंद ने उसकी बात अनसुनी करते हुए फिर कहा, "मैं यह भी बता सकता हूँ कि तुम किस कार्य से शाकम्भरी आये हो और उसे करने के पश्चात् कहाँ जाओगे। बताऊँ ?"

सोमेश्वर ने फिर हाथ जोड़कर कहा, "मैं क्षमा-याचना करता हूँ, महाराज। अब मुझे तनिक भी संदेह नहीं रह गया है। परन्तु मैं अपने भविष्य के सम्बन्ध में बहुत उत्सुक हूँ। यदि आप अपना स्थान बताने की कृपा करें तो प्रातःकाल दर्शन के लिए उपस्थित होना चाहता हूँ।"

"साधु-संन्यासियों का भी कहीं स्थान होता है, वत्स ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"फिर मुझे आपके दर्शन कहाँ प्राप्त होंगे, महाराज ? मैं अपने भविष्य के लिए बहुत उत्सुक हूँ।"

शिवानंद ने कहा, "यदि तुम इतने उत्सुक हो तो चलो, मैं अभी तुम्हारे साथ चल रहा हूँ।"

और यह कहकर वह विस्मित भीड़ से बाहर आ गया और एक ओर को चल दिया। सोमेश्वर ने भी चुपचाप उसका अनुसरण किया। कुछ समय पश्चात् मार्ग में एकान्त पाकर वह खड़ा हो गया और सोमेश्वर से बोला, "अब आप अपने डेरे की ओर चलें। वहाँ बातें होंगी।"

डेरे पर पहुँचकर दोनों भीतरी कक्ष में जा बैठे। तब शिवानंद ने कहा, "मैं कई दिन से आपकी प्रतीक्षा कर रहा था। यहाँ मैंने सब ठीक कर लिया है। महाराज दुर्लभराज से भी मिल चुका हूँ। वे सक्रिय सहयोग देंगे। आप केवल यह पत्र लेकर एक बार उनसे मिल लें।" और उसने अपने वस्त्र के भीतर से निकाल कर एक पत्र सोमेश्वर के सामने कर दिया।

सोमेश्वर ने पत्र लेते हुए पूछा, "अब स्थिति कैसी है ?"

शिवानंद ने कहा, "स्थिति शीघ्रता से कठिन होती जा रही है। गजनी के युद्ध में राजा जयपाल की पराजय हुई है और तुरुष्कों ने आगे बढ़कर शाही राज्य के कुछ भागों पर अधिकार कर लिया है। लमगान नगर इस समय उनके हाथों में है। राजा जयपाल ने भागकर पुष्पपुर में शरण ली है और वहाँ से फिर युद्ध के लिए सैन्य-संग्रह कर रहे हैं। परन्तु अब उनके लिए अकेले तुरुष्कों पर विजय पाना असम्भव हो गया है।"

"फिर ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"उनकी सहायता के लिए संघ-राज्यों की सेना खजुराहो में एकत्र हो रही है, और सम्भव है इस समय तक प्रस्थान भी कर चुकी हो। यदि नहीं किया है तो शीघ्र ही कर देगी। आपको महाराज दुर्लभराज से कहना होगा कि शाकम्भरी की सेना यहाँ से सीधे पुष्पपुर भेजी जाए।"

"संघ सेना का सेनापतित्व कौन करेगा ?"

"स्वयं राजा जयपाल। इस प्रश्न पर संघ राज्यों में मतभेद की सम्भावना थी, इसलिए ऐसा किया गया है।"

सोमेश्वर ने पूछा, "और मेरा आगे का कार्यक्रम क्या है ?"

"आपको यहाँ से पुष्पपुर जाना है। वहाँ आप संघ राज्यों का प्रतिनिधित्व करेंगे।"

"परन्तु वहाँ मुझे करना क्या होगा ?"

शिवानंद ने उत्तर दिया, "जो भी आवश्यक तथा उचित हो। महामंत्री ने कहा है कि इसका निर्णय आपको स्वयं करना होगा। राजा जयपाल आपके परामर्श से कार्य करेंगे, और आप देश तथा संघ-राज्यों के हितों की रक्षा करते हुए उन्हें परामर्श देंगे।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"और तुम ? खजुराहो लौट जाओगे ?"

नहीं, मुझे अभी खजुराहो नहीं लौटना है। परन्तु कहाँ जाना है, यह मैं स्वयं नहीं जानता। आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

"शाकम्भरी में कितना कार्य शेष है ?"

"यहाँ का मेरा कार्य पूरा हो चुका है। आदेश प्राप्त होते ही यहाँ से प्रस्थान कर दूँगा। आपको भी विलम्ब नहीं करना चाहिए।"

"नहीं। मैं भी कार्य पूरा करके शीघ्र ही चल दूँगा।"

"तो मुझे अब आज्ञा दें।" यह कहता हुआ शिवानंद उठ खड़ा हुआ।

सोमेश्वर ने हँसते हुए कहा, "इस समय महाराज प्रसाद ग्रहण किये विना यहाँ से नहीं जा सकेंगे। मैं साधु-संन्यासियों के अनादर का पाप अपने सिर नहीं लूँगा।"

शिवानंद हँसता हुआ फिर बैठ गया और बोला, "मैं भी अन्न का अनादर नहीं करूँगा।"

भोजन करने के पश्चात् शिवानंद चला गया।

सोमेश्वर ने अगले दिन महाराज दुर्लभराज से भेंट की। वे मानो योजना में सम्मिलित होने के लिए कटिबद्ध सोमेश्वर की प्रतीक्षा ही कर रहे थे। उन्होंने अधिक प्रश्न भी नहीं पूछे क्योंकि शिवानंद पहले ही उन्हें स्थिति से अवगत करा चुका था। इस प्रकार सोमेश्वर द्वारा प्रस्तुत निमंत्रण स्वीकार कर लिया गया और शीघ्र ही यह भी निश्चित हो गया कि एक सप्ताह के भीतर चाहमान सेना पुष्पपुर के लिए प्रस्थान कर देगी।

यह कार्य पूरा होने के पश्चात् सोमेश्वर के पास शाकम्भरी में कुछ करने को शेष नहीं रह गया। परन्तु उसे अभी प्रतीक्षा करनी ही थी। खजुराहो से उसका विश्वस्त अनुचर अभी पत्र लेकर नहीं आया था। महामंत्री के पत्र की उसे प्रतीक्षा नहीं थी। उनके निर्देश शिवानंद के माध्यम से प्राप्त हो ही चुके थे। परन्तु रत्न-माला के पत्र की वह बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रहा था। उसने निश्चय कर लिया था कि अपने अनुचर के आने तक वह शाकम्भरी में ही रहेगा।

रत्नमाला की सुधि उसे अब भी बहुत आती थी, और अवकाश अथवा प्रतीक्षा के समय में उसकी आँखें अब भी सपनों से भरी रहती थीं। परन्तु इन सुधियों तथा स्वप्नों के परिणामस्वरूप उसका मन अब पहले जितना उद्विग्न नहीं होता था। उसका मन मानो एक सागर था जो पूर्णिमा के ज्वार के पश्चात् अब शान्त और सुस्थिर हो गया था। उसकी गहराई में कोई अन्तर नहीं आया था, परन्तु उफान कम हो गया था, कामना की लहरों का उद्दाम नर्तन थम गया था।

इस मनःस्थिति में पुष्पपुर जाने का आदेश पाकर वह विशेष प्रसन्न हुआ था। पुष्पपुर जाने का अर्थ यह था कि उसे अब और कहीं नहीं जाना होगा। उसकी यात्रा का अन्त अब निकट आ गया था। सेनाएँ एकत्र हो रही थीं तो युद्ध भी शीघ्र ही अवश्यम्भावी था। उस युद्ध में कौन विजयी होगा और किसकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
पराजय होगी, इसका सोमेश्वर की दृष्टि में अधिक महत्व नहीं था। होना चाहिए था, परन्तु न जाने क्यों वह युद्ध के परिणाम तक सोच नहीं पाता था। उसके लिए युद्ध का होना महत्वपूर्ण था, क्योंकि अब उसके तथा रत्नमाला के बीच केवल यही एक व्यवधान रह गया था। युद्ध हो जाए, बस, फिर उसे लौटकर खजुराहो पहुँचना ही था जहाँ रत्नमाला उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी। यह एक स्वप्न वह बार-बार देखा करता था।

परन्तु उसका यह मधुर स्वप्न शीघ्र ही भंग हो गया। उसका विश्वस्त चर खजुराहो से पत्र लेकर आ गया। किन्तु वह केवल एक पत्र लाया था, और वह महामंत्री का था। रत्नमाला का पत्र उसे नहीं मिल सका था। रत्नमाला से उसकी भेंट ही नहीं हो सकी थीं। वह खजुराहो में नहीं थी। उसके आवास पर भी कोई व्यक्ति नहीं मिला था जिससे यह ज्ञात होता कि वह कहाँ गयी है और कब तक लौटेगी।

यह समाचार पाकर सोमेश्वर का मन अत्यधिक क्षुब्ध हो गया। उसके मस्तिष्क में अनेक आशंकायें उठने लगीं। रत्नमाला की अनेक बातें उसे एक साथ स्मरण हो आयीं और उनके अर्थ सहसा स्पष्ट होने लगे। उसका मस्तिष्क कभी अपने पिता की ओर जाता था तो कभी महामंत्री की ओर, और कभी वह कान्य-कुब्ज के युवराज के सम्बन्ध में सोचने लगता था जो पहले भी रत्नमाला के अपहरण का प्रयत्न कर चुके थे। परन्तु वह किसी निश्चय पर नहीं पहुँच पाता था, और उसका मन चारों ओर भटक कर फिर केन्द्र पर लौट आता था। रत्नमाला कहाँ होगी? किस स्थिति में होगी? होगी भी अथवा······? यह सोचकर उसका हृदय, उसका सारा शरीर, काँप उठता था।

सहसा एक नया विचार उसके मस्तिष्क में आया और उसने महामंत्री का पत्र इस आशा से खोला कि सम्भव है उसमें ही कोई सूत्र मिले। परन्तु उसकी यह आशा फलीभूत नहीं हुई। महामंत्री का पत्र अत्यन्त संक्षिप्त और पूर्णतया उसके कार्य से सम्बन्धित था। उसमें लिखा था—"तुम्हें वर्तमान स्थिति तथा कार्यक्रम के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त ही हो गयी होगी। स्थिति में इस बीच कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। परन्तु तुम्हारे कार्यक्रम में थोड़ा-सा होना है। अब तुम शाकम्भरी से मुल्तान होते हुए पुष्पपुर जाओगे। मुल्तान के अमीर ने जयपाल की सहायता का वचन दिया है। तुम्हें अमीर से मिलकर इस सम्बन्ध में वार्तालाप करना है। अपनी धारणा मुझे लिखनी है।"

पत्र पढ़कर उसने एक ओर रख दिया और फिर रत्नमाला के सम्बन्ध में सोचना आरम्भ किया। सोचते-सोचते उसे आशा की एक नयी किरण मिली। रत्नमाला जहाँ भी गयी है अपने सब दास-दासियों को साथ लेकर गयी है। इससे यह स्पष्ट था कि वह स्वेच्छा से ही किसी योजना के अनुसार गयी होगी और जीवित तथा सुरक्षित होगी। यह विचार मन में आते ही दृढ़ हो गया और सोमेश्वर बरस चुके बादल-सा हलका अनुभव करने लगा। परन्तु चिन्ता का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थान शीघ्र ही क्रोध ने ले लिया। यदि रत्नमाला को कहीं जाना ही था तो क्या उसे सूचना देकर नहीं जा सकती थी?

उसने तुरन्त एक और पत्र लिखा—"आशा है अब तक तुम लौटकर आ गयी होगी। तुम कहाँ गयी थीं, इससे मुझे प्रयोजन नहीं है। परन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि मुझे सूचित करके जाना चाहिए था। मैं स्वीकार करता हूँ कि तुम्हें कहीं भी जाने का अधिकार है। परन्तु मेरा भी कुछ अधिकार है, जिसके अन्तर्गत मैं तुमसे रुष्ट हूँ। अब मैं तुम्हें कोई पत्र नहीं लिखूंगा। पहला पत्र तुम्हारा हो चुका है, इसलिए उसे फिर इसके साथ भेज रहा हूँ।"

फिर वह ये दोनों पत्र तथा महामंत्री के लिए पहले से लिखा हुआ विवरण अनुचर को सौंपकर स्वयं यात्रा की व्यवस्था में व्यस्त हो गया।

४४

मुल्तान उस समय भारत-भूमि पर मुसलमान सत्ता का महत्वपूर्ण केन्द्र था।

भारत पर अरबी मुसलमानों के आक्रमण वस्तुतः सातवीं शताब्दी में ही आरम्भ हो गये थे। सर्वप्रथम ये आक्रमण अरबी जल-दस्युओं द्वारा किये गये थे और पश्चिमी तट पर स्थित भृगुकच्छ तथा अन्य समृद्ध नगर इनके मुख्य लक्ष्य थे। तदनन्तर आठवीं शती के आरम्भ में मुहम्मद बिन कासिम की सेना ने स्थल-मार्ग से आक्रमण किया और प्राचीन सिन्धु-सौवीर प्रदेश के कई भागों पर अधिकार कर लिया। शीघ्र ही उन्होंने मुल्तान, अलोर, बहमनाबाद आदि कई स्थानों में अपने सुदृढ़ सैनिक केन्द्र स्थापित कर लिये जहाँ से अधिकृत भू-भागों पर अपना शासन चलाते थे। इन्हें स्वभावतः प्रजा का समर्थन प्राप्त नहीं था और बहुधा विद्रोहों का सामना करना पड़ता था। परन्तु अपनी सैनिक शक्ति और अत्याचारों के कारण ये बहुत दिनों तक अपनी सत्ता बनाये रहे। मुल्तान इनका मुख्य केन्द्र था जहाँ से ये आस-पास के अन्य राज्यों पर भी आक्रमण करते थे। लाट के चालुक्य पुलकेशिन् ने इन्हें परास्त किया था, अपने चरम उत्कर्ष के काल में कान्यकुब्ज का गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य भी इनके विरुद्ध सक्रिय रहा था। परन्तु इनका उन्मूलन करने में कोई सफल नहीं हुआ था।

परन्तु इन अरबी मुसलमानों के साथ न्याय करते हुए यह कह देना आवश्यक है कि ये विधर्मी होते हुए भी धर्मान्ध नहीं थे। इन्होंने यथासम्भव भागवत तथा बौद्ध धर्म-स्थानों को नष्ट अथवा भ्रष्ट नहीं किया। भारत में आकर इन्होंने भारतीय वेश-भूषा ग्रहण की तथा भारतीय स्त्रियों के साथ विवाह किये।

परन्तु दसवीं शती के उत्तरार्द्ध में इस क्षेत्र पर जिन इस्माइली मुसलमानों का शासन स्थापित हुआ वे इतने सहिष्णु नहीं थे। उन्होंने आते ही मुल्तान में स्थित भगवान आदित्य का लोक-विश्रुत मन्दिर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। उनके इस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कार्य से राज्य की भागवत तथा बौद्ध प्रजा में आतंक अवश्य फैल गया परन्तु साथ ही मन्दिर से होने वाली राज्य की भारी वार्षिक आय भी बन्द हो गयी। इसकी क्षतिपूर्ति में प्रजा पर अनेक नये भार लादे जाने लगे जिनके परिणामस्वरूप शासित वर्ग में क्षोभ बहुत बढ़ गया और जनता में विद्रोह की भावना उग्र होने लगी। परिणामतः शासक वर्ग के लोग सेना से घिरे हुए दुर्ग के भीतर ही रहते थे और बिना पर्याप्त सैनिक साथ लिए बाहर नहीं आते थे।

जब सोमेश्वर लगभग एक वर्ष पूर्व पहली बार मुल्तान आया था उस समय स्थिति इतनी विषम नहीं थी। संदेह और भय का वातावरण तब भी था, परन्तु सभी धर्मों और वर्गों के व्यक्ति परस्पर मिलते-जुलते रहते थे। परन्तु इस बार सोमेश्वर ने वहाँ पहुँचकर देखा कि दोनों में किसी स्तर पर सम्पर्क नहीं रह गया है। मुसलमान शासक अलग थे, अन्य मतावलम्बी शासित अलग। शासक वर्ग शस्त्र-बल से अपना आधिपत्य सुरक्षित रख रहा था, और बहुसंख्यक शासित वर्ग विद्रोह के अवसर खोज रहा था।

सोमेश्वर ने मुल्तान पहुँचकर उसी पांथशाला में डेरा डाला जहाँ वह पहली बार ठहरा था। यह पांथशाला आदित्य-मन्दिर के निकट स्थित थी। पहले यहाँ देश के विभिन्न भागों से आये हुए भागवत धर्म-यात्री ठहरा करते थे और बड़ी भीड़ रहती थी। परन्तु मन्दिर नष्ट हो जाने के कारण अब पांथशाला भी सूनी पड़ी रहती थी। इस समय वहाँ सोमेश्वर तथा उसके अनुचरों के अतिरिक्त केवल तीन यात्री और थे।

रात्रि में भोजन के पश्चात् सोमेश्वर पांथशाला के व्यवस्थापक के पास जा बैठा। जब अपना परिचय देते हुए उसने यह बताया कि मन्दिर के नष्ट किये जाने के समय वह इसी पांथशाला में ठहरा हुआ था तो वह बूढ़ा ब्राह्मण रो पड़ा। इस प्रकार सहानुभूति प्राप्त करके सोमेश्वर ने मुल्तान की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में प्रश्न पूछने आरम्भ किये। बूढ़ा मानों श्रोता की ही खोज में था। उसने जो कुछ बताया उसका सारांश यह था कि नगर में मुसलमान सेना कम होते ही विद्रोह हो सकता है। जब सोमेश्वर ने यह कहा कि मुल्तान से पुष्पपुर के राजा जयपाल की सहायता के लिए सेना भेजी जा रही है तो बूढ़ा अविश्वास से सिर हिलाते हुए बोला, "यह असम्भव है। एक मुसलमान दूसरे मुसलमान के विरुद्ध भागवत राजा की सहायता कैसे करेगा?"

सोमेश्वर ने कहा, "मैंने तो सुना है कि शेख ने अपनी ओर से सहायता का प्रस्ताव किया है।"

बूढ़ा सोचता हुआ कहने लगा, "समझ में नहीं आ रहा है यह कैसे हो सकता है। शेख हमारा मित्र नहीं है। इसके अतिरिक्त यदि उसने थोड़ी सेना भी बाहर भेज दी तो वह स्वयं यहाँ सुरक्षित नहीं रह जाएगा।"

सोमेश्वर ने कहा, "सम्भव है वह भेजने के लिए और सेना एकत्र कर रहा हो।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हाँ, यह सम्भव हो सकता है। मैंने भी सुना है कि शेख एक नयी सेना एकत्र कर रहा है जिसमें अन्य मतावलम्बी भी सम्मिलित हो सकते हैं। परन्तु राजा जयपाल की सहायता करने में उसका क्या हित हो सकता है?"

सोमेश्वर ने कहा, "सम्भव है वह ऐसा करके भागवत तथा बौद्ध प्रजा का विश्वास प्राप्त करना चाहता हो।"

"हाँ, यह सम्भव है," बूढ़े ने उत्तर दिया। "इतने दिनों में उसने समझ लिया होगा कि केवल शस्त्र-बल से प्रजा को सदा के लिए दबाकर नहीं रखा जा सकता।"

इस प्रकार विलम्ब तक इधर-उधर की बातों के बीच-बीच में प्रश्न पूछ-पूछ कर सोमेश्वर ने स्थानीय स्थिति का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया। फिर वह जाकर सो गया। प्रातःकाल उठकर उसने अपने दो अनुचरों को नगर में जाकर सूचना एकत्र करने का आदेश दिया। लौटकर उन्होंने भी लगभग वही सब बताया जो सोमेश्वर रात्रि में सुन चुका था। उन्होंने इस बात की भी पुष्टि की कि लगभग एक मास से शेख द्वारा राजा जयपाल की सहायता के लिए एक नयी सेना एकत्र की जा रही थी जिसमें भागवत मतावलम्बी भी सम्मिलित हो सकते थे।

इस प्रकार स्थिति से पूर्णतया अवगत होकर वह तीसरे पहर शेख से भेंट करने के लिए निकला।

शेख हमीद लोदी का निवास सुरक्षित दुर्ग के भीतर था। परन्तु सोमेश्वर को वहाँ तक पहुँचने में अधिक कठिनाई नहीं हुई। द्वार पर कुछ समय तक उसे प्रतीक्षा अवश्य करनी पड़ी। परन्तु उसका नाम जानते ही शेख ने तुरन्त उसे भीतर बुला भेजा।

शेख हमीद लोदी दीर्घ आकार-प्रकार का, वयोवृद्ध किन्तु किसी सीमा तक भयानक व्यक्ति था। उसके केश छँटे हुए तथा श्वेत थे, और सम्पूर्ण मुख को ढके हुए घनी अव्यवस्थित-सी दाढ़ी भी निष्कलंक श्वेत थी। परन्तु उसकी आँखें पैनी तथा लाल थीं और उनके नीचे कालिमा लिए हुए मांस की गद्दियाँ लटक रही थीं। आयु अधिक होने पर भी वह शरीर से हृष्ट-पुष्ट था, और उसका समुन्नत उदर-प्रदेश सबसे पहले दर्शक का ध्यान आकर्षित करता था।

सोमेश्वर के कक्ष में प्रवेश करते ही शेख ने मुक्त कंठ से उसका स्वागत करते हुए कहा, "आओ, सफ़ीर, हम बड़ी बेसब्री से तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे थे। तुम्हारे महामंतरी का खत हमें परसों ही मिल गया था। उसमें उन्होंने तुम्हारा ज़िक्र किया है।"

सोमेश्वर ने अभिवादन करते हुए कहा, "अपने महामंत्री जी के आदेश से ही सेवक इस समय श्रीमान की सेवा में उपस्थित हुआ है।"

शेख ने कहा, "तुम्हारे महामंतरी एक क़ाबिल इन्सान हैं, सफ़ीर। मैं उनकी दूरंदेशी का क़ायल हूँ। सुबुक्तगीन हमारे पड़ौस में ही बढ़ता आ रहा है और हमारे खिलाफ़ हमलावर भी हो चुका है। मगर हम इस खतरे से बेखबर ही रहे, जबकि

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुम्हारे महामंतरी ने इतनी दूर से उसे समझ लिया। दरअसल अगर वो आगाह न करते तो हम ग़फ़लत में ही मारे जाते।''

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "श्रीमान का कथन सत्य है। हमारे महामंत्री एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं। इतना ही नहीं, वे बुद्धिमान व्यक्तियों का आदर करना भी जानते हैं। उन्हें इस बात की विशेष प्रसन्नता है कि श्रीमान सुबुक्तगीन के सम्बन्ध में उनके विचारों से सहमत हैं।''

"हाँ, इस बारे में मैं उनकी राय से पूरा इत्तिफ़ाक़ रखता हूँ। दुश्मन को सिर उठाने से पहले ही कुचल देना चाहिए। यह सही और अच्छी सियासत का पहला उसूल है।''

"यही हमारे महामंत्री भी कहते हैं, श्रीमान। परन्तु आपकी दूरदर्शिता वास्तव में उनसे भी अधिक प्रशंसा के योग्य है। सुबुक्तगीन के विरुद्ध राजा जयपाल की सहायता करने का आपका निर्णय इसका प्रमाण है।''

शेख ने मुस्कराकर कहा, "तुम्हारा इशारा शायद मज़हब की तरफ है, क्यों सफ़ीर?''

"हाँ, श्रीमान।''

"मगर तुम यह भूल जाते हो कि मज़हब कभी सियासत की सही बुनियाद नहीं बन सकता। इस तरह की कोशिशें ज़रूर की गयी हैं, और बार-बार की गयी हैं, मगर क्या उन्हें कभी कामयाबी हासिल हुई है? यह ग़लत है। सियासत की सिर्फ़ एक सही बुनियादी हो सकती है, और वह है अपना, कौम का और मुल्क का फ़ायदा।''

'परन्तु सुबुक्तगीन तो अपने युद्धों को धर्म-युद्ध कहता है?''

शेख ने कहा, "सुबुक्तगीन मक्कार है। दरअस्ल वह बदज़ात मुसलमान ही नहीं है। वह गुलाम से सुलतान ज़रूर बन बैठा है, मगर सुलतान बनने से ख़ून नहीं बदल जाता। लिहाज़ा वह आज भी लूट-मार करता घूम रहा है। अपनी जंग को जिहाद का जामा पहनाकर वह ईमानपसंद मुसलमानों की आँखों में धूल झोंकने की कोशिश कर रहा है। अगर उसका मक़सद जिहाद है तो वह दो बार हमारे ख़िलाफ क्यों हमलावर हो चुका है? क्या हम मुसलमान नहीं हैं? नहीं बर्खुदार, इस जंग का मज़हब से कोई तअल्लुक़ नहीं है। जंग दरअस्ल ज़र और ज़मीन के लिए लड़ी जा रही है। सुबुक्तगीन की नज़र हिन्द की सरज़मीन और उसकी बेपनाह दौलत पर है। लिहाज़ा सभी हिन्दियों का फ़र्ज़ हो जाता है कि मज़हबी तअस्सुबात को बालाये-ताक़ रखकर इस मक्कार लुटेरे का मुक़ाबला करें। इस मुहिम में हम हिन्द के मुसलमान भी किसी से पीछे नहीं रहेंगे।''

सोमेश्वर ने कहा, "हम श्रीमान के विचारों से पूर्णतया सहमत हैं।''

हमें इसका अहसास है, सफ़ीर। वर्ना हम ख़ुद इस तरह खुलकर गुफ्तगू न करते। हमने जो कुछ कहा है वह हमारे दिली ज़ज्बात हैं।''

सहसा सोमेश्वर ने पूछा, "आपकी सेना कब प्रस्थान कर रही है?''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"जब कोई कहे। मैं तो कल भेज सकता हूँ। तुम्हारी फौजें कब जा रही हैं?"

"चल चुकी हैं," सोमेश्वर ने उत्तर दिया।

"तो मैं भी कल रवाना कर दूँगा।"

"आप कितनी सेना भेज रहे हैं?"

शेख ने कहा. "यही हमारी शर्मिन्दगी का मुकाम है। हमें सख्त अफ़सोस है, सफ़ीर, कि जितनी चाहिए उतनी फ़ौज हम नहीं भेज सकेंगे। राजा जैपाल के साथ हमारे बिरादराना तअल्लुक़ात हैं। हमारा फ़र्ज़ है कि उनकी मुसीबत के वक़्त हम अपनी तमाम ताक़त के साथ उनकी मदद को जाएँ। मगर यह मुमकिन नहीं है। हमारी अपनी मजबूरियाँ हमें ऐसा नहीं करने दे रही हैं। दरअस्ल हमें खुद सुबुक्तगीन की तरफ़ से अन्देशा है। यह मक्कार किसी वक्त भी हम पर फिर हमलावर हो सकता है। लिहाज़ा हमें अपनी चुनिन्दा फ़ौज सल्तनत की हिफ़ाजत के लिए यहाँ रखनी पड़ेगी। हमने अपने दोस्त की मदद के लिए एक नयी फ़ौज खड़ी की है, फ़िलहाल उसी को भेजेंगे। इन्शा-अल्ला-ताला और दरकार भी नहीं होगी। यह फ़ौज कल रवाना हो जाएगी।"

इस वार्तालाप के पश्चात् सोमेश्वर यह धारणा लेकर पांथशाला लौटा कि शेख एक बहुत चतुर व्यक्ति है, परन्तु इस समय उस पर विश्वास किया जा सकता है। जयपाल ने कभी उस पर आक्रमण नहीं किया था, अतएव जयपाल को वह एक अच्छा पड़ोसी समझता था। परन्तु सुबुक्तगीन से वह दो बार पराजित हो चुका था, अतएव उसे अपना शत्रु मानता था। इस प्रकार प्रतिकार की भावना के वशीभूत वह पड़ोसी की सहायता के लिए नहीं अपितु शत्रु के विनाश के लिए अपनी सेना भेज रहा था।

पांथशाला में आकर सोमेश्वर ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि वे भोर होते ही पुष्पपुर के लिए प्रस्थान करने को तत्पर रहें।

४५

पुष्पपुर पहुँचकर सोमेश्वर ने सबसे पहले यह जानने का प्रयास किया कि खजुराहो से उसका अनुचर पत्र लेकर आया है कि नहीं।

रत्नमाला का बिना कोई सूचना दिये अन्तर्धान हो जाना उसे अच्छा नहीं लगा था और इस कारण वह रत्नमाला से बहुत रुष्ट हो गया था। परन्तु इधर कुछ दिनों से उसके क्रोध का ज्वार क्षीण पड़ने लगा था, और जैसे-जैसे क्रोध कम हो रहा था वैसे-वैसे चिन्ता बढ़ती जा रही थी। यह प्रक्रिया मुल्तान से प्रस्थान करने के पश्चात् से अधिक तीव्र हो गयी थी, और पुष्पपुर पहुँचते-पहुँचते उसकी चिन्ता ने उद्विग्नता का रूप धारण कर लिया था। इसके परिणाम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्वरूप वह यदि कभी अत्यधिक उत्तेजित होकर तुरन्त खजुराहो लौट जाने की सम्भावनाओं पर विचार करने लगता था तो कभी इतना निराश और उदास हो जाता था कि उसे आगामी युद्ध, और स्वयं अपना जीवन, सर्वथा निरर्थक प्रतीत होने लगता था। इस समय यदि रत्नमाला का कुशल-समाचार भी उसे मिल जाता तो वह उसे उसकी भूल के लिए क्षमा कर सकता था।

परन्तु रत्नमाला का कोई समाचार उसे पुष्पपुर पहुँचकर भी नहीं मिला। खजुराहो से उसका विश्वस्त अनुचर अभी लौटकर नहीं आया था।

परन्तु सेना आ गयी थी। सोमेश्वर ने स्वयं जाकर उसके लिए की गयी व्यवस्था का निरीक्षण किया। उसे यह देखकर अधिक आश्चर्य नहीं हुआ कि उसमें अधिक संख्या चन्देल सैनिकों की ही थी। उनके पश्चात् श्रीपत की यादव सेना थी, फिर सरयूपार की। कुछ प्रतिहार, तोमर तथा चाहमान सैनिक भी थे, परन्तु इनकी संख्या अधिक नहीं थी।

चन्देल शिविर में सोमेश्वर की भेंट विक्रम नामक एक सेनाधिकारी से हुई जो उसका पूर्व-परिचित था। सोमेश्वर के साथ कान्यकुब्ज-यात्रा में दोनों का अच्छा परिचय हो गया था जिसका लाभ उठाते हुऐ सोमेश्वर ने अन्य बातों के बीच उससे रत्नमाला के सम्बन्ध में जिज्ञासा कर दी।

विक्रम ने कहा, "रत्नमाला ? वही जो खजुराहो में नगरवधू थी ?"

"हाँ, हाँ, वही," सोमेश्वर ने कहा।

"उसके सम्बन्ध में मैंने कुछ सुना तो अवश्य था।"

"क्या सुना था ? कहाँ सुना था ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"यह मुझे ठीक स्मरण नहीं आ रहा है। नाम से ध्यान अवश्य आता है कि उसके सम्बन्ध में कहीं कुछ सुना है। वास्तव में मैं नगरवधुओं से दूर ही दूर रहता हूँ। मेरी पत्नी बड़े उग्र स्वभाव की है।"

सोमेश्वर ने कहा, "परन्तु रत्नमाला अब नगरवधू नहीं है।"

"मुझे यह भी ज्ञात नहीं है।"

सोमेश्वर ने कहा, "स्मरण करने का प्रयास तो करो कि तुमने उसके सम्बन्ध में क्या सुना था।"

विक्रम कुछ क्षण तक सिर पर उँगलियाँ फिराता हुआ सोचता रहा, फिर बोला, "हाँ, स्मरण आ गया। परन्तु कौन कह रहा था यह अब भी मस्तिष्क में नहीं आ रहा है।"

सोमेश्वर ने स्पष्ट उत्सुकता के स्वर में कहा, "नहीं आ रहा है तो उसे जाने दो। यह तो बताओ कि तुमने सुना क्या था।"

विक्रम ने कहा, "हाँ, यह सुना था कि इस नाम की कोई नगरवधू अचानक नगर छोडकर न जाने कहाँ चली गयी है।"

"फिर ?"

"बस, इतना ही सुना था।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सोमेश्वर ने पुछा, "तुमने यह कब सुना था ?"

विक्रम ने कहा, "खजुराहो से प्रस्थान करने के कुछ ही दिन पूर्व सुना था। परन्तु आप इतने अस्थिर क्यों हो रहे हैं ? क्या आप उससे परिचित थे ?"

अपनी उद्विग्नता को छिपाने का प्रयास करते हुए सोमेश्वर ने कहा, "मैं ? नहीं, मैं उससे परिचित नहीं था। अच्छा, तुम्हारे सैनिकों को यहाँ कोई कष्ट तो नहीं है ?"

"केवल शीत का कष्ट है," विक्रम ने उत्तर दिया। "यहाँ का शीत बड़ा भयंकर है। हमने इसकी कल्पना भी नहीं की थी।"

शीत वास्तव में बड़ा भयंकर था। अधिकांश समय आकाश बादलों से आवृत्त रहता था। प्रातःकाल कुहरा इतना घना होता था कि निकट की वस्तुएँ भी स्पष्ट नहीं दिखायी पड़ती थीं। जब कभी इन आवरणों को भेदकर सूर्य निकलता भी था तो उसमें यथेष्ट ताप नहीं होता था। और कभी-कभी जब पवन उत्तर के हिमाच्छादित पर्वतों की ओर से बहने लगता था तो स्थानीय निवासियों के भी दाँत बजा देता था। दक्षिण से आये सैनिकों के लिए तो ऐसे समय में खड्ग पकड़ना भी कठिन हो जाता था।

सोमेश्वर ने कहा, "मैं अभी जाकर इंधन की व्यवस्था कराता हूँ।"

इसके पश्चात् वह क्षण भर के लिए भी शिविर में नहीं रुका। सीधा अपने डेरे पर आकर लेट रहा, और उस दिन जयपाल से भेंट करने भी नहीं गया।

४६

परन्तु राजा जयपाल से भेंट करना एक ऐसा कर्तव्य था जिसकी अधिक समय तक उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। अतएव अगले दिन वह उनके समक्ष जा उपस्थित हुआ।

जयपाल ने उसे देखते ही कहा, "मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था।"

सोमेश्वर का मस्तिष्क अभी पूर्णतया सुस्थिर नहीं हुआ था, अतएव क्षण भर तो उसकी समझ में ही नहीं आया कि यह व्यक्ति क्यों उसकी प्रतीक्षा कर रहा था, और वह किंकर्तव्य-विमूढ़-सा खड़ा-खड़ा जयपाल को देखता रहा। परन्तु यह स्थिति इतने अल्प समय तक रही कि अपने विचारों में खोये राजा जयपाल को इसका आभास भी नहीं होने पाया। सोमेश्वर ने शीघ्र ही अपने आपको सँभाल लिया और अभिवादन करने के पश्चात् पूछा, "खजुराहो से कोई पत्र आया है, महाराज ?"

जयपाल ने कहा, "हाँ, आया था। तभी से तो मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

"कब आया था ?" सोमेश्वर ने फिर पूछा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"एक पक्ष से अधिक हो गया। जिस दिन सेना आयी थी उस दिन पत्र भी आया था। मैं तभी से प्रस्थान के लिए प्रस्तुत हूँ। अब तनिक भी विलम्ब नहीं करना चाहिए।"

सोमेश्वर ने क्षीण-सी आपत्ति की, "परन्तु क्या इतने कठोर शीत में अभियान करना उचित होगा ?"

जयपाल ने कहा, "युद्ध के ज्वर में यह शीत भी भला लगेगा। और शीत हो चाहे हिम गिरे, हमें आक्रमण तुरन्त कर देना चाहिए। विलम्ब करने से शत्रु को लमगान में अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाने का अवसर मिल जाएगा।"

"परन्तु......" सोमेश्वर ने फिर प्रयास किया।

"इस समय हमारी स्थिति अच्छी है," जयपाल ने उसे टोकते हुए कहा। "हमारे पास शत्रु से कहीं अधिक सेना है, और वह अभी सँभल भी नहीं पाया होगा। इस समय हम उसे सरलता से कुचल सकते है। परन्तु यदि उसे समय मिल गया और उसने लमगान की रक्षा-व्यवस्था सुदृढ़ करली तो हमारे लिए उसे परास्त करना बड़ा कठिन हो जायगा। इसके अतिरिक्त, इतनी बड़ी सेना को पुष्पपुर में रोककर हमारे लिए उसके भोजन की व्यवस्था करना भी सम्भव नहीं होगा।"

सोमेश्वर का मस्तिष्क जयपाल के तर्क से सहमत नहीं था। वह अनुभव कर रहा था कि शीत के कारण दक्षिण के सैनिकों को बड़ी असुविधा होगी। उनमें से अनेक युद्ध होने से पूर्व ही मर जाएँगे अथवा युद्ध में भाग लेने की स्थिति में नहीं रहेंगे। सोमेश्वर यह सब भली प्रकार समझता था, और जयपाल की उतावली का कारण भी समझ रहा था। परन्तु इन सब विचारों से ऊपर उसकी अपनी इच्छा कार्य कर रही थी। वह चाहता था कि युद्ध जितना शीघ्र हो जाए उतना अच्छा है। विजय तथा पराजय की धारणायें उसे बड़ी धूमिल प्रतीत हो रही थीं। महत्त्व केवल युद्ध होने का, उसके जीवन के प्रस्तुत अध्याय की समाप्ति का था। अतएव यह समझते हुए भी कि बार-बार पराजित और अपमानित होकर जयपाल का विवेक नष्ट हो गया है और इस समय उनके मस्तिष्क में केवल प्रतिशोध की भावना कार्य कर रही है, सोमेश्वर ने तुरन्त आक्रमण करने की योजना का अधिक विरोध नही किया।

इसके पश्चात् और विषयों की चर्चा हुई इनमें भी सोमेश्वर ने लगभग पूर्णतया जयपाल की नीतियों का ही समर्थन किया। अन्त में यह निर्णय हुआ कि अपनी अधिक सेना का लाभ उठाकर लमगान पर प्रत्यक्ष आक्रमण किया जाए और उसके पश्चात् गजनी तक शत्रु का पीछा किया जाए।

परन्तु यह निश्चय होने के पश्चात् भी प्रस्थान करने में कुछ दिन का समय लग ही गया। इस बीच मुल्तान की सेना भी आ गयी, और जयपाल तथा सोमेश्वर ने विभिन्न सेनानायकों के साथ परामर्श करके आक्रमण की योजना को अन्तिम रूप दे दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी बीच सोमेश्वर का विश्वस्त अनुचर भी खजुराहो से लौट कर आ गया। परन्तु वह रत्नमाला को लिखे गये सोमेश्वर के दोनों पत्र लौटा लाया था। उसे रत्नमाला का पता लगाने में सफलता नहीं मिली थी।

४७

जयपाल ने सोचा था कि सुबुक्तगीन दुर्ग के भीतर ही रहेगा और उसकी बहुसंख्यक सेना को देखकर भयभीत हो जाएगा। फिर नगर को घेर लिया जाएगा। लमगान के भीतर पहुँचने का एक गुप्त मार्ग था जिसका ज्ञान केवल जयपाल को ही था। उसकी योजना नगर को घेर लेने के पश्चात् इस मार्ग का प्रयोग करके सुबुक्तगीन को बंदी बना लेने तथा उसकी सेना को दुर्ग के भीतर ही नष्ट कर देने की थी।

परन्तु उसकी यह आशा पूर्ण नहीं हुई। सुबुक्तगीन उसे लमगान नगर से बाहर ही प्रतीक्षा करता हुआ मिला। उसने ससैन्य एक पहाड़ी पर डेरा जमा रखा था। यह पहाड़ी अधिक ऊँची नहीं थी और इस कारण हिम से पूर्णतया मुक्त थी परन्तु उसके ढाल पैने और घने वनों से ढके हुए थे जिनमें तुरुष्क सेना छिपी थी। इस पहाड़ी के ऊपर तक पहुँचने के लिए केवल दो मार्ग थे। पहला लमगान नगर की दिशा में था, और दूसरा पहाड़ी के उत्तरी पार्श्व में जिसके नीचे से होकर पुष्पपुर को लमगान से जोड़ने वाला मार्ग जाता था। इन दोनों मार्गों को सुबुक्तगीन ने भली प्रकार सुरक्षित कर रखा था।

जयपाल ने तुरन्त अपने प्रमुख सेनानायकों के साथ परामर्श किया और उनके समक्ष उस छोटी-सी पहाड़ी को घेर लेने की योजना रखी। इससे असहमति प्रकट करते हुए सोमेश्वर ने यह प्रस्ताव किया कि कुछ सेना पहाड़ी के दोनों मार्गों का अवरोध करने के लिए पीछे छोड़ दी जाए और शेष आगे बढ़कर नगर पर अधिकार करले। परन्तु यह जयपाल को स्वीकार नहीं हुआ। उसने कहा, "इससे क्या लाभ होगा?"

सोमेश्वर ने उत्तर दिया, "हमारी सेना शीत से सुरक्षित रहेगी और शत्रु के लिए सहायता का मार्ग बंद हो जाएगा।"

जयपाल ने सिर हिलाकर असहमति प्रकट करते हुए कहा, "यह अनावश्यक है। शत्रु के लिए सहायता का मार्ग हम पहाड़ी को घेर कर भी बंद कर सकते हैं। हमारा पहला उद्देश्य शत्रु की सेना का विनाश करना है।"

सोमेश्वर ने फिर कहा, "शत्रु की सेना का विनाश नगर पर अधिकार करने के पश्चात् भी किया जा सकता है। हमें पहले अपनी सेना का विनाश रोकना चाहिए।"

जयपाल ने कहा, "सिद्धांत रूप में मैं भी तुमसे सहमत हूँ। परन्तु इस समय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थिति भिन्न है। तुम अभी सुबुक्तगीन को नहीं जानते हो। वह बड़ा धूर्त है। यदि वह नगर को अरक्षित छोड़कर स्वयं यहाँ आ जमा है तो इसमें कोई भेद अवश्य होगा। हमें उसके जाल में नहीं फँसना चाहिए। पहाड़ी का घेरा डालना अधिक अच्छा रहेगा।"

सोमेश्वर ने इसके पश्चात् कुछ नहीं कहा, और जयपाल की योजना कार्यान्वित की जाने लगी। सेना का मुख्य भाग दोनों मार्गों के सामने लगा दिया गया और शेष ने फैल कर चारों ओर से पहाड़ी को घेर लिया। ऐसा करने में जयपाल की सेना स्वभावतः बिखर गयी। इसके विपरीत सुबुक्तगीन अपनी सेना को इच्छानुसार किसी भी स्थान पर केन्द्रित करने की स्थिति में था। इसके अतिरिक्त तुरुष्क सेना छिपी हुई थी और उसकी संख्या का अनुमान लगाना असम्भव था। जयपाल की सेना खुले में थी, और पहाड़ी के ऊपर से उसके दुर्बल स्थलों को सरलतापूर्वक देखा जा सकता था। इस प्रकार स्थिति कुल मिलाकर सुबुक्तगीन के लिए अधिक अनुकूल थी।

घेरा डालते-डालते रात्रि हो गयी थी, अतएव इसके पश्चात् किसी ओर से कोई कार्यवाही नहीं हुई। परन्तु जयपाल की सेना के लिए विश्राम भी सम्भव नहीं था। अन्धकार के साथ-साथ शीत भी बढ़ने लगा था। अधिकारियों के लिए शिविर अवश्य लग गये थे, परन्तु सामान्य सैनिकों के सिर पर केवल निर्मम आकाश की छाया थी। उनके सामने मुख्य समस्या सोने की नहीं, अपितु शरीर को किसी प्रकार उष्ण बनाये रखने की थी। अतएव उन्होंने आस-पास के हरे वृक्ष काट-काट कर स्थान-स्थान पर होलिका प्रज्जवलित की और उसे घेर कर खड़े हो गये। परन्तु शीत का प्रकोप रात्रि के साथ-साथ बढ़ता ही जा रहा था और अन्त में एक समय ऐसा भी आ गया जब अग्नि उन्हें जीवित रखने के लिए अपर्याप्त लगने लगी। उनका पृष्ठ-भाग तो लगता था जमकर हिमखंड हो गया है।

अन्त में किसी प्रकार भोर हुआ और उन्होंने संतोष की साँस ली। परन्तु उनका संतोष केवल मानसिक ही था, क्योंकि जिस भोर का वे स्वागत कर रहे थे वह वास्तव में बड़ा विचित्र था। पूर्व के क्षितिज पर बहुत ऊपर चढ़ आने के पश्चात् भी सूर्य का बिम्ब दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। केवल अनुमान लगाया जा सकता था कि वह वहीं कहीं होगा अवश्य। दिशाओं में प्रकाश हो गया था परन्तु वह बढ़ नहीं रहा था, और वातावरण में उष्णता आयी ही नहीं थी। ऐसा लगता था मानों सूर्य पर किसी ने एक के पश्चात् एक, अनेक आवरण डाल दिये हों। चारों ओर घना कुहरा छाया था जिसमें धुएँ की गंध आ रही थी। दो हाथ से आगे कुछ सूझता ही नहीं था, और सैनिकों के वस्त्र बिना वर्षा के भीग गये थे।

तभी सहसा दक्षिण की ओर स्थित मार्ग का अवरोध करने के लिए जो सेना नियुक्त की गयी थी उसमें कोलाहल मच गया। तुरुष्क सैनिकों का एक दल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
निःशब्द उस मार्ग द्वारा पहाड़ी से उतर कर नीचे आ गया था। कुहरे के कारण जयपाल के सैनिकों को उसका आभास भी नहीं हो सका। इस प्रकार बहुत निकट पहुँचकर तुरुष्कों ने 'अल्लाहो-अकबर' का घोष करते हुए आक्रमण कर दिया। जयपाल के सैनिक जब तक संभलें-संभलें तब तक उन्होंने अनेक को धराशायी कर दिया और घेरे की अव्यवस्थित पंक्तियों को तोड़ते हुए नगर की ओर भाग गये।

यह समाचार पाते ही जयपाल ने और दिशाओं से उस स्थान पर सैनिक भेज दिये और फिर स्वयं वहाँ आकर नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया। उनका अनुमान था कि तुरुष्क घेरे से भयभीत होकर दुर्ग में शरण पाने का प्रयास कर रहे हैं।

शीघ्र ही उनका यह अनुमान पुष्ट भी हो गया। तुरुष्कों का एक दल और उसी प्रकार नीचे उतरा। परन्तु अब घेरे की पंक्तियाँ सुदृढ़ हो चुकी थीं और जयपाल के सैनिक सजग थे। अतएव इस बार उनकी पहले वाली चाल नहीं चली और भयंकर असि-युद्ध के पश्चात् वे फिर ऊपर चढ़ते हुए कुहरे में विलीन हो गये।

थोड़े-थोड़े अन्तर से तुरुष्कों की तीन लहरें और आयीं, तीन बार और असि-युद्ध हुआ, और तीनों बार घेरे की पंक्तियों को तोड़ने में विफल होकर तुरुष्क जिधर से आये थे उसी ओर लौट गए। इसके पश्चात् सम्पूर्ण क्षेत्र में फिर शान्ति छा गयी।

इस समय तक सूर्य लगभग अपने उत्कर्ष के चरम बिन्दु तक पहुँच चुका था और कुहरा छँटने लगा था। स्पष्ट था कि तुरुष्क कुहरे से लाभ उठाकर निकल भागना चाहते थे और इस समय कुहरा छँट जाने के कारण फिर पहाड़ी के वनों में जा छिपे थे। जयपाल ने अनुमान लगाया कि अब वे दिन भर शान्त रहेंगे और परिस्थितियाँ अनुकूल होने पर रात्रि के अंधकार में, अथवा अगले दिन प्रातःकाल कुहरे के आवरण में, फिर अपना प्रयास करेंगे।

अतएव उसने शत्रु की टोह लेने के लिए उत्तरी मार्ग से अपने कुछ सैनिक ऊपर भेजे। कुछ समय पश्चात् उन्होंने आकर बताया कि वहाँ कोई विरोध करने वाला नहीं है। इससे प्रोत्साहित होकर जयपाल ने एक अधिक बड़े दल को उस मार्ग से ऊपर चढ़ने का आदेश दिया। यह दल भी निर्विरोध ऊपर चढ़ने लगा। जब यह लगभग आधी दूर ऊपर चढ़कर दृष्टि से ओझल हो गया तो जयपाल ने इसकी सहायता के लिए एक और बड़े दल को ऊपर भेजा। परन्तु इसके कुछ ही समय पश्चात् चीत्कार के भयानक रव से वातावरण काँप उठा, और जयपाल के सैनिक गिरते-पड़ते नीचे आने लगे। उनके ऊपर अचानक प्रस्तर-खंडों की वर्षा होने लगी थी जिसके कारण अनेक मर गये और उनसे भी अधिक घायल हुए।

अपने इस प्रयास में विफल होकर जयपाल ने समझ लिया कि प्रत्यक्ष आक्रमण से सफलता मिलना बहुत कठिन है। अतएव उसने दक्षिणी क्षेत्र में ही अधिक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ध्यान देने का निश्चय किया। विजय का सरल उपाय यही था कि शत्रु को पहाड़ी पर से उतर कर नगर में न पहुँचने दिया जाए। उसने यदि पहाड़ी पकड़ी है तो वहीं रहे, और वहीं मरे।

सन्ध्या समय जयपाल ने फिर अपने सेना-नायकों से परामर्श करते हुए अपना यह मत उनके समक्ष रखा। अधिकांश ने समर्थन किया। सोमेश्वर सहमत नहीं था। उसने कहा, "मेरी धारणा अब भी यही है कि हमें नगर पर तुरन्त अधिकार कर लेना चाहिए।" संघ-सेना के सभी नायकों ने उसका समर्थन किया।

जयपाल ने कहा, "गत रात्रि के अनुभव के पश्चात् मुझे भी लगने लगा है कि नगर पर अधिकार न करके हमने भूल की है। परन्तु इसका सुधार आज सम्भव नहीं है। रात्रि में तथा कल प्रातः शत्रु फिर निकल भागने का प्रयास करेगा। उसके इस प्रयास को विफल करने के पश्चात् कल हम अपनी भूल भी सुधार लेंगे। नगर पर अधिकार करने की योजना रात्रि में बना ली जाएगी।"

सोमेश्वर ने फिर कुछ नहीं कहा और जयपाल ने अपनी योजना को कार्यान्वित करते हुए रात्रि होते-होते अपनी सेना का आधे से अधिक भाग दक्षिणी मार्ग के निकट लगा दिया।

रात्रि में फिर शीत का प्रकोप बढ़ने लगा, और शीत की वृद्धि के साथ-साथ जयपाल के सैनिकों का मनोबल क्षीण होने लगा।

प्रभात होते ही फिर पूर्व दिवस की पुनरावृत्ति आरम्भ हो गयी। पहले लगभग सौ तुरुष्क सैनिकों का एक दल दक्षिणी मार्ग से उतर कर नीचे आया। परन्तु आज जयपाल के सैनिक सजग थे, उनकी पंक्तियाँ विचलित नहीं हुई। फिर एक दल और नीचे उतरा, उसके पश्चात् एक और। जयपाल ने देखा कि आज तुरुष्क अपने प्रयास में असफल होने के पश्चात् भी लौटकर ऊपर नहीं जा रहे हैं। उनकी यह धारणा सुदृढ़ हो गयी कि निर्णायक युद्ध इसी क्षेत्र में होना है, और वे अधिक सेना इधर भेजने के उद्देश्य से उत्तर की ओर चले। सोमेश्वर उनके साथ था।

परन्तु उत्तरी मार्ग के सम्मुख इस समय भयंकर नर-संहार हो रहा था। जयपाल की योजना के परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में सैनिकों की संख्या कम हो गई थी। इस स्थिति से तथा कुहरे के आवरण से लाभ उठाते हुए तुरुष्क सेना का एक बड़ा भाग निःशब्द उतर कर नीचे आ गया था और इस समय जयपाल के विस्मित अव्यवस्थित सैनिकों की हत्या में संलग्न था।

कुहरा इतना घना था कि जयपाल तथा सोमेश्वर को इस स्थिति का पता तभी चला जब वे घटना स्थल के बहुत निकट पहुँच चुके थे। स्थिति का आभास होते ही जयपाल ने संकेत किया, और दोनों ने अपने अश्व फिर दक्षिण की ओर मोड़ दिये। उनकी अधिक सेना वहीं केन्द्रित थी, वहीं से वे उत्तरी क्षेत्र को सहायता भेज सकते थे।

परन्तु दक्षिण में भी इस समय तक स्थिति बहुत बिगड़ चुकी थी। छोटे-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छोटे अनेक दलों में उतर कर तुरुष्क सैनिकों की एक बड़ी संख्या नीचे आ चुकी थी, और असि-युद्ध चल रहा था। इसी बीच नगर की ओर से 'अल्लाहो-अकबर' भीषण रव हुआ और तुरुष्क सैनिकों ने उधर से भी आक्रमण कर दिया। यह आक्रमण जयपाल तथा सोमेश्वर की अनुपस्थिति में हुआ था। कुहरे के कारण इस नयी सेना की संख्या का अनुमान लगाना कठिन था। सम्भवतः थोड़ी ही रही होगी। परन्तु दुहरे आक्रमण के परिणामस्वरूप जयपाल की सेना शीघ्र ही अव्यवस्थित हो गयी और उसके पैर उखड़ने लगे। स्थिति इतनी बिगड चुकी थी कि जयपाल के लिए अब उसे संभालना असम्भव था। विजय की कोई आशा नहीं रह गयी थी, सैनिक केवल प्राण बचाने के लिए लड़ रहे थे।

इस प्रकार दो दिन के भीतर यह युद्ध समाप्त हो गया। जयपाल के पास एक लाख से अधिक सेना थी। तुरुष्क इसके आधे भी नहीं थे। परन्तु कुछ प्रकृति की सहायता के कारण, कुछ सुबुक्तगीन तथा उसके पुत्र महमूद की उत्तम रण-नीति के कारण, और कुछ जयपाल की अपनी अदूरदर्शित तथा उतावली के कारण, विजय तुरुष्कों की ही हुई। जयपाल की आधी सेना भी लौटकर पुष्पपुर नहीं आ सकी। अनेक सैनिक मारे गये, उनसे अधिक घायल हुए, और उनसे भी अधिक बन्दी बना लिये गए। अनेक अश्व, गज तथा शस्त्रास्त्रों के भंडार तुरुष्कों के हाथ लगे। उन्होंने जयपाल की भागती हुई सेना का पीछा किया और लमगान तथा पुष्पपुर के मध्यवर्ती विस्तृत क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। जयपाल के अपमान और भारत के दुर्भाग्य का पात्र भर कर छलक उठा।

देशों और राष्ट्रों के इतिहास इसी प्रकार व्यक्तियों द्वारा लिखे जाते हैं। एक ओर एक व्यक्ति की उतावली और दूसरे की उदासीनता ने राष्ट्रीय परतंत्रता का, और दूसरी ओर एक व्यक्ति के रण-कौशल ने पूर्व में इस्लाम के प्रचार का, द्वार खोल दिया था।

सोमेश्वर किसी प्रकार पुष्पपुर पहुँचकर फिर वहाँ एक दिन भी नहीं रुका। वह बहुत खिन्न था। परन्तु उसकी खिन्नता के मूल में केवल भारतीय सेना की अपमान जनक पराजय ही नहीं थी। अन्य कई कारणों के साथ उसकी गणना भी की जा सकती थी, परन्तु उन सब से नीचे, और उन सब से अधिक शक्तिशाली, एक ऐसा कारण था जिसे स्वीकार करने में स्वयं सोमेश्वर को संकोच हो रहा था।

खजुराहो आकर उसने रत्नमाला की खोज आरम्भ की, परन्तु वह उसे नहीं मिली। रत्नमाला मानों धरती में समा गयी थी, अथवा पवन में विलीन हो गयी थी। किसी को उसके सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं था।

और सोमेश्वर की खिन्नता समय के साथ दृढ़ होकर उसके स्वभाव का एक अंग बन गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपसंहार

उपर्युक्त घटनाओं के लगभग तेरह वर्ष पश्चात्—

सुबुक्तगीन की मृत्यु हो चुकी थी और उसका पुत्र महमूद अपने भाई इस्माईल को बन्दी बनाकर गजनी के सिंहासन पर बैठ चुका था। शासन-सत्ता अपने हाथ में लेने के पश्चात् उसने शीघ्र ही हिरात, बल्ख़ और वस्त में अपनी स्थिति सुदृढ़ बना ली थी। परन्तु ख़ुरासान पर पुन: अधिकार करने में उसे अधिक समय लगा। यह क्षेत्र गजनवियों के हाथ से निकलकर समानी शासक अब्दुल मलिक के अधिाकर में चला गया था। महमूद ने अपनी शक्ति ढ़ाकर उसके विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया और लगातार दो युद्धों में उसे परास्त कर अन्त में फिर ख़ुरासान पर अधिकार कर लिया था। इस विजय के उपलक्ष में स्वयं ख़लीफ़ा ने उसे ख़िलअत भेजी थी और 'यामिनुद्दौला' तथा 'अमीन-उल्-मिल्लाह्' की उपाधियों से सम्मानित किया था। इसी अवसर पर महमूद ने भारत पर प्रति वर्ष एक आक्रमण करने की प्रतिज्ञा की थी।

उसने अपनी इस प्रतिज्ञा को कार्यान्वित करना भी आरम्भ कर दिया था। पहले आक्रमण में तो वह पुष्पपुर के निकटवर्ती कुछ क्षेंत्रों पर अधिकार करके ही संतुष्ट हो गया था। परन्तु दूसरा, और इस समय तक का अन्तिम, आक्रमण अधिक व्यापक और विनाशकर सिद्ध हुआ था। शाही राजा जयपाल अभी जीवित थे। उन्होंने एक बार फिर एक बड़ी सेना के साथ तुरुष्कों से लोहा लिया। परन्तु अन्त इस बार भी वैसा ही हुआ। तुरुष्कों की विजय हुई और जयपाल तथा उनके दो पुत्रों को बंदी बना लिया गया। उनका ज्येष्ठ पुत्र आनंदपाल युद्ध के समय वहाँ नहीं था, अतएव वह बच गया। कुछ समय पश्चात् जयपाल को ढाई लाख दीनार तथा पच्चीस हाथी देने के वचन पर मुक्त कर दिया गया, परन्तु उनके एक पुत्र तथा एक पौत्र को प्रतिभू स्वरूप रोक लिया गया। उन्हें आनंदपाल ने प्रस्तावित धनराशि देकर मुक्त कराया।

वृद्ध राजा जयपाल इस चौथी पराजय का अपमान नहीं सहन कर सके और उन्होंने स्वयं अपनी चिता में आग लगाकर आत्महत्या कर ली। इसके पश्चात् आनन्दपाल सिंहासन पर बैठा। परन्तु इस समय तक शाही राज्य का अधिकांश भाग गजनवियों के अधिकार में जा चुका था। आनन्दपाल राज्य के पूर्वी छोर पर स्थित उद्भाण्ड नगर से शासन चला रहा था।

इधर चंदेलों ने भी अपनी राजधानी बदल दी थी। लमगान की पराजय के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पश्चात् संघ-सेना की योजना का परित्याग कर दिया था और चंदेलों ने स्वयं अपनी सैनिक-शक्ति का अधिकाधिक विस्तार आरम्भ कर दिया था। महामंत्री प्रभास वृद्ध हो चुके थे परन्तु शासन-सूत्र अभी उन्हीं के हाथ में था। उनकी यह सुनिश्चित धारणा थी कि तुरुष्कों के आक्रमण कान्यकुब्ज तथा खजुराहो तक होंगे और इनका सामना चंदेलों को अपनी सेना के बल पर करना होगा। अपनी इसी धारणा के अनुसार उन्होंने एक विशेष सेना का संगठन किया था जो स्थायी रूप से कालंजर में रह रही थी। इसी सम्भावना को ध्यान में रखकर राजधानी भी खजुराहो से महोत्सवनगर लायी गयी थी। महोत्सवनगर उत्तर तथा पश्चिम की ओर से खजुराहो की अपेक्षा अधिक सुरक्षित था।

लमगान की पराजय के पश्चात् महाराजाधिराज धंगदेव ने शासन तथा राजनीति से पूर्ण संन्यास ले लिया था। अब वे खजुराहो आते भी नहीं थे। कभी कालंजर में रहते थे तो कभी काशीवास करने चले जाते थे, और उनका सारा समय पूजा-पाठ, ध्यान-मनन तथा सत्संग में ही व्यतीत होता था। अन्त में, सौ वर्ष की आयु प्राप्त करके, प्रयाग में गंगा-यमुना-सरस्वती के पुनीत संगम पर 'शिव-शिव' कहते हुए उन्होंने शरीर त्याग किया। इस घटना को अभी केवल एक मास के लगभग हुआ था। युवराज गंडदेव के राज्यरोहण की घोषणा की जा चुकी थी, परन्तु उनका विधिवत् अभिषेक अभी होने को था।

सोमेश्वर आजकल कालंजर में था। रत्नमाला को खोजने के प्रत्येक प्रयत्न में विफल होकर वह अर्ध-विक्षिप्त हो गया था और इसी दशा में अकेला दक्षिण की ओर निकल गया था। नर्मदा के तट उसकी भेंट एक महात्मा जी से हो गयी थी जिनसे प्रभावित होकर वह उन्हीं के आश्रम में रहने लगा था। उनके सदुपदेश से वह अपने विक्षेप पर विजय पाने में समर्थ हुआ था और लगभग एक वर्ष पश्चात् फिर खजुराहो लौट आया था। इसके कुछ समय पश्चात् उसे कालंजर का दुर्गपाल नियुक्त कर दिया गया था। तब से वह अधिकांश समय वहीं रहा था। कभी-कभी कार्यवश महोत्सव नगर अवश्य जाना पड़ता था, परन्तु वह यथासम्भव वहाँ एक-दो दिन से अधिक नहीं रहता था।

रामनगर महोत्सवनगर से बहुत निकट था, परन्तु वह वहां तक कभी नहीं जाता था। उसके मन में यह धारणा दृढ़ हो गयी थी कि रत्नमाला के लोप हो जाने में उसके पिता का हाथ अवश्य था। उन्होंने कहा था कि वे रत्नमाला के साथ विवाह करने की उसकी योजना सफल नहीं होने देंगे, और उन्होंने ऐसा ही कर दिखाया था। अतएव वह भी अब अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ था। लगभग चौदह वर्ष व्यतीत हो चुके थे परन्तु वह कभी रामनगर नहीं गया था, और न उसने विवाह ही किया था। इस अंतिम प्रश्न पर उसने स्वयं महाराजाधिराज धंगदेव की अवज्ञा की थी। महाराज केवल इसी कारण उससे असंतुष्ट भी रहते थे। परन्तु वह अपने अन्य कर्तव्यों का पालन बड़ी कुशलता के साथ करता था, और महामंत्री सदा उसका ही पक्ष लेते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सामंत विशालदेव भी अपने हठ पर दृढ़ थे। सोमेश्वर यदि रामनगर नहीं गया था तो उन्होंने भी लगभग चौदह वर्षों से उसका मुख नहीं देखा था। परन्तु इसके अतिरिक्त वे सोमेश्वर के साथ सम्पर्क बनाये हुए थे। उनके पत्र नियमित रूप से आते थे। सोमेश्वर बहुधा उत्तर नहीं देता था, तथापि उनके पत्र आते रहते थे।

सोमेश्वर अकेला कालंजर के दुर्ग में रहता था। विशालदेव ने कई बार उसकी माता को भेजने का प्रस्ताव किया था, परन्तु सोमेश्वर कभी इस पर सहमत नहीं हुआ था। उसे अकेले रहना ही अच्छा लगता था। अवकाश के समय भी समाज उसे रुचिकर नहीं प्रतीत होता था। आखेट करना उसने छोड़ दिया था। नृत्य-गान से उसे अरुचि हो गयी थी। परन्तु चित्रकला का उसने अच्छा अभ्यास कर लिया था। अतएव अवकाश का अधिकांश समय वह चित्र उरेहने में व्यतीत करता था। अन्यथा अकेला बैठा शून्य में न जाने क्या खोजा करता था।

एक दिन वह इसी प्रकार अपने कक्ष से बाहर अलिन्द में बैठा दक्षिण की ओर देख रहा था। उसका आवास दुर्ग के दक्षिण-पश्चिमी छोर पर एक टीले के ऊपर स्थित था। अलिन्द में जिस स्थान पर वह बैठा था वहाँ से अजयगढ़ की पहाड़ी स्पष्ट दिखायी पड़ती थी। वह उसे ही देख रहा था।

दिन का तीसरा प्रहर था। पवन में शीत की हल्की-सी खुनक थी, परन्तु धूप में असुविधा होती थी। वसन्त के तरु-पात उस धूप में नहाकर निखर उठे थे। सोमेश्वर की दृष्टि कभी अजयगढ़ की पहाड़ी से हटकर नदी की क्षीण, बल खाती हुई धारा पर आ ठहरती थी और कभी इस धारा के दोनों ओर दूर-दूर तक फैले खेतों में खो जाती थी जहाँ ऋतुराज की सम्पूर्ण स्वर्ण-श्री साकार होकर नर्तन कर रही थी।

सोमेश्वर विलम्ब तक इसी प्रकार बैठा रहा। सूर्य का बिम्ब पश्चिमी क्षितिज के निकट पहुँच गया। तीसरे प्रहर की धूप ने सोने का आवरण ओढ़ लिया। परन्तु वह अपने स्थान से नहीं हटा।

तभी एक अनुचर ने आकर सूचना दी कि एक स्त्री उससे मिलना चाहती है। परन्तु सोमेश्वर स्वयं इस समय किसी से नहीं मिलना चाहता था। अतएव उसने कहा, "कह दो कल मिले। दुर्ग की ही है न ?"

अनुचर ने कहा, "दुर्ग की नहीं है।"

सोमेश्वर ने पूछा, "नीचे से आयी है ?"

अनुचर ने उत्तर दिया, "कहीं दूर से आयी प्रतीत होती है। उसके साथ बहुत से रक्षक तथा दास-दासियाँ भी हैं।"

सोमेश्वर ने कुछ क्षण रुक कर कहा, "अच्छा, उसे आने दो।"

अनुचर चला गया और सोमेश्वर फिर अपने विचारों में डूब गया। कुछ समय पश्चात् वह स्त्री उसके सामने आकर खड़ी हो गयी। उसने अपना मुख अवगुंठन से ढक रखा था। वेश-भूषा से केवल इतना जाना जा सकता था कि वह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसी सम्पन्न, सम्भ्रांत परिवार की सधवा स्त्री है ।

सोमेश्वर ने एक अस्थिर दृष्टि उसकी ओर डालकर औपचारिकता के स्वर में कहा, "देवी का आगमन कहाँ से हुआ है ? मैं इस समय आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?"

बिना इन प्रश्नों के उत्तर दिये उसने पहले झुककर चरण स्पर्श किये, और फिर मुख पर से अवगुंठन हटाते हुए कहा, "मेरी सेवा आप करेंगे ?"

सोमेश्वर को सहसा अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। उसने विस्मय और अविश्वास के मिश्रित स्वर में कहा, "रत्ना ! तुम ?"

रत्नमाला बोली, "हाँ मैं ही हूँ, और मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैं रत्ना ही हूँ, शकुन्तला नहीं बनायी गयी हूँ।"

सोमेश्वर अपने विस्मय को नहीं सँभाल पा रहा था। उसने कहा, परन्तु तुम थीं कहाँ ? मैं तो तुम्हें खोज-खोज कर हार गया।"

"मैं वहीं थी जहाँ मुझे होना चाहिए था। आपने उचित स्थान पर नहीं खोजा, इसलिए नहीं पा सके।"

सोमेश्वर ने कहा, "तुम्हारा पहेली बुझाने का स्वभाव अभी तक वैसा ही है, तनिक भी नहीं बदला है।"

रत्नमाला ने हँसकर कहा, "और मैं क्या बदल गयी हूँ ? मैं भी तो वैसी ही हूँ। हाँ, आप अवश्य कुछ बदले लग रहे हैं। पहले आप मेरी पहेलियाँ बूझ लिया करते थे, परन्तु अब......"

"हाँ रत्ना, अब मुझमें उतनी शक्ति नहीं रह गयी है। इसलिए अधिक विलम्ब मत करो। मुझे शीघ्र बताओ, तुम कहाँ थीं ?"

रत्नमाला ने कहा, "भारतीय स्त्री का एक ही उचित स्थान होता है। मैं भी वहीं, अर्थात् अपने श्वसुरालय में थी।"

सोमेश्वर ने अब ध्यान से उसकी ओर देखा। उसके शरीर पर सौभाग्य के सभी लक्षण विद्यमान थे। वह बोला, "तो तुमने विवाह कर लिया था ?"

"हाँ" रत्नमाला ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

सोमेश्वर ने किंचित कटुता के साथ कहा, "मुझे स्वयं समझ लेना चाहिए था। तुमने जो कुछ किया ठीक ही किया। परन्तु खजुराहो से इतने गुप्त रूप से क्यों गयीं कि किसी को पता ही नहीं चला ?"

रत्नमाला ने उत्तर दिया, "पति-कुल की मान-मर्यादा के लिए आवश्यक था, इसलिए गुप्त रूप से गयी। इसीलिए आपको भी कोई पत्र नहीं लिखा।"

"अच्छा ही किया। परन्तु थीं कहाँ ? पाताल में ?"

रत्नमाला मुस्कराकर बोली, "मैं इसी धरती पर, रामनगर में थी।"

सोमेश्वर का विस्मय बढ़कर अपने चरम बिन्दु पर पहुँच गया। वह कुछ क्षण अपलक रत्नमाला को देखता रहा, फिर उठकर खड़ा हो गया और उसके कंधे पकड़कर निर्दयतापूर्वक उसे झकझोरता हुआ बोला, "विनोद मत करो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बताओ तुम कहाँ थीं ?"

उसके इस व्यवहार पर रत्नमाला खिलखिलाकर हँस पड़ी, और विलम्ब तक बिना कुछ बोले हँसती रही।

सोमेश्वर ने फिर ऊँचे स्वर में कहा, "नहीं बताओगी ?"

रत्नमाला बोली, "बता तो दिया। यदि किसी का स्वभाव ही अविश्वासी हो तो इसमें मेरा क्या दोष है ? हाँ, एक बात बताने को रह गयी है।"

"क्या ?"

"यह कि मुझे आपके विस्मय पर विस्मय हो रहा है। क्या आपके उज्जयिनी जाने से पूर्व ही मेरा विवाह नहीं हो गया था ? क्या मेरे पति के पिता का स्थान, अर्थात् मेरा श्वसुरालय, रामनगर में नहीं है ? फिर आप विस्मित क्यों हैं ?"

"क्या यह सत्य है, रत्ना ?" सोमेश्वर ने फिर पूछा। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था।

रत्नमाला ने कहा, "क्या मुझे प्रमाण प्रस्तुत करना होगा ? यदि कहें तो वह भी कर सकती हूँ। बोलिये ?"

सोमेश्वर ने कहा, "नहीं। अब मुझे विश्वास हो गया। परन्तु इतने दिन तक तुमने मुझे समाचार क्यों नहीं दिया ? जानती हो मैंने कितना-क्या सहा है ?"

रत्नमाला ने कहा, "समाचार यदि दे सकती होती तो अवश्य देती। परन्तु मैं विवश थी, वचनबद्ध थी। और आपने कितना-क्या सहा है यह मैं भली प्रकार जानती हूँ, क्योंकि आपके समाचार मुझे नियमित रूप से मिलते रहते थे। जब आप नर्मदा तट पर आश्रम में थे तब भी हमें महामंत्री जी की कृपा से आपके समाचार प्राप्त होते रहते थे।"

सोमेश्वर रत्नमाला को अपने निकट बैठाकर स्वयं भी बैठ गया और बोला, "परन्तु एक बात मैं अब भी नहीं समझ पा रहा हूँ, रत्ना। तुम खजुराहो से रामनगर पहुँच किस प्रकार गयीं ?"

"पूर्णतया नियमित रूप से तथा सम्मान के साथ," रत्नमाला ने उत्तर दिया। "मेरे श्वसुर स्वयं मुझे ले गये थे।"

"पिता जी ?" सोमेश्वर ने साश्चर्य कहा।

"हाँ, पिताजी। आपके उज्जयिनी जाने के लगभग एक मास पश्चात् वे मेरे पास यह प्रस्ताव लेकर आये थे कि मैं आपको छोड़कर अज्ञात रूप से कहीं चली जाऊँ। उन्होंने कुल की मर्यादा तथा आपके भविष्य की दुहाई देकर अनेक तर्क प्रस्तुत किये और मुझे अपार धन-सम्पत्ति का प्रलोभन दिया। परन्तु मुझे अडिग पाकर वे और विचार करने के लिए समय देकर चले गए।"

"तुमने उन्हें क्या उत्तर दिया था ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"मैंने उनसे स्पष्ट कह दिया था कि भारतीय नारी अपने पति को छोड़कर अन्यत्र नहीं जा सकती, परन्तु यदि आवश्यक हो जाए तो उसके कल्याण के लिए अपने प्राण दे सकती है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"फिर ?"

रत्नमाला ने कहा, "कुछ समय पश्चात् वे फिर आये। उस समय मैं स्नान कर रही थी। मल्लिका ने उन्हें आसन दिया। मेरे बाहर आने से पूर्व वे मल्लिका से अनेक प्रश्न पूछते रहे। मल्लिका ने कुछ भी नहीं छिपाया, सब बता दिया। जब मैं बाहर आयी तो वह मुझसे बिना मिले ही जा चुके थे।"

"फिर ?"

"दो दिन पश्चात् वह फिर एक नया प्रस्ताव लेकर आये जिसे मैंने स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा कि सम्पूर्ण स्थिति से परिचित होने के पश्चात् उन्होंने मुझे पुत्रवधू के रूप में स्वीकार कर लिया था, परन्तु बड़े महाराज इस सम्बन्ध की किसी प्रकार अनुमति नहीं दे रहे थे। अतएव आपके भविष्य के हित में यह आवश्यक था कि मैं आपके साथ न रहूँ और आपको मेरा पता भी न लगे। परन्तु मुझे पुत्रवधू बना लेने के पश्चात् पिता जी को यह भी स्वीकार नहीं था कि मैं और कहीं जाऊँ। अतएव उन्होंने मुझे गुप्त रूप से रामनगर ले जाने का प्रस्ताव किया। उन्होंने कहा कि रामनगर ही एक ऐसा स्थान है जहाँ मैं सुरक्षित तथा सम्मान रह सकती हूँ और जहाँ आप मुझे खोजने के लिए कभी नहीं पहुँच सकेंगे।"

"फिर ?" सोमेश्वर ने पूछा।

"मैंने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। फिर महामंत्री जी की सहायता से मुझे रामनगर पहुँचा दिया गया और मैं वहीं रहने लगी। आपके कक्ष में रहती थी और आपके पर्यंक पर शयन करती थी। केवल इतना प्रतिबन्ध था कि आपके साथ सम्पर्क नहीं स्थापित कर सकती थी। परन्तु आपके समाचार स्वयं पिताजी मुझे देते रहते थे।"

"फिर आज तुम मेरे पास किस प्रकार आयीं ?"

रत्नमाला ने कहा, "आज भी स्वेच्छा से नहीं आयी हूँ। पिताजी ने भेजा है। बड़े महाराज के गोलोकवास का समाचार मिलते ही उन्होंने अपने इस निर्णय की घोषणा कर दी थी। ज्योतिषी द्वारा निर्धारित लग्न की प्रतीक्षा में इतना विलम्ब हो गया. अन्यथा मैं बीस दिन पूर्व ही यहाँ आ गयी होती।"

इस समय तक सोमेश्वर के मुख का सम्पूर्ण भाव बदल गया था। वर्षों ने उस पर जो रेखायें अंकित की थीं वह कुछ ही क्षणों में विलीन हो गयी थीं। उसने मुखर चिन्तन करते हुए कहा, "और मैं पिताजी को न जाने क्या समझ रहा था !"

रत्नमाला ने कहा, "आप ऐसे ही हैं। मुझे भी तो न जाने क्या समझ रहे होंगे। बताइये, मेरे विषय में क्या-क्या सोचते थे ?"

सोमेश्वर ने प्रश्न को टालते हुए कहा, "मल्लिका कहाँ है ?"

रत्नमाला ने कहा, "मल्लिका मेरे साथ नहीं आयी है। रामनगर में ही है और अभी वहीं रहेगी।"

"क्यों ? उसके बिना तुम्हें यहाँ कष्ट नहीं होगा ?"

CC-0 Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"होगा तो हुआ करे। वह भी यहाँ आजाएगी तो रामनगर में कुमारजी को कौन देखेगा ?"

"कुमार जी ?" सोमेश्वर ने प्रश्न के स्वर में दुहराया।

"हाँ-हाँ, आपके कुमार जी। सुसंवाद वाली बात भूल गये क्या ? बहुत चंचल है। पिता जी कहते हैं आप भी पहले ऐसे ही थे।"

सोमेश्वर ने रत्नमाला का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, "उसका नाम क्या रखा है ?"

"चन्द्रशेखर। पिता जी ने रखा है। मैं उसे संतोष कहती हूँ।"

सोमेश्वर ने कहा, "उसे साथ क्यों नहीं लायीं ?"

"पिता जी ने लाने ही नहीं दिया।"

"क्यों ?"

"कहने लगे उसे लाने के लिए आपको स्वयं रामनगर जाना होगा।"

सोमेश्वर मौन होकर कुछ सोचने लगा।

रत्नमाला ने उसके कंठ में बाँह डालते हुए कहा, "बोलिये न, कब चलेंगे ?"

सोमेश्वर ने उसे अंक में भर लिया और धीमे स्वर में कहा, "जब तुम कहोगी।"

गोधूलि वेला हो आयी थी। अजयगढ़ की पहाड़ी क्षितिज की कालिमा में विलीन हो चुकी थी। रत्नमाला ने अपने आपको मुक्त करते हुए कहा, "अब भीतर चलिये। आज से यहाँ दीप मैं ही जलाऊँगी।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh